

मासिक

RNI No. MPHIN/2004/14249

# अक्षर वार्ता

मूल्य: 250 /- रुपये

अक पंजीयन क्र. मालवा डिप्टीजन - L2/65/RNP/399/2024-2026

वर्ष - 21 अंक - 8  
( जून - 2025 )  
Vol - XXI, Issue No - VIII  
(June - 2025)

कला-मानविकी-समाजविज्ञान-जनसंचार-वाणिज्य-विज्ञान-वैचारिकी की अंतरराष्ट्रीय रेफर्ड एवं पियर रिव्यूड शोध पत्रिका

ISSN 2349 - 7521 , IMPACT FACTOR - 9.0

कला-मानविकी-समाजविज्ञान-जनसंचार-वाणिज्य-विज्ञान-वैचारिकी की अंतरराष्ट्रीय रेफर्ड एवं पियर रिव्यूड शोध पत्रिका  
Aksharwarta is a Monthly International, Refereed & Peer Reviewed Journal

ISSN 2349 - 7521 , IMPACT FACTOR - 9.0

DOI 10.5281/zenodo.14599030

Indexed In International, Impact Factor Services (IIFS) Database and Indexed with IJIF

Indexed In the International, Institute of Organized Research, (I2OR) Database

AKSHARWARTA IS registered MSME with Ministry of MSME, Government of India

MSME Reg. No. UDYAM-MP-49-0005021

» aksharwartajournal@gmail.com » <https://www.aksharwartajournal.page/> » +918989547427

प्रधान संपादक

प्रो. शैलेन्द्रकुमार शर्मा

कुलानुशासक एवं हिन्दी विभागाध्यक्ष  
विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन, मप्र.

संपादक

डॉ. मोहन बैरागी

अक्षरवार्ता अंतरराष्ट्रीय शोध पत्रिका

संपादक मंडल

प्रो. जगदीशचन्द्र शर्मा, प्राध्यापक  
विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन, मप्र.  
प्रो. राजश्री शर्मा, प्राध्यापक  
माधव महाविद्यालय, उज्जैन, मप्र.  
प्रो. डी. डी. बेदिया, विभागाध्यक्ष  
पं. जवाहर लाल नेहरू व्यवसाय प्रबंध  
संस्थान, एवं निदेशक, आईक्यूएसी,  
विक्रम युनिवर्सिटी, उज्जैन, मप्र.  
डॉ. शशि रंजन 'अकेला' जनसंपर्क

अधिकारी, आरजीपीवी, भोपाल, मप्र.  
प्रो. उमापति दिक्षित, प्राध्यापक  
केंद्रीय हिन्दी संस्थान, आगरा, उप्र.  
प्रो. मोहसिन खान, विभागाध्यक्ष  
शासकीय महाविद्यालय, रायगढ़, महाराष्ट्र  
डॉ. दिग्विजय शर्मा, सहायक प्राध्यापक  
केंद्रीय हिन्दी संस्थान, आगरा, उप्र.  
डॉ. भेरूलाल मालवीय, सहायक प्राध्यापक  
शा. नवीन महाविद्यालय, शाजापुर, मप्र.

डॉ. उपेन्द्र भार्गव, सहायक प्राध्यापक  
महर्षि पाणिनि विश्वविद्यालय, उज्जैन, मप्र.  
डॉ. रूपाली सारये, सहा. प्राध्यापक  
भाषा विभाग, देवी अहिल्या वि.वि., इंदौर  
डॉ. अवनीश कुमार अस्थाना, एसो. प्रोफेसर,  
डॉ. एपीजे अब्दुल कलाम वि.वि, इंदौर, मप्र.  
डॉ. पराक्रम सिंह, के.हि.सं., दिल्ली

International Editorial Board

**Dr. I Made Dian Saputra, S.S., M.Si**  
Vice director of the Postgraduate program of UHN I  
Gusti Bagus Sugriwa Denpasar

**Dr. I Gusti Ngurah Agung Wijaya Mahardika, S. Pd.**  
HoD, English Language Education Department

**Dr. I Ketut Arta Widana, S.S., M. Par.**  
Lecturer of Tourism Department

**Dr. I Dewa Ayu Hendrawathi Putri**  
HoD, Masters in Communication Science

विशेषज्ञ समिति

डॉ. सुरेशचन्द्र शुक्ल 'शरद आलोक' (नार्वे), श्री शेर बहादुर सिंह (यूएसए),  
डॉ. रामदेव धुरंधर (मॉरीशस), डॉ. स्नेह ठाकुर (कनाडा) डॉ. जय वर्मा (यू.के.),  
प्रो. गुणशेखर गंगाप्रसाद शर्मा (चीन), डॉ. अलका धनपत (मॉरीशस),  
प्रो. टी. जी. प्रभाशंकर प्रेमी (बेंगलुरु), प्रो. अब्दुल अलीम (अलीगढ़),  
डॉ. सोहेल मो. यूसूफ (ओमान), डॉ. रवि शर्मा (दिल्ली), डॉ. सुधीर सोनी  
(जयपुर), डॉ. अनिल सिंह (मुंबई), डॉ. तुलसीदास परौहा,

सह संपादक

डॉ. मधुकांता समाधिया (उत्तर प्रदेश), डॉ. अनिल जूनवाल (मप्र), डॉ. प्रणु  
शुक्ला (राजस्थान), डॉ. गोविंद नंदाणिया (गुजरात), डॉ. रत्ना कुशवाह,  
(अंडमान निकोबाद), प्रो. डॉ. किरण खन्ना (अमृतसर, पंजाब)



विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन, मप्र. से शोध, प्रकाशन, सेमीनार, संगोष्ठी, अवार्ड आदि के  
लिए अक्षर वार्ता अंतरराष्ट्रीय शोध पत्रिका एवं संस्था कृष्ण बसंती शैक्षणिक एवं सामाजिक  
जनकल्याण समिति, उज्जैन, मप्र. एम ओ यू हस्ताक्षरित।

नोट:- अक्षरवार्ता में सभी पद मानद व अवैतनिक है। शोध पत्रिका में प्रकाशित सभी लेखों में लेखकों के अपने विचार हैं, संपादक मंडल का इससे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

कला-मानविकी-समाजविज्ञान-जनसंचार-वाणिज्य-विज्ञान-वैचारिकी की अंतरराष्ट्रीय रेफर्ड एवं पियर रिव्यूड शोध पत्रिका  
Aksharwarta is a Monthly International, Refereed & Peer Reviewed Journal  
ISSN 2349 - 7521 , IMPACT FACTOR - 9.0  
DOI 10.5281/zenodo.14599030

Indexed In International, Impact Factor Services (IIFS) Database and Indexed with IIJIF  
Indexed In the International, Institute of Organized Research, (I2OR) Database  
AKSHARWARTA IS registered MSME with Ministry of MSME, Government of India  
MSME Reg. No. UDYAM-MP-49-0005021  
»aksharwartajournal@gmail.com » <https://www.aksharwartajournal.page/> » +918989547427

Peer Review Board/Committee

1. Dr. Anamika Dwivedi, Associate Professor, Hindi, A.K.P (PG) College, Khurja, U.P.
2. Dr. Deepshikha, Assistant Professor, Sanskrit Manyawar Kanshiram Rajkiya Mahavidhyalaya, Gabhana, Aligadh, U.P.
3. Dr. Roshni, Guest Faculty, Hindi Maharana Pratap Govt. PG College, Gadawara, Narsinghpur, M.P.
4. Dr. Rashmi (Raikumar), Assistant Professor, English, Y.B.N. University, Namkum, Ranchi, Jharkhand
5. Dr. Arun Kumar Singh, Associate Professor DAV PG College, Azamgadh, U.P.
6. Dr. Neetu Tiwari, Professor M.B. Khalsa Law College, Indore, M.P.
7. Dr. Santosh Patidar, Lecturer Chameli Devi Institute of Law, Indore, M.P.
8. Dr. Sanjay Kumar, HoD, English Department Y. B. N. University, Ranchi, Jharkhand
9. Dr. Krishna Raj Singh, Assistant Professor Shrimati Gomati devi bind PG College, Prayagraj, U.P.
11. Dr. Meenu Shukla, Assistant Professor Navsamvat Law College, Ujjain, M.P.
12. Dr. Soniya Rani, Associate Professor Y. B. N. University, Ranchi, Jharkhand
13. Dr. Shahanaj Mahemudsha Sayyad, Associate Professor Balwant College, Vita, Distt - Sangli, Maharashtra
14. Dr. Umesh kumar Sharma, Assistant Professor, Hindi Department Shri Radha Krishna Goenka college, Sitamarhi (Bihar)
15. Dr. Dinesh Ram, Assistant Teacher LT Hindi Govt H. S.S, Kalakot, Uttarakhand
16. Dr. Nilamadhab Pradhan, Assistant Professor (Guest), Department of Sanskrit Rama Devi Women's University, Bhoi Nagar, Bhubaneswar, Odisha
17. Dr. Manju, Assistant Professor Govt. College, Kishangarh Renwal, Jaipur, Rajasthan
18. Dr. Manju Chouhan, Assistant Professor, Sanskrit, Govt. Girls College Shri Kolayat, Bikaner, Rajasthan
19. Dr. Priyanka Bhatewara Jain, Assistant Professor, (Guest Faculty) Govt. College, Manawar, Dhar, M.P.
20. Dr. Brajesh Kher, Ex. Assistant Professor Bhartiya College, Ujjain, M.P.
21. Dr. ShriKant Mishra, Assistant Professor Govt. Maharaja Martand College, Kotma, Distt-Anuppur, M.P.
22. Dr. Babita Yadav, Assistant Professor, HoD of Art's Department Navsamvat Law College, Ujjain, M.P.
23. Dr. Preeti, Assistant Professor, Hindi Department, Motihari Degree Evening College, Muzaffarpur
24. Dr. Rita Kumari, Assistant Professor Kishori Sinha Mahila College, Aurangabad, Bihar
25. Dr. Shaileshkumar Chhatrasingh Chaudhari, Teacher, Genius Educational Academy (CBSE) School, Mohani Village, Surat, Gujrat
26. Dr. Poonam Pandey, Ex. Research Scholar, English, Dr. Rammanohar Lohia avadh University, Faizabad Ayodhya, U.P

### शोध आलेख प्रकाशन संबंधी नियम

शोध आलेख 2000 से 3000 शब्दों का होकर यूनिकोड मंगल अथवा कृतिदेव 10 में 12 के फॉन्ट साइज में ही भेजे। शोध आलेख एपीए एमएलए फॉर्मेट में होना आवश्यक होकर फुटनोट व रिफ्रेंसेस के साथ भेजना आवश्यक है। अंग्रेजी माध्यम के शोध-पत्र टाइम्स न्यू रोमन (Times New Roman), एरियल फॉन्ट (Arial) में टाईप करवाकर माईक्रोसॉफ्ट वर्ड में अधिकतम 2000 की शब्द संख्या के साथ अक्षरवार्ता के ईमेल पर भेजने के बाद हार्ड कॉपी तथा शोध-पत्र मौलिक होने के घोषणा-पत्र के साथ हस्ताक्षर कर अक्षरवार्ता के कार्यालय को प्रेषित करें। शोध आलेख का प्रकाशन रिव्यू कमेटी द्वारा अनुसंधान के आधार पर किया जावेगा।

### पुस्तकों से संदर्भ देने के लिए क्रम

लेखक का अंतिम नाम (सरनेम), पहला नाम; पुस्तक का शीर्षक (इटैलिक्स में); प्रकाशक का नाम और पूरा पता (प्रकाशन का वर्ष) कोष्ठक में; पृष्ठ संख्या ....।  
*दिवेदी, हजारी प्रसाद, कबीर, नई दिल्ली, राजकमल प्रकाशन, चौदहवीं आवृत्ति, 2014, पृ. 108*

### पत्रिकाओं के संदर्भ

लेखक का अंतिम नाम (सरनेम), पहला नाम। लेख का शीर्षक। जर्नल का शीर्षक/नाम (इटैलिक्स में)। वॉल्यूम। संस्करण (महिना, वर्ष): पृष्ठ संख्या। प्रकाशन मीडिया।

### वेबसाइट के उद्धरण का प्रारूप

लेखक का अंतिम नाम (सरनेम), पहला नाम। ' 'पृष्ठ का शीर्षक। ' '।

क्षेत्र शीर्षक। (साईट) प्रकाशित करने वाली कंपनी। (युआरएल) तथा सर्व डेट (अभिगमन तिथि)।

पुस्तक, पत्रिका, आवधिक, वेबसाइट आदि के शीर्षक को इटैलिक में लिखें।

शोध आलेख के साथ प्लेगरिज्म रिपोर्ट / स्व घोषणा पत्र (आलेख की मौलिकता व अप्रकाशित होने के संदर्भ में) अवश्य भेजें।

आलेख की वर्ड और पीडीएफ दोनों फाइल अनिवार्य रूप से भेजें।

शोध आलेख प्रत्येक माह की 7 तारीख तक आगामी माह के अंक के लिए स्वीकार्य होंगे।

शोध आलेख का प्रकाशन रिव्यू कमेटी द्वारा अनुसंधान के आधार पर किया जावेगा।

*I/ We wish to subscribe the Journals. Total Amount : 3000/- (Three Thousand only )(INR), (Normal Post) and/or 3600/- (Thirty six Hundred) for (Registered Post) Registration Fee. All fee and Subscriptions are payable in advance and all rates include postage and taxes. Subscribers are requested to send payment with their order whenever possible. Issues will be sent on receipt of payment. Subscriptions are entered on an annual basis and are subject to renewal in subsequent years.*

*Subscription from:.....to.....SUBSCRIBER TYPE:(Check One) Institution( )/Personal ( )Date:.....Name/Institution and Address :.....City : .....State : .....PinCode..... Country :..... PhoneNo :..... MobNo:..... Mail id.....*

### PAYMENT OPTION:

*DD in the favor of "AKSHARWARTA" payable at UJJAIN.*

*DD No.: .....Dated : .....for Rupees (in words) .....Drawn on .....Any other option Specify :.....*

### शोध-पत्र भेजने संबंधी नियम

शोध-पत्र 2000-3000 शब्दों से अधिक नहीं होना चाहिये। ०. हिन्दी माध्यम के शोध पत्रों को कृतिदेव 010 (Kruti Dev 010) या यूनिकोड मंगल फॉन्ट में टाईप करवाकर माईक्रोसॉफ्ट वर्ड में भेजें। ०. अंग्रेजी माध्यम के शोध-पत्र टाइम्स न्यू रोमन (Times New Roman), एरियल फॉन्ट (Arial) में टाईप करवाकर माईक्रोसॉफ्ट वर्ड में अक्षरवार्ता के ईमेल पर भेजने के बाद हार्ड कॉपी तथा शोध-पत्र मौलिक होने के घोषणा-पत्र के साथ हस्ताक्षर कर अक्षरवार्ता के कार्यालय को प्रेषित करें। ०. **Please Follow- APA/MLA Style for formatting** अक्षरवार्ता का वार्षिक सदस्यता शुल्क रुपये 3000/-रुपये साधारण डाक से एवं 3600/- रुपये रजिस्टर्ड डाक से एवं प्रकाशन पंजीयन शुल्क रुपये 2000/- का भुगतान बैंक द्वारा सीधे ट्रांसफर या जमा किया जा सकता है।

बैंक विवरण निम्नानुसार है-

**Union Bank of India,**

**Account Holder- Aksharwarta**

**Current A/c. No- 510101003522430**

**IFSC- UBIN0907626**

**Branch- Rishi Nagar, Ujjain, MP, India**

गुगल पे, फोन पे, पेटीएम, भीम आदि युपीआई से भुगतान के लिए मोबाईल नं. 9424014366 का अथवा स्केनर का उपयोग करें तथा भुगतान की मूल रसीद, शोध-पत्र एवं सीडी के साथ कार्यालय के पते पर भेजना अनिवार्य है।

**UPI**  
**Phone Pay,**  
**Google Pay**  
**PayTM, BHIM**  
**9424014366**



|  |    |  |    |
|--|----|--|----|
| » अल्लूरी सीताराम राजू : एक क्रांतिकारी जीवन और विरासत   |    | महानाटक का समीक्षात्मक अध्ययन<br>धोलू राम मीना, डॉ. अल्पना शर्मा   | 58 |
| डॉ. मनीषा रात्रे, डॉ. श्रुतिदेव गावस्कर  | 08 | » रोगविचारस्य प्रसङ्गे ग्रहाणां परित्यः                            |    |
| » गंगाप्रसाद मिश्र की कहानियों में स्त्री जीवन का विविध रूपों में यथार्थ   |    | गिरीश राजौरिया   | 61 |
| पिन्डू रावल, डॉ. कामराज सिन्धु   | 12 | » 'अलख आज्ञादी की' नाटक में राष्ट्रीय चेतना                        |    |
| » वृन्दावन लाल वर्मा के प्रेरणा-स्रोत  |    | प्रा. रामहरि काकडे   | 63 |
| डॉ. हेमलता शर्मा   | 14 | » आवास समस्या - निजी व सरकारी क्षेत्रों का योगदान                  |    |
| » श्रीमद्भगवद्गीता के पंद्रहवें अध्याय 'पुरुषोत्तम योग' की प्रासंगिकता   |    | पल्लवी पाण्डेय, डॉ. विनय कुमार गुप्ता                              | 65 |
| डॉ. जितेन्द्र कुमार द्विवेदी   | 17 | » यशपाल की कहानियों में वर्गीय यथार्थ का चित्रण                    |    |
| » अघोरनी गंगे  |    | मनोज कुमार, डॉ. वंदना  | 67 |
| आरती सिंह, डॉ. मौसमी परिहार  | 21 | » भक्तिकालीन कवियों का ज्योतिष ज्ञान                               |    |
| » शरद सिंह के उपन्यास कस्बाई सिमोन में लिव इन पर उपजे सवाल   |    | हिमानी पारीक   | 70 |
| डॉ. अनामिका द्विवेदी   | 23 | » भारत में समन्वित ग्रामीण विकास की संकल्पना : एक अध्ययन           |    |
| » डॉ. देवेन्द्र दीपक के नाटक 'भूगोल राजा का : खगोल राजा का' में राजनीतिक परिस्थितियाँ                                |    | डॉ. अतुल कुमार दुबे, डॉ. प्रतिमा सिंह                              | 73 |
| प्रतिभा पूजा   | 25 | » भिखारी ठाकुर के नाटकों में सामाजिक न्याय और व्यक्तिगत स्वतंत्रता |    |
| » श्रीमंत शंकरदेव की दृष्टि में नारी का स्थान  |    | अजय सुब्बा, डॉ. बृजेश कुमार  | 77 |
| सागर छेत्री  | 28 | » एक मौन पीढ़ी का दस्तावेज : 'माई' उपन्यास सुनीता वर्मा            | 81 |
| » भारतीय साहित्यशास्त्र में आचार्य भगीरथ मिश्र का योगदान   |    |  |    |
| शालिनी, प्रो. राकेश कुमार शुक्ला   | 31 |  |    |
| » डॉ. रामदयाल मुंडा : आदिवासी समाज के सशक्तिकरण से वैश्विक नेतृत्व तक  |    |  |    |
| कृष्णा सरदार, डॉ. जास्मिन पटनायक   | 34 |  |    |
| » विभिन्न प्रकार के मुखौटे और उनका संक्षिप्त ऐतिहासिक विवरण  |    |  |    |
| निवेदिता लोहिया, प्रो. शेखरचंद्र जोशी  | 38 |  |    |
| » रिपोर्ताज विधा : युद्ध वर्णन और धर्मवीर भारती की युद्ध यात्राएँ  |    |  |    |
| डॉ. चन्द्र प्रकाश शर्मा  | 42 |  |    |
| » उत्तर प्रदेश के विभिन्न कृषि क्षेत्रों में मृदा स्वास्थ्य पर जैविक और रासायनिक खादों के प्रभाव का तुलनात्मक अध्ययन |    |  |    |
| डॉ. देवेन्द्र कुमार स्वर्णकार  | 45 |  |    |
| » द्रेष्काणाधारे अज्ञानां प्रतिनिधिभावः-   |    |  |    |
| गिरीश राजौरिया   | 47 |  |    |
| » मुक्तिबोध के काव्य दर्शन : एक समीक्षा  |    |  |    |
| अर्जुन पासवान  | 48 |  |    |
| » गढ़वाल हिमालय की लोक कथाओं का विवेचन   |    |  |    |
| डॉ. डी. एस. भण्डारी  | 53 |  |    |
| » साहित्य में छत्तीसगढ़ी   |    |  |    |
| राज श्री भारद्वाज, डॉ. आर. के. वर्मा   | 55 |  |    |
| » जीवनमूल्यां के परिप्रेक्ष्य में श्रीविवेकानन्दविजयम्   |    |  |    |

- » **The Clever Hero : A Trickster Achetype  
in Tharu Folktales**  
Bam Dev Adhikari 222
- » **The Role of Artificial Intelligence in  
Education**  
Dr. Rohitas Meena 222
- » **Role of ICT in Teacher Education**  
Dr. Sushil 222
- » **Natural Resource and Sustainable  
Development of Almora District**  
Dr. Pushpa 222
- » **A Comparative Analysis of Stress Level  
and Coping Mechanism of Coaching  
Students Preparing for NEET and JEE  
Exams From Kota City : Among Those  
Living With Parents and Those Living in  
Hostels Alone**  
Ms. Tarannum Zafar  
Prof. Anil Kumar Jain 222
- » **Status of Women Enterpreneurship in  
India Post New Economis Reforms :  
Progress, Problems and Persistent  
Challenges**  
Dr. Sitari Ram 222
- » **Exploring the Meditative Processes in  
Indian Abstract Art**  
Amit Kalla, Dr. Kajal Thakuriya 222

## अल्लूरी सीताराम राजू : एक क्रांतिकारी जीवन और विरासत

डॉ. मनीषा रात्रे

डॉ. श्रुतिदेव गावस्कर

1. पूर्व शोधार्थी, इतिहास विभाग, डॉ. सी. वी. आर. यू. करगी रोड़, कोटा, बिलासपुर, छग.
2. सहायक प्राध्यापक, इतिहास, नवीन शासकीय महाविद्यालय, बेलतरा, जिला-बिलासपुर, छग.

सारांश:-अल्लूरी सीताराम राजू एक महान भारतीय क्रांतिकारी नेता थे, उन्होंने ने भारत में अंग्रेजी शासन के विरुद्ध में भारत देश में जो स्वतंत्रता के लिए आंदोलन हुए उसमें इनका स्थान एक क्रांतिकारी नेता के रूप में था। सन् 1882 में अंग्रेजों के द्वारा मद्रास में वन अधिनियम लागू कर दिया गया, जिसमें वहाँ के स्थानीय जनजातिय के लोगों को 'पोडु' नामक कृषि करने के लिए रोक लगा दी, जो इन आदिवासियों की परंपरागत रूप से चली आ रही थी जिसमें स्थानांतरित कृषि भी शामिल थी व अपने ही वनों आवासों में जाने के लिए रोका जा रहा था जिसमें उनकी आम दैनिक जीवनशैली को खतरा था। संपूर्ण भारत में हुए असहयोग आंदोलन की पृष्ठभूमि में अंग्रेजी सरकार के विरुद्ध पनपे असंतोष ने रम्पा विद्रोह को जन्म दिया। इस विद्रोह में एक नेता के रूप में अल्लूरी सीताराम राजू ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। उनके इन्हीं सभी कार्यों के लिए वहाँ निवास करने वाले स्थानीय जनता के द्वारा अल्लूरी सीताराम राजू को 'मन्यम वीरुडु' की उपाधि दी गई, जिसका अर्थ जंगल का नायक होता है।

**मुख्यशब्द:-**क्रांतिकारी, अंग्रेजी शासन, विरासत, संघर्ष, ब्रिटिश, आंदोलन, विद्रोह।

**प्रस्तावना:-**भारत के स्वतंत्रता संग्राम में अनेक वीरों ने अपने अदम्य साहस और संघर्ष के बल पर ब्रिटिश शासन के विरुद्ध विद्रोह का बिगुल फूँका। ऐसे ही एक महान क्रांतिकारी थे अल्लूरी सीताराम राजू, जिन्होंने 20वीं शताब्दी में आदिवासी समुदाय के हक और स्वाभिमान की रक्षा के लिए अंग्रेजों के खिलाफ हथियार उठाए। उनका जन्म एक तेलुगु परिवार में हुआ था और युवावस्था में एक दुखद घटना ने उनके जीवन को गहराई से प्रभावित किया। अपनी प्रिय साथी की असमय मृत्यु के पश्चात, उन्होंने उसके प्रति अपनी श्रद्धा व्यक्त करने के लिए अपने नाम के आगे 'सीता' जोड़ लिया और अल्लूरी सीताराम राजू कहलाने लगे। 18 वर्ष की आयु में सन्यास ग्रहण करने के बाद, उन्होंने समाज के शोषित और वंचित वर्गों की सेवा को ही अपना लक्ष्य बना लिया। विशेष रूप से, आदिवासी समुदाय की पीड़ा को समझते हुए, उन्होंने उनके अधिकारों की रक्षा और ब्रिटिश दमन के विरुद्ध संघर्ष की राह चुनी। 1922 में रम्पा विद्रोह (जिसे मान्यम विद्रोह भी कहा जाता है) के दौरान उन्होंने आदिवासियों का नेतृत्व किया और अंग्रेजी सत्ता को चुनौती दी। उनका मुख्य उद्देश्य तत्कालीन मद्रास प्रेसीडेंसी के पूर्वी क्षेत्रों से ब्रिटिश शासन को उखाड़ फेंकना था।

विद्रोह के समय अल्लूरी सीताराम राजू ने अपने सैनिक बल को बढ़ाने के लिए अनेकों शाही पुलिस थानों में छापे मारे जिससे अपने कम

सुसज्जित बल को और बढ़ाने के लिए आग्नेयास्त्र का हासिल कर सके। हर एक छापे मारने के बाद सभी स्टेशनों में स्वयं के द्वारा लिखा हुआ एक पत्र छोड़ते थे, जिसमें पुलिस को वहाँ हुए सभी लूट की जानकारी दी जाती थी, जिसमें छापे में लूट से मिले हथियारों का विवरण भी शामिल रहता था। उसने पत्र के माध्यम से अंग्रेजी शासन को चुनौतियाँ दी जाती थी और कहा जाता था अगर उन्हें रोक सके तो वे उन्हें रोक दें। इस छापे में अल्लूरी सीताराम राजू का साथ देने वाले क्रांतिकारी के द्वारा कृष्णा देवी पेटा, दम्पननापल्ली, रम्पचोदवरम, अत्रावरम, राजवोम्मंगी, चिंतापल्ले व अडटेगला आदि क्षेत्रों के पुलिस थानों को उनके सैनिकों के द्वारा निशाना बनाया गया, जिसके परिणाम यह निकला की बहुत से थानों में हड़कंप मच गया। इस छापे से उत्पन्न विद्रोह को दबाने के लिए ब्रिटिश, अधिकारियों के द्वारा अल्लूरी सीताराम राजू को पकड़ने के लिए लगभग दो वर्ष तक मानव का शोषण किया। उसे पकड़ने में लगभग 4 लाख के आसपास खर्चा आया था। अंत में चिंतापल्ले के जंगलों में कोप्पुक नामक गाँव में सन् 1924 में वह फँस गए। तब वहाँ उन्हें अंग्रेजी सैनिकों के द्वारा पकड़ कर एक पेड़ से बांध दिया गया। तथा एक फ़यरिंग दस्ते के द्वारा उन्हें मार डाला गया उनके मृत्यु के पश्चात् आंध्रप्रदेश के कृष्णादेवी पेटा गाँव में एक मकबरा उनके याद में बनाया गया है।

अल्लूरी सीताराम राजू न केवल एक क्रांतिकारी सेनानी थे, बल्कि वे आदिवासी समुदाय के लिए प्रेरणा का स्रोत भी बने। उनका बलिदान और संघर्ष भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के स्वर्णिम अध्यायों में अमर है।

**अल्लूरी सीताराम राजू का बचपन व शिक्षा:-**भारत के वर्तमान आंध्रप्रदेश राज्य में एक तेलुगु परिवार में अल्लूरी सीताराम राजू का जन्म हुआ था। उनके पिता जी का नाम अल्लूरी वेंकट राम राजू था, वे पेशे से एक फ़ोटोग्राफ़र थे, जो अपने काम के चलते राजमुंदरी शहर में बस गए थे। उनकी माँ सूर्य नारायणम्मा एक धर्मपरायण गृहिणी थी। सीताराम राजू की जन्मतिथी आज भी विवादित है, क्योंकि कुछ स्त्रोंतो के माध्यम से हमें पता चलता है कि इनका जन्म 4 जुलाई सन् 1897 बताया गया है। जबकि एक अन्य स्त्रोत से इनका जन्म 4 जुलाई सन् 1898 बताया है। इनके जन्मस्थल को भी अलग-अलग बताया गया है। एक आधिकारिक रिपोर्ट बताती है कि उनका जन्म भीमावरम में हुआ था, जबकि एक अन्य सूत्रों से पता चलता है कि पश्चिम गोदावरी जिले के मोगल्लू गाँव का बताते है। और नई रिपोर्टों से पता चलता है कि भीमुनिपट्टनम में पंडरंगी गाँव उनका करीबी जन्म स्थान है। अल्लूरी सीताराम राजू के पिता स्वतंत्र व्यक्ति थे, उनमें अपार आत्मसम्मान और स्वतंत्रता के लिए अधिक प्रेम था।

उन्होंने अपने पुत्र अल्लूरी सीताराम राजू को भारतीय लोगों के द्वारा यूरोप के लोगों को उनकी महानता स्वीकार करने के लिए भारतीय लोगों के द्वारा सलामी देने की प्रथा प्रचलित थी जिसके पालन करने के लिए सीताराम राजू को पिता जी से एक बार डाँट पड़ी थी। वेंकट राम राजू की मृत्यु उस समय हुई जब उसका पुत्र सिर्फ 8 वर्ष का था।

अल्लूरी राम राजू ने अपनी प्राथमिक शिक्षा अपने जन्मभूमि के स्कूल में पुरी की, और काकीनाडा में अपने हाई स्कूल की शिक्षा प्राप्त करने के लिए प्रवेश लिया। वहाँ उन्होंने मद्रुदी अन्नपूर्णया को अपना मित्र बनाया जो बाद में एक प्रमुख भारतीय क्रांतिकारी नेता बने। अल्लूरी सीताराम राजू ने अपनी किशोरावस्था में ही अपने ध्यानमग्न और मितभाषी स्वभाव के अनुसार उन्होंने सन्यास लेने का विचार किया। विश्वविद्यालय और हाईस्कूल की शिक्षा प्राप्त करने के लिए राम राजू ने 15 वर्ष की आयु में अपनी माँ की तट शहर विशाखापट्टनम चले गए। वहाँ उन्होंने अपनी शिक्षा के लिए श्रीमती लवीएन कॉलेज में प्रवेश ले लिया। यहाँ पढ़ाई के साथ-साथ विशाखापट्टनम जिले के दूर दराज के क्षेत्रों का भ्रमण करते थे तथा वहाँ के निवासरत जनजातीय समुदाय के लोगों के संघर्षों से स्वयं को परिचित कराया करते थे। इसी समय भ्रमण के दौरान वह एक अमीर आदमी का मित्र बन गया और अपने उसी दोस्त की बहन सीता से प्रेम कर बैठा, जिसकी कम उम्र में ही अकारिष्मक मृत्यु ने उसे अधिक दुखी कर दिया और उसकी याद को हमेशा जीवित रखने के लिए, राम राजू ने अपने नाम के आगे उसका नाम सीता जोड़ दिया तब उसका नाम सीताराम राजू के नाम से जाना जाने लगा। अंत में उन्होंने अपना कोर्स पूर्ण किये बिना ही अपनी स्कूली शिक्षा को छोड़ दी। इस घटना की जानकारी जब उनके चाचा राम कृष्णम राजू को पता चला, जो पश्चिम गोदावरी जिले के नरसापुर में तहसीलदार थे और जिनके संरक्षण में राम राजू बड़े हुए थे तब उन्हें नरसापुर ले आये। वहाँ के स्थानीय टेलर हाईस्कूल में उनका प्रवेश कराया गया। परंतु उन्होंने औपचारिक शिक्षा को छोड़ दिया। समकालीन रिपोर्टों से ज्ञात होता है कि उनका शिक्षा बहुत अच्छी नहीं थी परंतु 18 वर्ष की कम उम्र में सन्यासी बनने से पहले उन्होंने ज्योतिष, हर्बल चिकित्सा, हस्तरेखा विज्ञान व घुड़सवारी में विशेष रुचि थी। उन्होंने ने स्वयं से तेलुगु, संस्कृत, हिन्दी व अंग्रेजी आदि भाषाओं के साहित्य में उनके द्वारा महारात हासिल किया था।

**अल्लूरी सीताराम राजू का विकास एक क्रांतिकारी नेता के रूप में :-**  
अल्लूरी सीताराम राजू का आने वाला भविष्य एक क्रांतिकारी नेता के रूप में संकेत दे रहे थे। राम राजू ने अपने हाई स्कूल की पढ़ाई के समय में अक्सर वे अपने चाचा के घोड़े पर सवार होकर आस-पास तथा दूरदराज के पहाड़ी जगहों में भ्रमण करने के लिए जाते थे। और इन्हीं घुमने के बहाने से वहाँ के विभिन्न आदिवासी लोगों की विभिन्न समस्याओं से स्वयं को अवगत कराने का प्रयास करते थे। उस समय ये सारे क्षेत्र ब्रिटिश शासन के कब्जे में थे। वहाँ निवास करने वाले कोया जनजाति जो पहाड़ों में निवास करते थे विशेष रूप से उनके लोगों की कठिनाईयों को देखकर अत्यंत दुखी हुए थे। सन् 1921 में अल्लूरी सीताराम राजू ने तीर्थयात्रा किया जिसमे पवित्र नदी गंगा और गोदावरी का जो उद्गम स्थान गंगोत्री और नासिक का दौरा किया। भारत देश में भ्रमण के दौरान, उनके द्वारा विभिन्न क्रांतिकारी से मुलाकात चटगाँव में की। जहाँ भारतीय लोगों जिसके अंतर्गत विशेष रूप से जनजातियों की आर्थिक-सामाजिक स्थितियों को देखकर उनका जो मन है वह कॉप उठा तब उन्होंने यह निर्णय लिया कि अंग्रेजी शासन से इन आदिवासी लोगों को मुक्ति दिलाने के लिए एक आंदोलन करने का फैसला किया और इसके बाद सीताराम राजू

गोदावरी जिले के समीप पापी नामक पहाड़ियों में निवास करने लगे। उन्होंने सर्वप्रथम साधुत्व जीवन को अपनाया और आध्यात्मिक शक्तियाँ व नैतिक कद को प्राप्त करने के लिए आध्यात्मिक अनुशासनों का पालन करने लगा। वे आयुर्वेदिक की ओर कार्य करना प्रारंभ किया और जड़ी-बूटियों से ईलाज करने में पारंगत प्राप्त कर लिया। इस समय पहाड़ी जनजातियों के बीच में किसी भी प्रकार से धर्म को बदलवाने के लिए जो ईसाई मिशनरियों के द्वारा निरंतर प्रयास किया जा रहा था। उन्हें अधिक परेशान किया। उन्होंने जनजाती लोगों के बीच बहुत कम आवश्यकताओं के साथ कठोर जीवन जीना प्रारंभ कर दिया। उन्हें इस जीवन यापन के समय आदिवासियों के द्वारा जीवन निर्वाह के लिए खाद्य पदार्थ दिया जाता था जिसमें से वे केवल फल व शहद को अपने पास रखते थे बाकी सारी चीजों को अपने आर्शीवाद के साथ उनको वापस कर दिया जाता था। उनके इस स्वभाव को देखते हुए वहाँ के आदिवासी लोगों ने उन्हें चमत्कारी स्वभाव के मनुष्य के रूप में प्रतिष्ठा दिलाई। यहाँ तक की उनको एक करिश्माई मसीहा का दर्जा भी दिया गया।

पहाड़ी में जो जनजाति निवास करते थे वे अधिक मासुम थे परंतु वे एक जुझारू लोग भी थे। जिन्हें अपने जानवरों को चारा चराने के लिए, फल एकत्रित करने, आग जलाने के लिए लकड़ी इकट्ठा करने और बाहरी लोगों के साथ व्यापार करने के लिए ऐसा बहुत से गतिविधियों को जारी रखने के लिए उनके द्वारा अंग्रेजी सरकार को बहुत ज्यादा शुल्क देना पड़ता था। उन्हें अपनी 'पोडू' या 'जंगल' में कृषि करने के लिए रोका गया था तथा उनकी जो परंपरा से आ रही जीवनशैली को खतरे में डाला गया। वहाँ की जनजातीय लोगो की इस स्थिति को देखकर सीताराम राजू ने ब्रिटिश शासन के अधिकारियों से दया की गुहार लगाई परंतु अधिकारियों ने उनकी एक न सुनी तब उन्होंने ने ये फैसला किया की लड़ाई ही एकमात्र रास्ता है।

अल्लूरी सीताराम राजू ने जनजातियों की शिकायतों का अपने ध्यान में रखते हुए, तथा उनकी समस्याओं का समाधान निकालते हुए, उन्होंने उन्हें एक सेना के रूप में संगठित करना प्रारंभ किया तथा उनके अधिकारों के बारे में उन सभी आदिवासी लोगों को बताना प्रारंभ किया। जनजातिय लोगो को वन अधिनियम, राजस्व अधिकारियों, मिशनरियों, पुलिस द्वारा किए गए दण्ड और ब्रिटिश शासन के द्वारा किए जा रहे अत्याचार के खिलाफ लड़ाई के लिए तैयार किया। जंगली क्षेत्रों का दौरा करते हुए उनके द्वारा वहाँ की सभी क्षेत्रों की भौगोलिक विशेषताओं का अधिक ज्ञान प्राप्त किया। जिसके पश्चात् गुरिल्ला युद्ध रणनीतिकार के रूप में आने वाले भविष्य में आदिवासी लोगो की मदद की। जब ब्रिटिश अधिकारियों के द्वारा इसी समय में उनकी पैतृक संपत्तियों को जब्त कर लिया, तब दो आदिवासी स्वतंत्रता सेनानी और भाईगम मल्लूदोरा व गम गंतमदोरा ने राम राजू के साथ जुड़ गए और उनका साथ दिया। समय के साथ अंग्रेजो की दमनकारी प्रथाएँ असहनीय होती गई तब लोगों को लगने लगा की आजाद रहने के लिए विद्रोह ही एक अंतिम रास्ता बन गया और तभी राम राजू उनके स्वभाविक नेता के रूप में सामने आये। तब अंग्रेजी सरकार के द्वारा उनके आश्रम के लिए 60 एकड़ उपजाऊ जमीन की उन्हे लालसा दिया गया लेकिन उन्होंने इसे अस्वीकार कर दिया और आम जनता के साथ विद्रोह करने के लिए खड़े रहे।

**रम्पा विद्रोह (1922-1924):-**सन् 1882 के मद्रास वन अधिनियम पारित होने के बाद वनाच्छादित क्षेत्रों के आर्थिक मूल्य का हनन करने के प्रयास से जंगलो में जनजातिय समुदाय के लोगों की स्वतंत्रता पूर्वक आने जाने पर प्रतिबंध लगा दिया जिससे उनकी अपनी परंपरगत चलते आ रहे

खेती (पोडु) प्रणाली बंद हो गयी। जीवन निर्वाह करने के लिए इससे आम अर्थव्यवस्था पर प्रभाव पड़ा। इस खेती में आदिवासियों के द्वारा स्थानांतरित खेती भी इसी प्रणाली में शामिल थी इसमें जनजातिय लोगों को संलग्न होने से रोक दिया गया था। ब्रिटिश सरकार के द्वारा परिवर्तनों का अर्थ था कि आदिवासी जनता को भुखमरी का सामना करना पड़ेगा तथा इससे बचने के लिए मुख्य साधन अपमानजनक कठिन, विदेशी व शोषक कुली प्रणाली में शामिल होना था। जिसका फ़यदा ब्रिटिश सरकार और उसके ठेकेदारों के द्वारा सड़क निर्माण जैसी चीजों के लिए कर रहे थे। वन अधिनियम के आस-पास उसी समय अंग्रेजी सरकार के अधिकारियों ने मुत्तादारों की पारंपरिक वंशानुगत भूमिका को भी समाप्त कर दिया था, जो मैदानी, इलाकों में रहने वाले राजाओं के लिए कर एकत्रित करने वाले के रूप में पहाड़ियों के वास्तविक शासक थे। ये सारे लोग सिर्फ़ सिविल नौकरों तक ही सीमित रह गए थे, जिनके पास किसी प्रकार की कोई बड़ी शक्तियाँ नहीं थी। उनके द्वारा अपने मन के अनुसार कोई कर नहीं लगा सकते थे तथा अपनी स्थिति को विरासत में पाने का कोई अधिकार नहीं था। इस प्रकार ये सारे परिस्थितियों ने कृषक और कर संग्रहकर्ता को औपनिवेशिक सत्ता के प्रति अपनी असहमती में व्यापक रूप से एक साथ विद्रोह के लिए खड़े हो गये थे। लोगों को अपनी ओर आकर्षित करने के लिए राम राजू ने असहयोग आंदोलन से कुछ नियमों को अपनाया जिसमें उसके द्वारा संयम रखना, शराब विरोधी अभियान चलाना और सभी मामलों का पंचायत अदालत में सुनवाई करना तथा इसके विपक्ष में औपनिवेशिक अदालतों का बहिष्कार करना। हालाँकि यह आंदोलन 1922 में समाप्त हो गया था। इस आंदोलन के खत्म होने तक यह मैदानी क्षेत्रों में पहुँच चुका था, क्योंकि राम राजू के द्वारा पहाड़ी लोगों के बीच में राजनीतिक जागरूकता और अंग्रेजी सरकार से तंग आकर बदालाव की अपनी इच्छा को बढ़ाने के लिए ऐसी ही तरीकों के प्रचार-प्रसार में लग गये थे। इन्हीं सभी कार्यवाही के चलते उन्हें उस साल फ़रवरी महीने के आसपास पुलिस की निगरानी में रखा गया। राम राजू के अधिकांश अनुयायी जनजातिय समुदाय के थे जिन्होंने उपनिवेशवाद विरोधी जोश का समर्थन किया।

गाँधी जी की प्रशंसा करते हुए उनको कुछ अवसरों पर देखा गया था, परंतु इसके विपरित राम राजू ने जनजातिय लोगो को हथियारों से लैस होने और गुरिल्ला युद्ध नीति के तरीकों से जुड़ने के लिए सक्रिय रूप से प्रोत्साहित किया गया। राम राजू ने मलकानागिरी के डिप्टी तहसीलदार से बातचीत करने के बाद कहा कि हिंसा आवश्यक है, और उनके द्वारा स्वराज स्थापना होने तक अपना अभियान जारी रखेंगे।

**रम्पा विद्रोह की कार्यवाही:-** अल्लूरी सीताराम राजू ने अपने समर्थकों के साथ मिलकर सेनानियों की मजबूत और शक्तिशाली सेना का निर्माण किया। राम राजू जो सदैव खादी कपड़ों का उपयोग करने वाले नेता बताए गए थे उन्होंने एक असहयोगी और ट्यूनी के खादी निर्माता रत्नपल्ली कासत्रला की सहयोग से अपने सभी सैनिकों को केवल खादी की वर्दी दिया। भाले व धनुष बाण जैसे पारंपरिक हथियारों में लैस, सैनिकों के द्वारा आपस में संदेशों का आदान-प्रदान करने के लिए ड्रम बजाने व सीटी बजाने जैसे रणनीति का प्रयोग करते हुए प्रारंभ में क्रांतिकारियों ने अंग्रेजों के खिलाफ अपनी विद्रोह में एक शानदार सफलता हासिल की। यह जानते हुए कि पारंपरिक हथियार अंग्रेजों के खिलाफ ज्यादा काम नहीं आ सकते क्योंकि जो सभी आधुनिक आग्नेयास्त्रों से सुसज्जित थे। राजू ने सोचा कि उन्हें आगे बढ़ने के लिए अच्छा तरीका दुश्मन से दूर रखना तथा उनके स्टेशनों पर हमला प्रारंभ कर दिया।

राम राजू ने कृष्णदेवी पेटा, चिंतपल्ली और राजावोमंगी के पुलिस स्टेशनों पर 22 और 24 अगस्त सन् 1922 के बीच में छापे मारे और लूटपाट में लगभग 500 सैनिक टुकड़ी का नेतृत्व किया। उनके द्वारा छापे में जब्त की गई वस्तुओं में विभिन्न हथियारों को अपने हवले कर लिए जिसमें 26 मस्कट, 2500 राउंड गोला बारूद 303 ली. एनफ़ैल्ड राइफ़्ले और एक रिवाल्वर शामिल था। बाद में उन्होंने सैनिकों की अधिक भर्तियाँ करने के लिए संपूर्ण क्षेत्र का दौरा किया और इसी के आसपास राम राजू ने एक पुलिस अधिकारी को मार डाला जो उन्हें दूढ़ने के लिए सैनिक टुकड़ी भेजी गयी थी वो सैनिक उसी का हिस्सा थे। इन सभी छापों की एक विशेषता थी कि प्रत्येक हमले के बाद राम राजू के द्वारा एक लिखित पत्र हस्ताक्षर करके सभी स्टेशन पर छोड़ते थे जिसमें छापे में लुट का विवरण, उसके द्वारा प्राप्त किए गए हथियार, हमले की तारीख और समय शामिल होता था। राम राजू ने अपने सभी अनुयायियों को निर्देश दिया था कि उनके द्वारा किसी भारतीय लड़ाके पर हमला न करे, केवल विदेशी दुश्मन पर हमला करे।

आदेश का इतनी सावधानी से पालन किया गया कि जब यूरोपीय और भारतीय लोगो की एक संयुक्त सेना पहाड़ी रास्ते से जा रही थी तब उनके अनुयायीयों ने भारतीय सैनिकों को आगे जाने दिया और केवल विदेशी सैनिकों पर हमला किया। राजू को पकड़ने में अंग्रेजों को अधिक संघर्ष करना पड़ा क्योंकि वे उस जगह से अंजान थे तथा कम जनसंख्या वाले क्षेत्रों में स्थानीय लोग अंग्रेजी सैनिकों का किसी भी प्रकार से सहायता नहीं कर रहे थे। यहाँ पर अल्लूरी की सहायता करने के लिए लोग पूरी तरह से उत्सुक थे, जिसमें अक्षय प्रदान करना व खुफिया जानकारी देना शामिल था। समकालीन अधिकारिक रिपोर्टों में सुझाव दिया कि पहाड़ियों में स्थित होने के कारण विद्रोहियों का समूह 80-100 के बीच घट गया, परंतु अंग्रेजों के विरुद्ध जब भी कार्यवाही करने के लिए आगे बढ़ते थे, तो यह आकड़ा एक नाटकीय रूप लेते हुए जनसंख्या बढ़ जाता था क्योंकि गावों के लोग इसमें शामिल हो जाते थे। जब अल्लूरी ने एक पुलिस दल पर घात लगाकर हमला किया तब 23 सितंबर को मौत हुई, जब वे दम्नपल्ली घाट से गुजर रहे थे, तो वहाँ दो अधिकारियों की मौत हो गई और इस घटना से असंतुष्ट लोगों के बीच उनकी प्रतिष्ठा मजबूत हो गई। अंग्रेजों को एहसास हुआ कि राम राजू की गुरिल्ला युद्ध शैली का जवाब उन्हें इसी प्रकार देना होगा तथा ब्रिटिश सरकार के दारा मालाबार स्पेशल पुलिस के सदस्यों को शामिल किया जो इसी युद्ध शैली थे प्रशिक्षित थे। वहाँ के स्थानीय लोगों के द्वारा राम राजू के बारे में जानकारी देने या उनके समर्थन को वापस लेने के लिए मनाने का प्रयास प्रतिशोध व प्रोत्साहन दोनों ही माध्यम से असफल रहे, फिर बाद में अडटेगला, नरसीपटनम अत्रावरम व रामपचोदवरम आदि पुलिस स्टेशनों पर छापे मारे गए। अल्लूरी सीताराम राजू धारकोंडा में देवी माँ काली की पूजा पाठ में मग्न थे तभी अंग्रेजी पुलिस की एक टीम ने हमला कर दिया परंतु उन्हें असफलता हाथ लगी इस घटना ने जनजातीय लोगो के बीच मान-सम्मान को अधिक बढ़ा दिया।

**उपसंहार:-** अल्लूरी सीताराम राजू भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के उन महान क्रांतिकारियों में से एक थे, जिन्होंने ब्रिटिश हुकूमत के खिलाफ जनजातीय समुदायों को संगठित कर सशस्त्र विद्रोह किया। उनका जीवन न केवल साहस, नेतृत्व और बलिदान की प्रेरणा देता है, बल्कि यह भी दर्शाता है कि किस प्रकार एक व्यक्ति अपने संकल्प और निष्ठा से अत्याचार के विरुद्ध संघर्ष कर सकता है। राजू का संघर्ष केवल सैन्य विद्रोह तक सीमित नहीं था, बल्कि उनके आंदोलन ने आदिवासी समाज में आत्मसम्मान और स्वतंत्रता की

भावना को भी जाग्रत किया। उनके नेतृत्व में चला 'चंपा विद्रोह' ब्रिटिश शासन के लिए एक गंभीर चुनौती बना और उनकी शहादत के बाद भी उनकी क्रांतिकारी विरासत जनमानस में जीवंत बनी रही। आज भी, अल्लूरी सीताराम राजू का नाम भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के अमर नायकों में लिया जाता है। उनकी स्मृति हमें प्रेरित करती है कि हम अपने समाज में अन्याय और शोषण के विरुद्ध आवाज उठाएं और राष्ट्र की स्वतंत्रता तथा गरिमा की रक्षा के लिए सदैव तत्पर रहें।

**संदर्भ सूची:-**

1. एटलूरी, मुरली (1984), अल्लूरी सीताराम राजू और 1922-1924 का मान्यम विद्रोह, सामाजिक वैज्ञानिक, 12(4): 3-33
2. बोस, सुब्रत. (2015), आदिवासी विद्रोह और उनका प्रभाव, कोलकाता: नेशनल बुक ट्रस्ट।
3. मिन्हास, सुभाष. (2003), क्रांतिकारी भारत: एक ऐतिहासिक अध्ययन, दिल्ली, साहित्य भवन।
3. सिंह, बलवीर. (2017), भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में जनजातीय क्रांतिकारी, जयपुर, राजस्थानी ग्रंथागार।
4. विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (व्छे) के शोध पत्र - भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में आदिवासी संघर्ष और अल्लूरी सीताराम राजू पर आधारित शोध।
5. भारतीय इतिहास अनुसंधान परिषद (व्छे), भारतीय स्वतंत्रता संग्राम से संबंधित शोध पत्र और प्रकाशन।
6. राव, के.वी. (2010), अल्लूरी सीताराम राजू: आदिवासी संघर्ष की गाथा. हैदराबाद, आंध्र इतिहास अकादमी।
7. रेड्डी, सी.एम. (2020), अल्लूरी सीताराम राजू और रंपा आंदोलन, विजयवाड़ा, टेलीगू अकादमी।
8. शर्मा, आर.के. (2018), भारतीय क्रांतिकारी आंदोलन: संघर्ष और बलिदान, वाराणसी, हिन्द प्रकाशन।
9. सरकारी अभिलेख एवं राष्ट्रीय संग्रहालय, भारत सरकार - रंपा विद्रोह और अल्लूरी सीताराम राजू से संबंधित दस्तावेज।
10. ऑनलाइन स्रोत - भारत सरकार के संस्कृति मंत्रालय और अन्य शैक्षिक वेबसाइटों पर उपलब्ध लेख और शोध पत्र।
11. गुप्ता, एस.सी. (2005), भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के महानायक. नई दिल्ली: प्रकाशन भारती।

# गंगाप्रसाद मिश्र की कहानियों में स्त्री जीवन का विविध रूपों में यथार्थ

पिन्टू रावल

डॉ. कामराज सिन्धु

1. शोधार्थी, कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय, कुरुक्षेत्र
2. शोध निर्देशक, दूरवर्ती शिक्षा निदेशालय, कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय, कुरुक्षेत्र

गंगाप्रसाद मिश्र की दो सौ से अधिक कहानियाँ हिन्दी साहित्य की अमूल्य निधि हैं। इन कहानियों में मिश्र जी ने स्त्री जीवन को बहुत गहराई से रेखांकित किया है। साहित्य के क्षेत्र में यथार्थ का अर्थ है - जो वस्तु जैसी है उसका उसी रूप में चित्रण करना यथार्थ कहलाता है। यथार्थ मानव जीवन और प्रकृति के सम्बन्धों की भौतिकवादी अवधारणा है। इसमें सूक्ष्म की जगह स्थूल को व काल्पनिक कृत्रिमता की जगह सत्य को महत्व दिया जाता है। यह सत्यान्वेषण की भावना से उद्भूत प्रवृत्ति है। इसमें रचनाकार बाह्य वस्तु जगत को कला का आधार बनाता है। लेखक अपनी भावना से स्वतंत्र होकर तटस्थ वस्तुपरक दृष्टि से मनुष्य और सामाजिक सम्बन्धों का तथा अन्तर्विरोधों का चित्रण करता है। रचनाकार सिर्फकल्पना के सहारे यथार्थ का चित्रण नहीं कर सकता, उसे वास्तविकता के धरातल पर उतरना ही पड़ेगा, तभी वह उसका चित्रण कर सकता है अन्यथा नहीं। मिश्र जी ऐसे ही सजग और धरातल पर लेखनी चलाने वाले साहित्यकार हैं, जिन्होंने स्त्री जीवन के विभिन्न रूपों की यथार्थ अभिव्यक्ति अपनी कहानियों में की है। अब हम विस्तार से इस पर चर्चा करते हैं।

**स्वच्छन्द प्रेम की आकांक्षी:**—स्त्री आज किसी बंधन में रहना नहीं चाहती वह अपनी इच्छा से अपना जीवन जीना चाहती है व स्वच्छन्द प्रेम करना चाहती है। 'नगद धर्म' कहानी में प्रोफेसर अमृत की पत्नी छवि है। वह प्रोफेसर के साथ नहीं रहना चाहती अपना प्रेमी वह राजीव को बनाती है। छवि को घूमना-फिरना मौज-मस्ती करना अच्छा लगता है, और उसका पति उसको बाहर नहीं ले जाता है। वह राजीव के साथ सम्बन्ध में रहते हुए उसके बच्चे की माँ बनने वाली होती है, तभी राजीव उसे अपने साथ भागने के लिए कहता है तो छवि कहती है - 'बस आ गए अपनी जात पर? मुझसे भागने को कहते हो। मुँह छिपाने को कहते हो? आखिर क्यों? ऐसा मैंने क्या किया है? मेरी मर्जी के खिलाफ मुझे अगर मेरे लाख विरोध करने पर भी किसी अनचाहे मनुष्य के गले बाँध दिया गया और मैंने सहारा पाते ही उसे त्याग कर किसी अधिक उपयुक्त को अपना लिया, तो मेरा क्या दोष है? मैं हर्गिज न मानूँगी। समाज के मुँह पर ही मैं उसकी इस विषैली जड़ पर कुटाराघात करके उसे अपनी गलती सुधारने का सबक दूँगी। मैं प्रोफेसर को त्याग करके तुम्हारी पत्नी बनूँगी।' ऐसा ही होता है वह प्रोफेसर को साफशब्दों में राजीव के साथ रहने की बात करती है। अमृत उसे नहीं रोकते और कहते हैं—'मैं तुम्हें अनुमति दूँगा कि तुम राजीव के साथ जाकर उसके हृदय और घर को आबाद कर सको और साथ ही यह शुभ कामना भी करूँगा कि तुम्हें पुनः परिवर्तन की आवश्यकता न पड़े।'<sup>2</sup>

'रक्त की रेखा' कहानी में तारा विक्रम से प्रेम करती है, जबकि वह टाकुर हीरा की मंगेतर है। वह गाँव वालों से छुप-छुप कर विक्रम से मिलने जाती है। टाकुर हीरा भी उसी गाँव में आया हुआ होता है। विक्रम तारा से कहता है—'आजकल तेरा मालिक यहाँ आया हुआ है।' मेरा मालिक तो तू है'<sup>3</sup> तारा ने उत्तर दिया। तारा लोकलाज और होने वाले पति की परवाह किए बिना विक्रम से सच्चा प्रेम करती है।

'कहानी की खोज' कहानी में रत्ना राकेश से प्रेम करती है। जब उसकी शादी हो जाती है तो वह पति को छोड़कर किसी दूसरे व्यक्ति को अपना प्रेमी बना उसके साथ रहने लगती है। बीमार अवस्था में वह राकेश व अपने माँ-बाप से माफ़ी माँगना चाहती है। राकेश तो उसके पास आ जाता है, लेकिन माँ-बाप उसके पास नहीं आते। आखिर में रत्ना संसार से विदा हो जाती है। 'माँग' कहानी में सुदर्शन और ललिता पति-पत्नी होते हैं। उनके पास बहुत पैसा होता है। कुछ समय बाद सुदर्शन की मृत्यु हो जाती है। ललिता अपना प्रेमी प्रमोद को बना लेती है। उसकी सहेली प्रेमा उसे समझाती है कि यह गलत है समाज आपको इजाजत नहीं देता ये सब करने को। आपके पति इतनी दौलत छोड़कर गए हैं कि बिना कुछ किए तुम्हारी जिन्दगी आराम से गुजर सकती है। ललिता इन सब बातों को नहीं मानती व आजाद जीना चाहती है। वह प्रेमा से कहती है—'यह ठीक है कि सुदर्शन से मेरा शास्त्रोक्त रीति से विवाह हुआ था। यह भी ठीक है कि एक पति से एक पत्नी को जो कुछ मिलना चाहिए, वह सब कुछ उसने मुझे दिया था। परन्तु न जाने मैं उसे क्यों अपना सर्वस्व न दे पाई। मन के अन्दर कुछ था, जो कभी उसके सामने न खुला। इसके विपरीत यह जो प्रमोद है, इसे प्रथम दृष्टि में ही मैं अपना सब कुछ दे बैठी।'<sup>4</sup>

**आत्मनिर्भर:**—आज स्त्री अपने दम पर कामयाब होकर पुरुष समाज की संकीर्ण मानसिकता पर चोट करती है। जो स्त्री को गुलामी की जंजीरों से अपने अधीन रखना चाहते थे उनको इस आत्मनिर्भर स्त्री ने करारा जवाब दिया है। 'खिलौनों का दहेज' कहानी में रजनीश दहेज का सामान न मिलने पर शोभना को विदा करके नहीं ले जाता है। वही लड़की फिर अपनी मेहनत के बल पर अध्यापिका हुई और फिर वहीं प्रिंसिपल हो गई बालिका विद्यालय में। बाद में रजनीश ही उसे बिना शर्त के विदा कर अपने साथ ले जाता है। 'अपना-अपना तर्क' कहानी में महिमा एक सफल महिला है। वह नौकरी करती है। यही नहीं परिवार को चलाने की जिम्मेदारी उसी की है। उसका पति कुछ काम नहीं करता।

'मोना' कहानी में मोना को अपनी मेहनत के बल पर इंडिया की

बॉस्केटबाल टीम में चुन लिया जाता है। उसे एशियन बॉस्केटबाल चैंपियनशिप में भाग लेने के लिए जापान जाना है। यह खबर सुनकर सभी उसकी तारीफ करते हैं।

‘समाधान-2’ कहानी में शरदचन्द्र की लड़की एम.ए., बी.एड., करके बालिका स्कूल में अध्यापिका नियुक्त हो जाती है। आत्मनिर्भर होकर स्त्री अपने जीवन को खुशहाल बना रही है।

शोषण:-आज पुरुष स्त्री का शारीरिक शोषण और अधिकारों का हनन करके उसकी प्रतिभा का दमन करने में लगा है। ‘पुनर्मिलन’ कहानी में मालती पर उसकी जेटानी झूठे लॉछन लगाती है जिससे आहत हो उसका पति श्यामू घर बार छोड़कर चला जाता है। फिर योजना बनाकर जेटानी मालती को हरिद्वार ले जाती है व मौका पाकर उसे वहीं छोड़ आती है। वह किसी पांडे के बहकावे में आती है और वह उसको एक सरदार के हाथों बेच देता है। बेचारी किसी तरह अपनी रक्षा करते हुए भागती हुई वह गंगा में कूद जाती है आत्महत्या करने के लिए। तभी एक साधु उसके बचा लेता है। वह साधु को बताती है कैसे उसको साजिश के तहत फसाया गया। यह सब सुनकर वह साधु बोला-मालती। वह कोई और नहीं श्यामू उसका पति ही था। दोनो वापिस मिल जाते हैं।

‘पेशा’ कहानी में एक होनहार लड़की मीना वकील है। वह एक बार बड़े नामी वकील के पास होती है। वह वकील उसको मुकदमे सौपने की बात करता है। जिससे मीना का नाम भी चले और धन भी मिले। मीना के सामने वह अपनी शर्त रखता है। मीना बिना शर्त सुने उसकी बात मानने की हॉ भरती है। तभी वह उसका हाथ पकड़ लेता है। मीना बाँके बिहारी वकील के इस व्यवहार से दुखी और गुस्से में भर जाती है। वह उसके पिता के उम्र का है। मीना कहती है-‘इसी तरह पैसा कमाना होता तो वकालत का पेश वयों अपनाती वकील साहब?’<sup>5</sup> और वह उसका हाथ झटक देती है।

विधवा की स्थिति:-नारी का विधवा रूप उसके जीवन में एक अभिशाप लेकर आता है। समाज की मृत परम्पराएँ रूढ़ियाँ और अनेकों प्रकार के प्रतिबंध स्त्री के विधवा जीवन पर लगाए जाते हैं। समाज में अनेकों कष्ट उसको सहन करने पड़ते हैं।

‘जीवन-1’ कहानी में विधवा तारा किसी तरह अपना गुजारा कर रही होती है। उसका भाई मरने से पहले अपने बेटे जीवन की जिम्मेदारी भी तारा को देता है क्योंकि उसकी भाभी की मृत्यु हो चुकी थी। बेचारी कपड़े सिलकर किसी तरह अपना व जीवन का पेट भरती है।

‘अरमानों की मीनार: बलिदानों का तूफान’ कहानी में 2 पुत्र और 1 पुत्री की मृत्यु का दुख और विधवा जीवन लिए मजबूर औरत की कहानी है। उसका सिर्फ 1 बेटा गंगेश ही उसके पास है। वह नौकरी करती है तो लोग उस पर गलत नजर रखते हैं। वह बेचारी अपनी आबरू बचा दूसरी नौकरी करके बड़ी परेशानी में अपना व अपने बेटे का गुजारा करती है।

‘लच्छे दादी’ कहानी में लच्छे के पति श्यामलाल के देहांत के बाद बहुत दुखी होती है। दुख व पीड़ाओं में वह किसी के सामने हाथ नहीं फैलाती जो थोड़ा बहुत पति छोड़ गया था। उसी से गुजारा करती। गरीबी में एक समय ही वह भोजन करती। लच्छे के माता-पिता बचपन में ही गुजर गए थे। चाचा-चाची के पास पलने वाले लच्छे को जीवन की कड़वी सच्चाई से परिचय था।

‘अपने-अपने मूल्य’ कहानी में निर्मला जिसके पति का देहांत हो जाता है विवाह के बाद निर्मला पति के घर नहीं गई उनकी कोई ऐसी ही रीत

थी। यह तय हुआ कि एक वर्ष बाद गौना होगा, तो निर्मला ससुराल जाएगी। लेकिन इससे पहले ही बीमारी से उनके पति नहीं रहे। लड़के का पिता जब यह कहता है कि हमारा कोई नहीं है हम निर्मला को अपने साथ रखना चाहते हैं। हमारी धन-दौलत, जायदाद सब इसकी है। हम इसका विवाह भी कर देंगे। लेकिन निर्मला जाने से मना करती है। कहती है मेरे भाग्य में सुख नहीं ससुराल जाने से पहले पति नहीं रहे। मैं विधवा रूप में पहली बार वहां न जा पाऊंगी। सास व ससुर के समझाने पर भी वह न मानी। वह ताउम्र माता-पिता और भाई-भाभी के बीच विधवा रूप में काटती है।

गंगाप्रसाद मिश्र जी ने स्त्री जीवन के विविध पहलुओं पर गहराई से अवलोकन किया है।

संदर्भ सूची:-

1. गंगाप्रसाद मिश्र ग्रन्थावली, भाग-6, संपादक डॉ. इन्दु शुक्ला, प्रकाशक गौरव बुक्स, दिल्ली, तृतीय संस्करण 2016, पृ. 316 वही, पृ. 318
2. वही पृ. 617
3. गंगाप्रसाद मिश्र ग्रन्थावली, भाग-7, संपादक डॉ. इन्दु शुक्ला, प्रकाशक गौरव बुक्स, दिल्ली तृतीय संस्करण 2016, पृ. 376 वही, पृष्ठ 382

## वृन्दावन लाल वर्मा के प्रेरणा-स्रोत

डॉ. हेमलता शर्मा

असिस्टेंट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, राजकीय महाविद्यालय, टप्पल, अलीगढ़

वृन्दावन लाल वर्मा हिन्दी नाटककार तथा उपन्यासकार थे। हिन्दी उपन्यास के विकास में उनका योगदान महत्वपूर्ण है। उन्होंने एक तरफ प्रेमचन्द की सामाजिक परंपरा को आगे बढ़ाया है। तो दूसरी तरफ हिन्दी में ऐतिहासिक उपन्यास की धारा को उत्कर्ष तक पहुँचाया है। युगीन वातावरण की सफल अभिव्यक्ति के रूप में वर्गीय भावना का स्वरूप उनके अधिकांश ऐतिहासिक उपन्यासों में देखने को मिलता है। वर्मा जी ने 1905 से ही लेखन आरम्भ कर दिया था। पर दो-चार नाटक, गिनी-चुनी कहानियों और छुट-पुट निबन्धों से उनके 'सर्जक' को सन्तोष नहीं मिल पाता था। गढ़कुण्डकार की रचना से पूर्व उनकी लेखनी में वह प्रवाह नहीं आ पाया था, जो उनके साहित्यकार को सही अभिव्यक्ति दे पाता। सृजनपूर्व से बिलकुल पहले की उद्दिग्न मानसिक स्थिति उनके ही शब्दों में इस प्रकार थी- 'मेरी वकालत बढ़ रही थी, शब्दों पर एक बात बहुत कोंचा करती थी। प्राकृति के सुहाने दृश्य, भिन्न स्वभाव के बहुत से नर-नारियों के अनुभव, समाज की समस्याएँ, देश की स्थिति और मेरी अकर्मण्यता, इस सब की परस्पर टकराहट मेरे भीतर हूकें उत्पन्न करती थीं। प्राकृति के सौन्दर्य का उपयोग और अपने तन और मन को सशक्त बनाने में ही है। इतिहास और परम्पराओं, नरशास्त्र और समाजशास्त्र इत्यादि के अध्ययन का परिणाम क्या वकालत मात्र ही रह जायेगी। रात का संगीत और छुट्टी के दिन का शिकार, क्या ये ही जीवन के अन्तिम उद्देश्य हैं।'

यह मानसिक छटपटाहट है, जो अपने ज्ञान, अपनी अनुभूतियों के लिए साहित्यकार के मन को मथा करती है। इसी मन्थन के उपरान्त गढ़कुण्डार तथा अन्य औपन्यासिक कृतियों का नवनीत प्रकट हुआ। यह सत्य है कि साहित्य व्यक्ति विशेष की प्रतिभा द्वारा रचित होता है किन्तु और भी अधिक सत्य यह है कि प्रतिभा सामाजिक प्रगति की उपज है। भूतप्रेत और ग्रह नक्षत्रों के अन्धकार में भटकने वाले समुदायों में आइन्स्टाइन पैदा नहीं हो सकते। कहने का तात्पर्य यह है कि साहित्यकार वैयक्तिक प्रतिभा मात्र ही नहीं होता, अपितु वह अपनी परिस्थितियों, वातावरण, परम्परा और संस्कारों से निर्मित सामाजिक प्राणी भी होता है और इन सब तत्वों का उसके साहित्य सृजन पर प्रभाव पड़ता है।

हाईस्कूल के पश्चात् पारिवारिक उत्तरदायित्वों को पूर्ण करने की विवशता से वर्मा जी अपने मुख्य मार्ग से कुछ भटके, किन्तु शीघ्र ही छोटी-मोटी नौकरियों में अपने आत्म-सम्मान और महत्वाकांक्षाओं का निर्वाह न होते देख, इस झंझट को छोड़कर पढ़ने चले आये। आगरे में एल0 एल0 बी0 करने के दौरान उन्हें हिन्दी के मूर्धन्य साहित्यकारों - बद्रीनाथ भट्ट मन्नन द्विवेदी, के सत्यनारायण कविरत्न आदि की घनिष्ठ और प्रेरक संगति मिली।

विशेषतः गणेशशंकर विद्यार्थी उन्हें साहित्य सेवा के लिए बराबर कोंचते रहते थे। 'प्रताप' में संवाददाता और व्यंग्यस्तम्भ 'गोलमाल करिणी-सभा' में स्थायी लेखन का भार तो सौंप ही रखा था। वकालत आरम्भ करने पर आरम्भ में जब वर्मा जी साहित्य रचना नहीं कर पाते थे, तो विद्यार्थी जी ने एक बार चिढ़कर कहा था, 'वर्मा तुम्हारा अदालती गाउन जला डालने को जी चाहता है।' इस खीज में निहित गहरी मैत्रीपूर्ण को क्या वर्मा जी उपेक्षणीय मानते होंगे। लेखन उन दिनों अवश्य नहीं हो पा रहा था पर उसकी मानसिक तैयारियाँ सचेष्ट रूप से चल रही थीं। छोटपेन में पढ़ी गयी यह बात उनके ध्यान में हमेशा रही कि ध्यान के साथ अवलोकन करो, काट-कतर को जोड़कर एक नया ताजा रूप दो। यह अभ्यास चलता रहा और भावी साहित्य रचना के लिए साधारण-असाधारण घटनाओं का भण्डार भरता रहा। इसीलिए उनकी साहित्य रचना में नित्य घटनाओं या प्रचलित चर्चाओं की प्रमुख प्रेरणा रही है। कालक्रमानुसार पहले उनके सामाजिक उपन्यासों के सन्दर्भ में इस प्रमुख स्रोत पर विचार करना आवश्यक है।

लगन-लगन की कथा और उसके नायक-नायिका सब वास्तविक है। दहेज के सम्बन्ध में विवाद, वधू की विदाई न कराना, कराव की चर्चा और रात में बेतवा पार करने की घटनायें सच्ची हैं। रामा का पुनर्विवाह के लिए सहमत न होना और साहसपूर्वक रात में नदी जंगल लांघकर ससुराल पहुंचकर झगड़े को समाप्त कराना भी यथार्थ घटना है, वर्मा को दुर्जन कुम्हार ने ये बातें बतायी थीं।<sup>1</sup> उक्त सूत्रों के आधार पर 'लगन' का सीधा - सादा, संक्षिप्त किन्तु सरस कथानक संगठित है। उपन्यास सम्राट मुंशी प्रेमचन्द ने स्वयं इस उपन्यास को 'पेस्टोशल पोयट्री' कह कर सराहा है।

कुण्डली चक्र-कुण्डली मिलाने जैसी रूढ़ियों पर बलिदान होने वाली 'रतनो' को वर्तमान समाज में खोजना बहुत कठिन नहीं है। बहुत सी लड़कियाँ हिन्दू समाज में इस प्रकार के विषम विवाहों से समझौता करके जीवन बिताती हुई देखी जा सकती हैं। वर्मा जी ने रतन और भुजबल के विवाह का प्रसंग सत्य घटना के आधार पर इस उपन्यास में चित्रित किया है। पूना का नाम यद्यपि असली नहीं है, पर उससे सम्बन्धित घटनायें नया गांव छावनी के निकट की है। मास्टर साहब से उसका विवाह माता के अनुरोध और परिस्थितियोंवश हो सका। स्वयं वर्मा जी ने भी इस सन्दर्भ में काफ़ी सहायता दी थी। पैला और बुद्धा की प्रेतबाधा वाला प्रसंग ज्यों की त्यों सत्य घटना है। हां, पीपल पर छेदों वाली हांडी में दीपक रखकर पूजा का तथाकथित उपक्रम उपन्यास में पूना के मामा, उसकी बीमारी का ठीक करने के लिए करते हैं, पर वास्तव में यह आयोजन बुद्धा ने अपने रोग और निर्धनता से विवश होकर किया था।<sup>1</sup>

**प्रेम की भेंट:-** प्रेम की भेंट की सीधी-सादी 'देवदासीय' प्रेमकथा का प्रेरणास्त्रोत छतरपुर रियासत की एक तथा कथ्य घटना है, जिसे वर्मा जी ने अपने एक मित्र के मुंह से सुना था। सुन्दर लड़की से प्रेम होना, प्रेम प्रकट होने पर माता-पिता का विरोध, लड़की का बीमार होकर मर जाना और प्रेमी का, प्रेयसी की चुनरी के टुकड़े को हृदय से लगाये दुख से पागल-सा होकर मर जाना आदि सत्य घटनाओं को कलात्मक ढंग से थोड़े-बहुत रूपान्तर सहित इस आरम्भिक काल की रचना में प्रस्तुत किया गया है। उचियारी के ज्वलित प्रतिशोध प्रयास को गढ़कण्डार के अग्निवत का घरेलू संस्करण मानना चाहिए। उसकी आकुल प्रेम पिपासा में बाल विधवा के दग्ध हृदय की धक की झलक तत्कालीन समाज में वर्मा जी ने कहीं न कहीं अवश्य पायी होगी।<sup>1</sup>

**कचनार:-** इस उपन्यास की मुख्य कथा घोड़े से गिरने के फलस्वरूप राव दिलीप सिंह की स्मृति लुप्त हो जाने की है, जिसका प्रेरणा स्त्रोत भुवाल सन्यासी का मनोरंजक किन्तु विवादास्पद मुकदमा था। इसी के साथ 33-34 वर्ष पूर्व 'सरस्वती' में पढ़ी हुई इसी से मिलती-जुलती दुर्घटना के समाचार की स्मृति ने भी दिलीप सिंह को अबोध सुमन्तपुरी और सुमन्तपुरी को पुनः चोट लगने का सचेत दिलीप सिंह बन जाने के प्रसंगों की उद्भावना को प्रेरित किया। मनोविज्ञान और नृतत्वशास्त्र के विद्यार्थी वर्मा जी ने उक्त घटनाओं के निष्कर्ष अर्थात् स्मृति लोप और स्मृति लौट आने के विषय में जो तथ्य दिये हैं, उनका आधार झांसी के सिविल सर्जन डॉ० एन० जे० बखरू से किये गये लम्बे विचार-विमर्श हैं।<sup>6</sup>

**अमर बेल:-** वर्मा जी जिला सहकारी बैंक के लगभग तीस वर्ष मैनेजिंग डायरेक्टर रहे। झांसी जिले के गांव में पहले पहल इस योजना को कार्यान्वित करने में वर्मा जी के अनवरत प्रयास और लगन को पर्याप्त श्रेय है। अन्धविश्वासों, पुरातन रूढ़ियों, पुश्तैनी वैर बसाये प्रतिक्रियावादी तत्वों की बाधाओं और नये रक्त के उत्साह को उन्होंने बुन्देलखण्ड के ग्रामों में अपनी आंखों से देखा था। 'अमरबेल' और 'उदयकिरण' उपन्यासों में इन्हीं कड़वे-मीठे अनुभवों से प्रेरणा ग्रहण की गयी है। अपीम के अवैध व्यापार के चर्चे हमारे अखबारों के लिए नये नहीं हैं। बिना श्रम किये रातों-रात लखपति बनने की कामना देशराज जैसे व्यक्तियों के दुस्साहस की जन्मदात्री है। कचहरी की मिसिल बन जाने की आशंका से वास्तविक नामों को प्रकट ने करने का उल्लेख करके 'अमरबेल' की उक्त व्यापार सम्बन्धी घटनाओं की सत्यता को वर्मा जी ने स्वयं स्वीकार किया है। देवराज से सम्बन्धित कुछ घटनायें झांसी जिले के दौरान, नैनवारा गांवों में घटित हुई थी। हरको-जोधा का प्रसंग कुछ परिवर्तित रूप में झांसी के एक अन्य गांव का है। वास्तव में हरको से मनमुटाव के बाद जोधा की हत्या नहीं हुई थी, बल्कि हरको वापिस पतिगृह पहुंच गयी थी। वाद्यराज द्वारा कलाकारों को लुटवाये जाने की घटना मध्य भारत की है। श्री श्याम लाल पाण्डवीय ने विस्तार से वर्मा जी को इस सम्बन्ध में बताया था।<sup>7</sup>

**गढ़कण्डार:-** गढ़कण्डार के निर्भीक, वाचाल, स्वामिभक्त हंसी की छाप लगे लेटों वाले अर्जुन कुम्हार का प्रेरणास्त्रोत वर्मा जी का वर्षों का साथी अर्जुन कुम्हार है। सच्चा बहादुर शिकार का साथी, ईमानदार करामत इसी उपन्यास में 'इवन्करीम' के रूप में चित्रित हुआ। सच्ची मित्रता के साकार स्वरूप मित्रवत फूलचन्द पुरोहित के चरित्र की उज्ज्वल रेखाओं से गढ़कण्डार के 'हरिचन्देल' नामक पात्र का सृजन हुआ है। कुसुम कोमल, भोर के तारे सी सुन्दर, गंगा सी पवित्र तारा की छवि वर्मा जी के अन्तर के गहन गम्भीर पतों से उभर कर बहुत बाद में अंकित हो सकी। यद्यपि उसका परिचय

हाईस्कूल के दिनों में 'नारान्तक वध' नाटक खेलते हुए बहुत पहले एक संकोच मिश्रित, संक्षिप्त से वार्तालप द्वारा हुआ था।<sup>8</sup> मनोरंजक रहस्य तो यह है कि स्वजन्दशी, तर्कपटु, बुन्देलखण्ड को जी जान से चाहने वाले, कवि हृदय दिवाकर महाशय वर्मा जी के अपने ही प्रतिरूप हैं।<sup>9</sup>

**कुण्डली चक्र-** कुण्डली चक्र के परिश्रमी, ईमानदार, संघर्षी, किन्तु घोर अन्धविश्वासी और निर्धन बुद्ध और पैलू से वकालत के दिनों में परिचय हुआ था, जिन्हें नाम और गुण सहित उक्त उपन्यास में लेखक ने प्रस्तुत किया है। भुजबल महाशय ने उपन्यास में ललितसेन को ही चकमा दिया, पर वास्तविक जीवन में अपने को बहुत बुद्धिमान लगने वाले वर्मा जी को भी चूना लगा दिया। एक बार ये सज्जन किसी फौजदारी के मुकदमें में पैरवी के लिए लेखक को ललितपुर बुला गये। किराया और फीस दूसरे दिन स्टेशन पर पहुंचते ही देने की बात तय हो गयी। वर्मा जी टाट से फर्स्ट क्लास से ललितपुर पहुँचे। स्टेशन पर मुख्तार साहब होते तो मिलते। कचहरी गये। पता चला कि मामले का राजीनामा हो चुका है और मुख्तार साहब जा चुके हैं। उपन्यास में भुजबल और शिवलाल इन्हीं मुख्तार साहब और उनके रईस जमींदार की सत्य प्रतिलिपि हैं। पूना और उसकी माता से वर्मा जी न केवल परिचित ही थे। बल्कि पूना के विवाह में सहायक भी रहे।<sup>10</sup>

**विराटा की पद्मिनी:-** विराटा की पद्मिनी के लोचन सिंह ऐतिहासिक पृष्ठभूमि में स्थापित एक परिचित चरित्र रहे थे। उनकी उद्दण्ड और लड़ाकू प्रवृत्ति ने वर्मा जी को ही प्रेरित नहीं किया, अपितु श्री मेथिलीशरण गुप्त से भी 'सरस्वती' में 'दास्ताने' शीर्षक कविता लिखवा ली थी।<sup>11</sup> दांगियों के विरित बलिदान शौर्य और अपराजेय स्वाभिमान के प्रेरणा स्त्रोत विराटा के वे निर्भीक किन्तु संकोची युवक थे, जिनसे वर्मा जी और फूलचन्द पुरोहित का सिर-फटौल होते बाल-बाल बचा था।<sup>12</sup>

**झांसी की रानी:-** रानी लक्ष्मीबाई के शौर्य और तेजस्विता से वर्मा जी का परिचय परदादी की सुनाई गयी कहानियों के माध्यम से बहुत छोटपन में हो चुका था। इस चरित्र में लोकप्रियता, प्रजापालन और उच्चकोटि की सच्चरित्रता के रंग भरने की प्रेरणा झांसी के अजीमुल्ला जैसे वृद्धों से किये गये इन्टरव्यूनुमा वार्तालापों से मिली, जिन्होंने बड़े उत्साह और भक्ति से रानी की बातें बतलाईं। रानी के भतीजे, डॉ० सावरकर और श्रीमती यमुनाबाई शेवड़े से भी बहुत-सी अन्तरंग जानकारी प्राप्त हुई। इस प्रकार अपने पर्यावरण से अनुकूल प्रभाव और प्रेरणा ग्रहण करके वर्मा जी पारसनीय के ग्रन्थों जैसी ऐतिहासिक सामग्री का पनुपरीक्षण करके रानी लक्ष्मीबाई के भव्य और तेजस्वी चरित्र का निर्माण कर सके।

उक्त प्रेरणा स्त्रोत के साथ वर्मा जी के साहित्य के प्रशंसकों के अमूल्य सुझाव भी प्रेरणा के पुंज सिद्ध हुए हैं। उदाहरण के लिए-रानी साहब ग्वालियर के पत्र के अंशों से 'मृगनयनी' जैसी उत्कृष्ट रचना की तत्कालिक प्रेरणा मिली, उन्हें 'कचनार' उपन्यास बहुत पसन्द आया और लिखा कि अब ग्वालियर की विख्यात गूजरी रानी मृगनयनी पर भी कुछ लिखिये जो शूरता और संगीत कला, दोनों के लिए मध्ययुग में एक समान प्रसिद्ध रही हैं।<sup>13</sup> वर्मा जी ने स्वयं स्वीकार किया है कि यद्यपि ग्वालियर में पढ़ते हुए गूजरी महल उन्होंने कई बार देखा था, मृगनयनी से सम्बन्धित लोककथायें और किंवदन्तियां भी सुनी थीं, पर उपन्यास के रूप में उन सबका उपयोग करने की प्रेरणा उक्त पत्र से ही मिली।<sup>13</sup>

इन्दौर में अहिल्याबाई जयन्ती के उद्घाटन समारोह में प्रशंसकों ने 'अहिल्याबाई' पर उपन्यास लिखने का आग्रह किया और श्री मिश्रीलाल

गंगवाल ने प्रचुर मात्रा में ऐतिहासिक सामग्री भेजकर तथा श्री यामलाल पाण्डवीय ने सम्बन्धि स्थलों की यात्रा सुलभ करके, आग्रह को सक्रिय रूप प्रदान किया। 'दुर्गावती' और 'रामगढ़ की रानी' उपन्यासों की मूल और तात्कालिक प्रेरणा प्रशंसकों के अनवरत आग्रह रहे।

संक्षेप में कहा जा सकता है कि वर्मा जी के साहित्य सृजन की प्राथमिक प्रेरणा उन्हें अपने घर-परिवार से मिली, जिसे मित्र मण्डली ने जागरूक रखा, वकालत ने वैविध्यपूर्ण घटनायें और चरित्र प्रदान कर, सामग्री जुटाई, सूक्ष्म निरीक्षण ने सजीव चरित्र और कथा सूत्र बटोरे और प्रशंसकों ने प्रोत्साहित किया। इसके साथ-साथ तत्कालीन राष्ट्रीय और सामाजिक किया। इसके साथ-साथ तत्कालीन राष्ट्रीय और सामाजिक चेतना ने उन्हें हिन्दी साहित्य सृजन, जो कि उस युग में देशभक्ति का पर्याय माना जाता था, के प्रति अनेकविधि प्रेरित किया।

#### संदर्भ सूची:-

1. अपनी कहानी, पृष्ठ 13
2. डॉ० हजारी प्रसाद द्विवेदी, विचार और वितर्क, पृष्ठ 273,
3. ल्गन, परिचय और अपनी कहानी के आधार पर
4. अपनी कहानी, पृष्ठ 117-118
5. प्रेम की भेंट, परिचय
6. कचनार, परिचय
7. अमरबेल, परिचय तथा शशिभूषण सिंहल, उपन्यासकार वृन्दावन लाल वर्मा, पृष्ठ 107 के आधार पर
8. अपनी कहानी, पृष्ठ 22
9. अपनी कहानी, पृष्ठ 120
10. अपनी कहानी, पृष्ठ 118
11. विराटा की पद्मिनी, परिचय
12. अपनी कहानी, पृष्ठ 148
13. अपनी कहानी, पृष्ठ 118

# श्रीमद्भगवद्गीता के पंद्रहवें अध्याय 'पुरुषोत्तम योग' की प्रासंगिकता

डॉ. जितेन्द्र कुमार द्विवेदी

सह आचार्य, संस्कृत विभाग, कमला राय महाविद्यालय, गोपालगंज, जयप्रकाश विश्वविद्यालय, छपरा

**शोध सारांश:-** श्रीमद्भगवद्गीता का पंद्रहवाँ अध्याय 'पुरुषोत्तम योग' वेदांत दर्शन का सार प्रस्तुत करता है। इसमें भगवान् श्रीकृष्ण ने संसार की असारता, आत्मा और परमात्मा के संबंध, तथा मोक्ष-प्राप्ति के उपायों पर विस्तृत प्रकाश डाला है। यह अध्याय न केवल धार्मिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है, बल्कि आधुनिक जीवन में भी इसकी गहरी प्रासंगिकता है।

**पुरुषोत्तम योग का परिचय:-** पुरुषोत्तम योग के अंतर्गत श्रीकृष्ण ने संसार-रूपी अश्वत्थ वृक्ष का वर्णन किया है, जिसकी जड़ें ऊपर की ओर (परम ब्रह्म में) और शाखाएँ नीचे की ओर (संसार में) फैली हुई हैं। यह वृक्ष मोह और माया के कारण जीव को संसार में बाँधता है। इस योग के माध्यम से व्यक्ति परमात्मा के वास्तविक स्वरूप को समझकर मोक्ष प्राप्त कर सकता है।

**पुरुषोत्तम योग के प्रमुख श्लोक एवं उनके अर्थ-**

“ऊर्ध्वमूलमधःशाखम् अश्वत्थं प्राहुरव्ययम्।

छन्दांसि यस्य पर्णानि यस्तं वेद स वेदवित्॥” (गीता 15.1)

अर्थात् यह संसार रूपी पीपल का वृक्ष जिसकी जड़ें ऊपर (ब्रह्म) में हैं और शाखाएँ नीचे (माया) में फैली हैं, इसे ही अविनाशी कहा गया है। इसके पत्ते वेद हैं, जो इस वृक्ष को जानता है, वही वेदों का ज्ञाता है।

यस्मात् क्षरमतीतोऽहम् अक्षरादपि चोत्तमः।

अतोऽस्मि लोके वेदे च प्रथितः पुरुषोत्तमः॥ (गीता 15.18)

अर्थात् क्योंकि मैं नश्वर और अविनाशी दोनों से परे हूँ, इसलिए वेदों और संसार में मुझे पुरुषोत्तम कहा गया है।

**शोध पद्धति:-**

इस शोध पत्र के लिए निम्नलिखित शोध पद्धतियों को अपनाया गया है:-

(क) प्राथमिक स्रोतों का अध्ययन

श्रीमद्भगवद्गीता के विभिन्न भाष्यकारों की व्याख्याओं का गहन अध्ययन किया गया है।

(ख) द्वितीयक स्रोतों का विश्लेषण

गीता पर आधारित विभिन्न दार्शनिक और आध्यात्मिक ग्रंथों का अध्ययन कर उनकी समीक्षात्मक तुलना की गई है।

(ग) तुलनात्मक अध्ययन

अन्य धर्मों और दर्शनों में पुरुषोत्तम योग के समान विचारों की तुलना की गई है।

(घ) सर्वेक्षण एवं अनुभव आधारित विश्लेषण

आधुनिक समाज में पुरुषोत्तम योग के प्रभाव को समझने हेतु आध्यात्मिक अभ्यासकर्ताओं और विशेषज्ञों से संवाद किया गया है।

**आधुनिक जीवन में पुरुषोत्तम योग की प्रासंगिकता:-**

(क) नैतिकता और आध्यात्मिकता

आज के युग में व्यक्ति भौतिक सुख-सुविधाओं में उलझा हुआ है, जिससे नैतिक और आध्यात्मिक पतन हो रहा है। पुरुषोत्तम योग आत्मा के सत्य स्वरूप को पहचानने और परमात्मा से जुड़ने की प्रेरणा देता है।

पुरुषोत्तम योग जीवन को नैतिकता और आध्यात्मिकता के उच्चतम स्तर पर ले जाने का मार्ग प्रदान करता है। यह योग हमें सिखाता है कि नैतिकता केवल बाहरी आचरण नहीं, बल्कि आंतरिक चेतना का परिष्कार भी है।

**नैतिकता का आधार-**

नाहं प्रकाशः सर्वस्य योगमायासमावृतः।

मूढोऽयं नाभिजानाति लोको मामजमव्ययम्॥ (गीता 7.25)

अर्थात् मैं अपनी योगमाया से ढका हुआ हूँ, इसलिए यह मूढ़ लोग मुझे जन्म-मरण रहित और अविनाशी नहीं समझ पाते।

इस श्लोक से यह स्पष्ट होता है कि नैतिकता और आध्यात्मिकता के लिए व्यक्ति को आत्मबोध एवं परमात्मा की चेतना को समझना आवश्यक है।

**आध्यात्मिकता का महत्व-**

“ममैवांशो जीवलोके जीवभूतः सनातनः।

मनः षष्ठानीन्द्रियाणि प्रकृतिस्थानि कर्षति॥” (गीता 15.7)

अर्थात् यह जीवात्मा मेरा ही सनातन अंश है, जो मन और इंद्रियों के माध्यम से संसार में कर्म करता है।

यह श्लोक यह बताता है कि प्रत्येक आत्मा परमात्मा का अंश है, और इसे आत्म-उत्थान के लिए नैतिक और आध्यात्मिक आचरण अपनाना चाहिए। आध्यात्मिकता जीवन को सही दिशा प्रदान करती है और व्यक्ति को अपने वास्तविक स्वरूप का बोध कराती है।

**नैतिकता और आध्यात्मिकता का समाज पर प्रभाव-**

आधुनिक संदर्भ में नैतिकता और आध्यात्मिकता- आज की दुनिया में, जहाँ भौतिकवाद और प्रतिस्पर्धा हावी है, नैतिकता और आध्यात्मिकता की आवश्यकता और अधिक बढ़ गई है। कार्यस्थलों पर ईमानदारी, पारदर्शिता और करुणा का अभाव समाज में असंतोष और संघर्ष को जन्म देता है।

**नेतृत्व में नैतिकता-**

यद्यदाचरति श्रेष्ठस्ततदेवेतरो जनः।

स यत्प्रमाणं कुरुते लोकस्तदनुवर्तते॥ (गीता 3.21)

अर्थात् जो श्रेष्ठ व्यक्ति करता है, अन्य लोग उसी का अनुसरण करते हैं। वह जो भी प्रमाण स्थापित करता है, समाज उसी का अनुसरण करता है।

नैतिकता का पालन करने वाले नेतृत्वकर्ता समाज को सही दिशा में ले जाते हैं। गीता के इस श्लोक के अनुसार, समाज का नैतिक उत्थान तभी

संभव है जब उसके नेता और मार्गदर्शक नैतिकता एवं आध्यात्मिकता को अपनाएँ।

#### शिक्षा और नैतिकता-

आज की शिक्षा प्रणाली में नैतिकता और आध्यात्मिकता का समावेश बहुत आवश्यक है। विद्यार्थियों को केवल किताबी ज्ञान देने के बजाय उनके चरित्र निर्माण पर भी ध्यान दिया जाना चाहिए। गीता का पुरुषोत्तम योग आत्म-साक्षात्कार और कर्तव्यनिष्ठा की शिक्षा देता है।

#### मानसिक शांति एवं आत्मसाक्षात्कार-

आधुनिक जीवन में मानसिक तनाव और अशांति आम समस्याएँ हैं। पुरुषोत्तम योग के माध्यम से व्यक्ति आत्म-परिष्कार और ध्यान के द्वारा मानसिक शांति प्राप्त कर सकता है। योग और ध्यान की विधियों को अपनाकर व्यक्ति अपने मन को नियंत्रित कर सकता है।

#### ऐतिहासिक और समकालीन उदाहरण-

##### महात्मा गांधी-

महात्मा गांधी ने गीता के शिक्षाओं को अपने जीवन में अपनाया और सत्य व अहिंसा के सिद्धांतों पर चलते हुए भारत को स्वतंत्रता दिलाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। उन्होंने निष्काम कर्म और पुरुषोत्तम योग के सिद्धांतों को अपनाकर आत्मबोध और समाज सेवा को महत्व दिया।

#### आध्यात्मिक गुरुओं का योगदान-

विवेकानंद, रामकृष्ण परमहंस, और श्री अरविंद जैसे संतों ने पुरुषोत्तम योग की शिक्षा को आत्मिक उत्थान के लिए आवश्यक माना। उन्होंने समाज को यह सिखाया कि नैतिकता और आध्यात्मिकता किसी भी राष्ट्र की नींव को मजबूत करने के लिए अनिवार्य है।

पुरुषोत्तम योग नैतिकता और आध्यात्मिकता के उच्च आदर्शों को प्रस्तुत करता है। यह न केवल मोक्ष की ओर ले जाने वाला मार्ग है, बल्कि सामाजिक समरसता, नेतृत्व, मानसिक शांति, और आत्मबोध का भी माध्यम है। इस योग को अपनाकर व्यक्ति जीवन में संतुलन, सत्य, और शांति की प्राप्ति कर सकता है। आधुनिक युग में इसकी शिक्षाओं को आत्मसात् कर हम एक नैतिक और आध्यात्मिक समाज की स्थापना कर सकते हैं।

#### श्रीमद्भगवद्गीता के पंद्रहवें अध्याय- पुरुषोत्तम योग की प्रासंगिकता, शिक्षा और आध्यात्मिकता :-

श्रीमद्भगवद्गीता का पंद्रहवाँ अध्याय पुरुषोत्तम योग भारतीय आध्यात्मिक दर्शन का एक महत्वपूर्ण स्तंभ है। यह अध्याय आत्मा, परमात्मा, और संसार के संबंध को स्पष्ट करता है और व्यक्ति को सच्चे ज्ञान की ओर प्रेरित करता है। शिक्षा और आध्यात्मिकता के क्षेत्र में गीता का यह योग विशेष रूप से प्रासंगिक है, क्योंकि यह केवल बाहरी ज्ञान तक सीमित नहीं रहता, बल्कि आंतरिक आत्मबोध और नैतिकता का भी मार्गदर्शन कराता है।

#### पुरुषोत्तम योग और शिक्षा का महत्व :-

सच्चे ज्ञान की परिभाषा- आज की शिक्षा प्रणाली मुख्य रूप से भौतिक उपलब्धियों और तकनीकी ज्ञान पर केंद्रित है, लेकिन पुरुषोत्तम योग यह सिखाता है कि शिक्षा का उद्देश्य केवल बाहरी ज्ञान प्राप्त करना नहीं, बल्कि आत्मा का बोध कराना भी है।

नहि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते।

तत्स्वयं योगसंसिद्धः कालेनात्मनि विन्दति ॥ (गीता 4.38)

अर्थात् इस संसार में ज्ञान के समान पवित्र कुछ भी नहीं है, जो व्यक्ति योग द्वारा सिद्ध होता है, वह समय के साथ इस ज्ञान का स्वयं अनुभव

कर लेता है।

यह श्लोक स्पष्ट करता है कि शिक्षा का अंतिम उद्देश्य आत्मा का साक्षात्कार करना है। यदि शिक्षा केवल सांसारिक उपलब्धियों तक सीमित रह जाए, तो वह अधूरी है।

#### नैतिक शिक्षा का अभाव-

वर्तमान शिक्षा प्रणाली में नैतिक मूल्यों की कमी स्पष्ट रूप से देखी जा सकती है। भौतिक सफलता की होड़ में नैतिकता का पतन हो रहा है। पुरुषोत्तम योग शिक्षा को केवल विषयों की पढ़ाई तक सीमित नहीं रखता, बल्कि यह सिखाता है कि ज्ञान का उपयोग समाज और आत्मा के कल्याण के लिए किया जाना चाहिए।

यद्यदाचरति श्रेष्ठस्तत्तदेवेतरो जनः।

स यत्प्रमाणं कुरुते लोकस्तदनुवर्तते ॥ (गीता 3.21)

अर्थात् जो श्रेष्ठ पुरुष करता है, अन्य लोग उसी का अनुसरण करते हैं। वह जो प्रमाण स्थापित करता है, समाज उसी का अनुसरण करता है।

इस श्लोक के अनुसार, यदि शिक्षक और विद्वान नैतिकता और आध्यात्मिकता को अपने आचरण में अपनाएँगे, तो विद्यार्थी और समाज भी उसे स्वीकार करेंगे।

#### पुरुषोत्तम योग और आध्यात्मिकता का संबंध-

##### आत्मा का महत्व-

पुरुषोत्तम योग आत्मा को परमात्मा का अंश मानता है। यदि व्यक्ति अपने जीवन में आध्यात्मिक मूल्यों को अपनाए, तो वह जीवन के वास्तविक उद्देश्य को समझ सकता है।

जब शिक्षा प्रणाली आत्मा के अस्तित्व और उसके महत्व को स्वीकार करती है, तभी वह संपूर्ण मानवता के कल्याण का मार्ग प्रशस्त कर सकती है। आध्यात्मिक शिक्षा का मुख्य उद्देश्य आत्मा को परमात्मा के साथ जोड़ना और व्यक्ति को आत्म-बोध की ओर ले जाना है।

#### ध्यान और योग की भूमिका-

आज के तनावपूर्ण जीवन में ध्यान और योग व्यक्ति को मानसिक और आध्यात्मिक रूप से संतुलित बनाए रखने में सहायक होते हैं। गीता के पुरुषोत्तम योग में ध्यान, भक्ति और ज्ञान को विशेष महत्व दिया गया है। यदि शिक्षा प्रणाली में इन तत्वों को शामिल किया जाए, तो विद्यार्थी केवल परीक्षा में उत्तीर्ण होने के लिए नहीं, बल्कि एक संतुलित और आत्मज्ञानी जीवन जीने के लिए प्रेरित होंगे।

ध्यायतो विषयान्पुंसः सङ्गस्तेषूपजायते।

सङ्गात्सञ्जायते कामः कामात्क्रोधोऽभिजायते ॥ (गीता 2.62)

अर्थात् जब व्यक्ति सांसारिक विषयों का चिंतन करता है, तो उसमें उनकी आसक्ति उत्पन्न होती है। आसक्ति से कामना उत्पन्न होती है और कामना से क्रोध उत्पन्न होता है।

यह श्लोक स्पष्ट करता है कि ध्यान और आत्म-साक्षात्कार के बिना व्यक्ति सांसारिक विषयों में उलझकर मानसिक अशांति का शिकार हो सकता है। इसलिए, शिक्षा प्रणाली में ध्यान और आत्म-ज्ञान का समावेश अनिवार्य होना चाहिए।

#### शिक्षा और आध्यात्मिकता के सामंजस्य की आवश्यकता-

##### आधुनिक शिक्षा प्रणाली में सुधार-

आज की शिक्षा प्रणाली में नैतिकता और आध्यात्मिकता का अभाव देखा जा सकता है। यदि पुरुषोत्तम योग के सिद्धांतों को शिक्षा में शामिल किया

जाए, तो युवा पीढ़ी एक संतुलित और सदाचारी जीवन जी सकती है। आध्यात्मिक शिक्षा से विद्यार्थियों में आत्म-नियंत्रण, करुणा, सेवा और कर्तव्यपरायणता जैसे गुण विकसित हो सकते हैं।

विद्या विनयसंयुक्ता ब्रह्मचर्येण संयुता।

धर्मेण च यथा तत्त्वं तद्विज्ञानं प्रकीर्तितम्॥

अर्थात् सच्ची विद्या वह है जो विनम्रता और ब्रह्मचर्य से संयुक्त हो, और धर्म का पालन करते हुए तत्त्वज्ञान को प्राप्त कराए।

**शिक्षकों की भूमिका-**

शिक्षक केवल ज्ञान देने वाला नहीं होता, बल्कि वह विद्यार्थियों के लिए एक प्रेरणा स्रोत भी होता है। यदि शिक्षक स्वयं आध्यात्मिक और नैतिक रूप से सशक्त होंगे, तो वे अपने विद्यार्थियों में भी इन्हीं मूल्यों का संचार कर सकते हैं। पुरुषोत्तम योग केवल एक दार्शनिक विचारधारा नहीं, बल्कि यह एक जीवनशैली है जो शिक्षा और आध्यात्मिकता को एकीकृत करने में सहायक हो सकती है। यदि शिक्षा केवल सांसारिक उपलब्धियों तक सीमित रह जाए और आध्यात्मिकता से रहित हो, तो यह समाज में नैतिक पतन और मानसिक तनाव को जन्म दे सकती है। इसलिए, शिक्षा प्रणाली में गीता के पुरुषोत्तम योग के सिद्धांतों को लागू करना अत्यंत आवश्यक है।

शिक्षा का उद्देश्य केवल जानकारी प्राप्त करना नहीं, बल्कि आत्म-ज्ञान, आत्म-संयम, नैतिकता और आध्यात्मिकता को विकसित करना होना चाहिए। यदि व्यक्ति इन सिद्धांतों को अपने जीवन में अपनाता है, तो वह न केवल स्वयं को सुधार सकता है, बल्कि समाज में भी नैतिकता और शांति की स्थापना कर सकता है।

**श्रीमद्भगवद्गीता का पंद्रहवाँ अध्याय-पुरुषोत्तम योग की प्रासंगिकता, प्रशासन और नैतिकता:-**

श्रीमद्भगवद्गीता का पंद्रहवाँ अध्याय श्पुरुषोत्तम योगश् भारतीय दर्शन और आध्यात्मिकता का एक महत्वपूर्ण स्तंभ है। यह अध्याय आत्मा, परमात्मा और संसार के संबंध को स्पष्ट करता है और व्यक्ति को सच्चे ज्ञान तथा नैतिकता की ओर प्रेरित करता है। प्रशासन और नैतिकता के क्षेत्र में गीता का यह योग विशेष रूप से प्रासंगिक है, क्योंकि यह केवल बाहरी प्रबंधन तक सीमित नहीं रहता, बल्कि नैतिक मूल्यों और नेतृत्व कौशल को भी परिभाषित करता है।

1. पुरुषोत्तम योग और प्रशासन का महत्व
2. कुशल प्रशासन के सिद्धांत-

प्रशासन केवल नीतियों और कानूनों पर आधारित नहीं होता, बल्कि उसमें नैतिक मूल्यों और नेतृत्व के गुणों का होना आवश्यक है। पुरुषोत्तम योग के अनुसार, सच्चा प्रशासक वही होता है जो निष्पक्षता, धैर्य और सत्यनिष्ठा के साथ कार्य करे।

एक प्रशासक का आचरण आदर्श होना चाहिए, क्योंकि उसके द्वारा स्थापित आदर्शों को पूरा समाज अपनाता है।

**कर्तव्यपरायणता और निष्काम कर्म-**

प्रशासन का एक प्रमुख गुण कर्तव्यपरायणता है। एक कुशल प्रशासक को बिना किसी व्यक्तिगत स्वार्थ के केवल लोक कल्याण के लिए कार्य करना चाहिए। पुरुषोत्तम योग निष्काम कर्म को अत्यंत महत्वपूर्ण मानता है।

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।

मा कर्मफलहेतुर्भूर्मा ते सङ्गोऽस्त्वकर्मणि॥ (गीता 2.47)

अर्थात् तेरा कर्म करने में ही अधिकार है, उसके फलों में नहीं।

इसलिए तू कर्मफल की चिंता मत कर और अकर्मण्यता को मत अपना।

यह श्लोक प्रशासकों को यह सिखाता है कि वे अपने कार्यों में निष्पक्ष रहें और परिणाम की चिंता किए बिना अपने कर्तव्यों का पालन करें।

**पुरुषोत्तम योग और नैतिकता का संबंध-**

**सत्यनिष्ठा और न्यायप्रियता-** नैतिकता प्रशासन का आधार स्तंभ है। यदि किसी प्रशासन में नैतिकता का अभाव हो, तो वहां भ्रष्टाचार और अन्याय बढ़ता है। गीता में स्पष्ट किया गया है कि सच्चा नेतृत्व वही होता है जो सत्य और धर्म के मार्ग पर चलता है।

सत्यं वद धर्मं चर।

अर्थात् सत्य बोलो और धर्म का आचरण करो।

यह उपदेश प्रशासनिक अधिकारियों के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है, क्योंकि सत्य और धर्म के बिना समाज में स्थिरता संभव नहीं है।

**अहंकार का त्याग और विनम्रता-**

अहंकार और स्वार्थ प्रशासन को भ्रष्ट करते हैं। गीता में कहा गया है कि जो व्यक्ति अहंकार से मुक्त होकर कार्य करता है, वही श्रेष्ठ प्रशासक बन सकता है।

**प्रशासन और नैतिकता के सामंजस्य की आवश्यकता-**

**सुशासन और लोककल्याण-** पुरुषोत्तम योग यह सिखाता है कि प्रशासन केवल सत्ता प्राप्त करने का माध्यम नहीं है, बल्कि यह लोककल्याण का एक साधन है। यदि कोई प्रशासक आध्यात्मिक और नैतिक रूप से सशक्त होगा, तो वह निष्पक्ष और न्यायसंगत शासन कर सकेगा।

**शिक्षा और प्रशासनिक प्रशिक्षण में नैतिकता का समावेश-**

आज की शिक्षा प्रणाली में नैतिकता और आध्यात्मिकता की शिक्षा का अभाव देखा जा सकता है। यदि प्रशासनिक प्रशिक्षण में गीता के पुरुषोत्तम योग के सिद्धांतों को शामिल किया जाए, तो इससे समाज में नैतिकता और सुशासन को बढ़ावा मिल सकता है।

पुरुषोत्तम योग केवल आध्यात्मिकता और मोक्ष प्राप्ति का मार्ग नहीं है, बल्कि यह प्रशासन और नैतिकता में भी अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यदि प्रशासनिक अधिकारी इस योग के सिद्धांतों को अपनाएं, तो वे एक निष्पक्ष, सत्यनिष्ठ और न्यायप्रिय शासन स्थापित कर सकते हैं। निष्काम कर्म, सत्य, धर्म और अहंकार त्याग जैसे गुण एक आदर्श प्रशासक के लिए अत्यंत आवश्यक हैं।

श्रीमद्भगवद्गीता के इस अध्याय का संदेश केवल व्यक्तिगत आत्म-ज्ञान तक सीमित नहीं, बल्कि यह सामाजिक न्याय और सुशासन के लिए भी अत्यंत महत्वपूर्ण है। यदि प्रशासनिक व्यवस्था में इन सिद्धांतों का समावेश किया जाए, तो इससे न केवल भ्रष्टाचार समाप्त होगा, बल्कि एक संतुलित और नैतिक समाज का निर्माण भी संभव होगा।

**निष्कर्ष -पुरुषोत्तम योग की प्रासंगिकता:-**

पुरुषोत्तम योग, श्रीमद्भगवद्गीता के पंद्रहवें अध्याय में वर्णित एक गूढ़ तत्त्वज्ञान है, जो मानव जीवन के अंतिम लक्ष्य आत्मबोध और परमात्मा की प्राप्ति की ओर इंगित करता है। इस योग का महत्व केवल आध्यात्मिकता तक सीमित नहीं है, बल्कि यह प्रशासन, नैतिकता, शिक्षा और समाज के अन्य महत्वपूर्ण क्षेत्रों में भी अत्यंत प्रासंगिक है।

**आत्मबोध और नैतिकता-**

पुरुषोत्तम योग यह स्पष्ट करता है कि प्रत्येक व्यक्ति अपने वास्तविक स्वरूप को जाने और अहंकार का त्याग करे। नैतिकता की दृष्टि से यह

आवश्यक है कि मनुष्य अपने कर्तव्यों का पालन निष्काम भाव से करे और सत्य, धर्म एवं न्याय के मार्ग पर चले।

उद्धरेदात्मनाऽत्मानं नात्मानमवसादयेत्।

आत्मैव ह्यात्मनो बन्धुरात्मैव रिपुरात्मनः ॥ (गीता 6.5)

अर्थात् मनुष्य को स्वयं अपने द्वारा ही ऊपर उठना चाहिए, स्वयं को नीचे नहीं गिराना चाहिए क्योंकि आत्मा ही मनुष्य का मित्र है और आत्मा ही उसका शत्रु भी है।

**सुशासन और प्रशासन में योगदान-**

एक आदर्श प्रशासक वही होता है जो स्वार्थ से मुक्त होकर निष्पक्षता और समर्पण के साथ कार्य करे। गीता का यह योग प्रशासकों को सिखाता है कि उन्हें पुरुषोत्तम (श्रेष्ठ) बनने का प्रयास करना चाहिए, जिससे वे समाज के लिए आदर्श बन सकें।

**शिक्षा और आध्यात्मिकता में योगदान-**

आज की शिक्षा प्रणाली में आध्यात्मिकता और नैतिकता का अभाव है। पुरुषोत्तम योग यह संदेश देता है कि शिक्षा केवल बौद्धिक विकास तक सीमित न रहकर आंतरिक ज्ञान और चरित्र निर्माण का साधन भी बने।

**निष्काम कर्म का महत्व-**

किरसी भी क्षेत्र में सफलता प्राप्त करने के लिए मनुष्य को निष्काम कर्म के सिद्धांत का पालन करना आवश्यक है। यह सिद्धांत जीवन को संतुलित और शांतिपूर्ण बनाता है।

**निष्कर्षतः-**

पुरुषोत्तम योग केवल आध्यात्मिक उत्थान का मार्ग नहीं है, बल्कि यह जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में संतुलन, अनुशासन और उच्च नैतिक मूल्यों को स्थापित करने का एक साधन भी है। यदि समाज, प्रशासन और शिक्षा में इस योग के सिद्धांतों को अपनाया जाए, तो एक न्यायसंगत, नैतिक और प्रगतिशील समाज का निर्माण संभव हो सकता है।

**संदर्भ सूची:-**

**श्रीमद्भगवद्गीता पर आधारित मूल ग्रंथ एवं टीकाएँ:-**

1. श्रीमद्भगवद्गीता : व्यासदत्त (महाभारत से संकलित)
  2. श्रीमद्भगवद्गीता भाष्य : आदि शंकराचार्य
  3. गीता रहस्य : बाल गंगाधर तिलक
  4. भगवद्गीता यथारूप : ए.सी. भक्तिवेदांत स्वामी प्रभुपाद
  5. श्रीमद्भगवद्गीता : गीता प्रेस, गोरखपुर
  6. श्रीमद्भगवद्गीता प्रवचन : स्वामी विवेकानंद
  7. श्रीमद्भगवद्गीता संदेश : स्वामी चिन्मयानंद
  8. योग, कर्म और पुरुषोत्तम योग : स्वामी रामसुखदास
- प्रशासन, नैतिकता एवं गीता के सिद्धांतों पर आधारित पुस्तकें:-**
9. गीता और प्रशासनिक नैतिकता : डॉ. राधेश्याम द्विवेदी
  10. भगवद्गीता एंड मैनेजमेंट : स्वामी परमानंद सरस्वती
  11. गीता एथिक्स एंड गवर्नेंस : डॉ. संजय चतुर्वेदी
  12. मॉडर्न पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन एंड भगवद्गीता : प्रो. के.एन. त्रिपाठी
  13. लीडरशिप इन भगवद्गीता : स्वामी अनंतानंद
  14. द गीता वे ऑफ लीडरशिप : डॉ. गौतम देशपांडे

**आध्यात्मिकता, शिक्षा और गीता के आदर्शों पर पुस्तकें:-**

15. गीता एंड मॉडर्न एजुकेशन : प्रो. रमेश शर्मा

16. एजुकेशन इन भगवद्गीता : डॉ. एस.के. गोस्वामी
17. नैतिक शिक्षा और गीता दर्शन दृ. डॉ. विजय मिश्रा
18. गीता एंड ह्यूमन वैल्यूज : प्रो. राकेश वर्मा
19. गीता, योग एंड स्पिरिचुअल लिविंग : स्वामी मुक्तानंद

## अघोरनी गंगे

आरती सिंह

डॉ. मौसमी परिहार

1. शोधार्थी, हिंदी विभाग, रविंद्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय, भोपाल, मप्र.
2. एसोसिएट प्रोफेसर, हिंदी विभाग, रविंद्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय, भोपाल, मप्र.

**शोध सार:-** धार्मिक मान्यता के अनुसार वेद, पुराण, रामायण, महाभारत और कई धार्मिक ग्रंथों में गंगा की महिमा का वर्णन मिलता है इसीलिए गंगा को देवनदी भी कहा गया है। हिंदू धर्म में होने वाले विभिन्न धार्मिक कार्यक्रम जैसे की पूजा-अर्चना, अभिषेक, शुद्धिकरण गंगाजल के बिना अधूरे माने जाते हैं। मान्यता है की गंगा नदी स्नान करने से पापों का नाश होता है और अनंत पुण्य फल की प्राप्ति होती है।

गंगा नदी का मानचित्र देखे तो गंगा नदी की लंबाई 2510 किलोमीटर है। यह लंबाई भारत के हिस्से की है। यह उत्तराखंड के पश्चिमी हिमालय से निकलकर दक्षिणी पूर्व की ओर बहती है। गंगा की कई सहायक नदियां हैं। गंगा बीच में अनेकों नदियों को अपने भीतर समाहित करती हुई बहती है जैसे यमुना, घाघरा, कोसी, गंडक, काशी, रामगंगा, सरयू, ताप्ती, बेतवा, सोन है। गंगा नदी के मानचित्र के हिसाब से देखे तो गंगा भागीरथी के रूप में गंगोत्री से निकाल कर देवप्रयाग में अलकनंदा से मिलकर गंगा बनती है। इलाहाबाद के निकट यमुना, गंगा एवं सरस्वती नदियां मिलती है जिसे संगम कहा जाता है। ब्रह्मपुत्र नदी बांग्लादेश में जमुना के नाम से भागीरथ में मिलती है।

**प्रस्तावना:-** गंगा भारतीय जनमानस की आस्था का जीवंत प्रतीक है। गंगा सदियों से हमारी सभ्यता संस्कृति एवं आध्यात्मिकता का केंद्र रही है। भारतीय संस्कृति और सभ्यता का विकास गंगा यमुना जैसी पवित्र नदियों के तट पर या उनके आस-पास ही हुआ। इसीलिए गंगा - किनारे पर बसे तीर्थ स्थान में गंगा की महिमा के गीत गाए जाते हैं, जिनमें गंगा को मुक्ति दयानी मानकर कहा गया है-

मुक्तिदा मानी गई है, स्वर्गदा गंगा नदी।

जल नहीं, जल है सुधासम, सर्वथा सर्वत्र ही।।

गंगा का जल वर्षों तक बोटलों, डिब्बों में बंद रहने के बाद भी खराब नहीं होता है। गंगा नदी को पवित्रता की निशानी माना जाता है। साल में लाखों लोग इस नदी पर स्नान, पूजा पाठ तथा भजन कीर्तन करते हैं। गंगा को भागीरथी, मंदाकिनी वह देवनदी उपनामों से जाना जाता है। तथा भागीरथी नाम राजा भगीरथी के नाम पर पड़ा। राजा भगीरथ (इक्ष्वाकुवंशीय सम्राट दिलीप के पुत्र) ने अपने साठ हजार पुत्रों का उद्धार करने के लिए भगवान शंकर से गंगा को लेकर आए थे।

**मुख्य शब्द:-** शुद्धिकरण, उद्धार, पौराणिक, तपस्या, अंतिम संस्कार, अनुष्ठान, सांस्कृतिक, श्रद्धालु, आत्माएं, प्रवाहित, त्याग, पुर्वज, अविरल, मुक्ति।

**पुराण और साहित्य में गंगा:-** गंगा नदी के साथ अनेक पौराणिक

कथाएं जुड़ी हुई हैं। मिथकों के अनुसार ब्रह्म ने विष्णु के पैर के पसीने की बूंदों से गंगा का निर्माण किया। त्रिमूर्ति के दो सदस्यों के स्पर्श के कारण यह पवित्र समझा गया। एक अन्य कथा के अनुसार राजा सगर ने जादुई रूप से साठ हजार पुत्रों की प्राप्ति की एक दिन राजा सगर ने देवलोक पर विजय प्राप्त करने के लिए एक यज्ञ किया। यज्ञ के लिए घोड़ा आवश्यक था जो ईर्ष्यालु इंद्र ने चुरा लिया था। सगर ने अपने सारे पुत्रों को घोड़े की खोज में भेज दिया अंत में उन्हें घोड़ा पाताल लोक में मिला जो एक ऋषि के समीप बंधा था। सगर के पुत्रों ने यह सोचकर कि ऋषि ही घोड़े के गायब होने की वजह है उन्होंने ऋषि का अपमान किया। तपस्या में लीन ऋषि ने हजारों वर्ष बाद अपनी आंखें खोली और उनके क्रोध से सगर के सभी साठ हजार पुत्र जलकर वहीं भस्म हो गए। सगर के पुत्रों की आत्माएं भूत बनकर विचरने लगी क्योंकि उनका अंतिम संस्कार नहीं किया गया था। सगर के पुत्र अंशुमान ने आत्माओं की मुक्ति का असफल प्रयास किया और बाद में अंशुमान के पुत्र दिलीप ने भी। भगीरथ राजा दिलीप की दूसरी पत्नी के पुत्र थे। उन्होंने अपने पूर्वजों का अंतिम संस्कार किया। उन्होंने गंगा को पृथ्वी पर लाने का प्रण किया जिससे अनेक अंतिम संस्कार कर, राख को गंगाजल में प्रवाहित किया जा सके और भटकती आत्माएं स्वर्ग में जा सके। भगीरथ ने ब्रह्मा की घोर तपस्या की ताकि गंगा को पृथ्वी पर लाया जा सके। ब्रह्मा प्रसन्न हुए और गंगा को पृथ्वी पर भेजने के लिए तैयार हुए और गंगा पृथ्वी पर और उसके बाद पाताल में जाने का आदेश दिया ताकि सगर के पुत्रों की आत्माओं की मुक्ति संभव हो सके। तब गंगा ने कहा कि मैं इतनी ऊंचाई से जब पृथ्वी पर गिरूंगी, तो पृथ्वी इतना वेग कैसे सा पाएगी? तब भगीरथ ने भगवान शिव से निवेदन किया, और उन्होंने अपनी खुली जटाओं में गंगा के वेग को रोक कर, एक लट खोल दी जिससे गंगा की अविरल धारा पृथ्वी पर प्रभावित हुई। वह धारा भगीरथ के पीछे-पीछे गंगा सागर संगम तक गई, जहां सगर पुत्रों का उद्धार हुआ। शिव के स्पर्श से गंगा और भी पवन हो गई और पृथ्वी वासियों के लिए बहुत ही श्रद्धा का केंद्र बन गई। पुराणों के अनुसार स्वर्ग में गंगा मंदाकिनी और पाताल में भागीरथी कहते हैं।

**हिंदू धर्म में क्यों पवित्र है गंगा नदी और गंगाजल वेद पुराणों में बताया गया महत्व?**

वैदिक इतिहास में गंगा नदी का उल्लेख मिलता है। वेद-पुराणों और शास्त्रों के अनुसार गंगा सभी नदियों में श्रेष्ठ है और गंगाजल सबसे पवित्र। महाभारत और गीता में भी गंगा नदी का वर्णन मिलता है।

**वेद वाणी:-** गंगा नदी भारत की सांस्कृतिक विरासत में से एक है। गंगा न सिर्फ श्रेष्ठ व पवित्र नदी है बल्कि भारत को एक सूत्र में बांधने का श्रेय

भी गंगा को है। वेद पुराणों में तो गंगा को बारंबार तीर्थमयी कहा गया है। प्रथम वेद ऋग्वेद में गंगा का जिक्र किया गया है इसके बाद के तीन वेद यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद में भी गंगा का उल्लेख पवित्र नदी के रूप में किया गया है। केवल भारत ही नहीं बल्कि पूरे विश्व भर में भी ऐसी कोई नदी नहीं होगी जिसे इतना महत्व और श्रेय मिलता हो। यही कारण है की गंगा को केवल जल का स्रोत नहीं माना जाता बल्कि देवी के समान इसकी पूजा की जाती है। हिंदू धर्म में धार्मिक अनुष्ठान जैसे कई कार्य बिना गंगाजल के पूर्ण व शुद्ध नहीं माने जाते हैं।

**वेद पुराणों में गंगा नदी और गंगाजल का महत्व:-**

गीता में श्री कृष्ण ने कहा है- स्रोतसामरिम जाहन्वी

अर्थ-नदियों में मैं जाहन्वी (गंगा) हूँ।

महाभारत में कहा है- 'पुनाति कीर्तिता पापं द्रष्टा भद्र प्रयच्छति।

अवगाढा च पीता च पुनात्या सप्तम कुलम्।'

अर्थ-गंगा का उच्चारण करने से पापों का नाश होता है दर्शन करने वालों लोगों का गंगा कल्याण करती है और स्नान करने वालों की साथ पीडिया तक को गंगा पवित्र करती है।

नृसिंह पुराण के अनुसार- 'गंगे तव दर्शनात् मुक्तिः।'

अर्थ- गंगा तेरे दर्शन मात्र से ही मुक्ति मिलेगी।

**उत्सव व सांस्कृतिक एकता:-**भारत की अनेक धार्मिक अवधारणाओं में गंगा नदी को देवी के रूप में निरूपित किया गया है। बहुत से पवित्र तीर्थ स्थल गंगा नदी के किनारे पर बसे हुए हैं जिनमें वाराणसी और हरिद्वार सबसे प्रमुख है। गंगा नदी को भारत की पवित्र नदियों में सबसे पवित्र माना जाता है एवं यह मान्यता है की गंगा में स्नान करने से मनुष्य के सारे पापों का नाश हो जाता है। मरने के बाद लोग गंगा में अपनी राख विसर्जित करना मोक्ष प्राप्ति के लिए आवश्यक समझते हैं, यहां तक की कुछ लोग गंगा के किनारे ही प्राण विसर्जन या अंतिम संस्कार की इच्छा भी रखते हैं। इसके घाटों पर लोग पूजा अर्चना करते हैं और ध्यान लगाते हैं। गंगाजल को पवित्र समझा जाता है तथा समस्त संस्कारों में उसका होना आवश्यक है। पंचामृत में भी गंगाजल को एक अमृत माना गया है। अनेक पर्वों और उत्सवों का गंगा से सीधा संबंध है। उदाहरण के लिए मकर संक्राति, कुंभ और गंगा दशहरा के समय गंगा में नहाना या केवल दर्शन ही कर लेना बहुत महत्वपूर्ण समझा जाता है। इसके तटों पर अनेक प्रसिद्ध मेलों का आयोजन किया जाता है। और अनेक प्रसिद्ध मंदिर गंगा के तट ही बने हुए हैं। महाभारत के अनुसार मात्र प्रयाग में माघ मास में गंगा-यमुना के संगम पर तीन करोड़ दस हजार तीर्थों का संगम होता है। ये तीर्थ स्थल संपूर्ण भारत में सांस्कृतिक एकता स्थापित करते हैं। गंगा को लक्ष्य करके अनेक भक्ति ग्रंथ लिखे गए हैं जिनमें श्रीगंगासहस्रनामस्तोत्र और आरती सबसे लोकप्रिय है। अनेक लोग अपने दैनिक जीवन में श्रद्धा के साथ इनका प्रयोग करते हैं। गंगोत्री तथा अन्य स्थानों पर गंगा के मंदिर और मूर्तियां भी स्थापित हैं, जिनके दर्शन कर श्रद्धालु स्वयं को कृतार्थ समझते हैं।

**गंगा नदी का उद्गम-स्थल:-**इसका उद्गम उत्तराखंड गढ़वाल क्षेत्र से गंगोत्री ग्लेशियर से एक नदी निकलती है जिसका नाम भागीरथी तथा दूसरी तरफ से उत्तराखंड के उत्तरकाशी जिले में संतो पथ ग्लेशियर से अलकनंदा नाम से एक नदी निकलती है और यह दोनों आकर आपस में उत्तराखंड के हरिद्वार में मिल जाती है, जिसे देवप्रयाग बोला जाता है। वहां से इसका नाम गंगा पड़ता है। प्रयाग पांच प्रकार के होते हैं।

विष्णुप्रयाग, नंदप्रयाग, कर्णप्रयाग, रुद्रप्रयाग और देवप्रयाग।

विष्णुप्रयाग - धौली गंगा तथा अलकनंदा के संगम को विष्णुप्रयाग कहते हैं।  
नंदप्रयाग - नंदाकिनी तथा अलकनंदा नदी के संगम को नंदप्रयाग कहते हैं।  
कर्णप्रयाग - अलकनंदा तथा पिंडार नदी के संगम को कारण प्रयोग कहते हैं।  
रुद्रप्रयाग - नंदाकिनी तथा अलकनंदा के संगम को रुद्रप्रयाग कहते हैं।  
देवप्रयाग - अलकनंदा तथा भागीरथी के संगम को देवप्रयाग कहते हैं।

इस संगम स्थल के बाद इस नदी को गंगा नदी के नाम से जाना है। गंगा नदी की कई सहायक नदियां हैं। इसके दाहिने तरफ से मिलने वाली सहायक नदी सोमनदी, यमुना व महानंदा तथा बाएं से कोसी, गंडक, करनाली, महाकाली, गोमती वह हुगली है। अंत में यह एक बड़े बेसिन का निर्माण करती है तत्पश्चात् बंगाल की खाड़ी में गिर जाती है।

गंगा नदी भारत के पांच राज्यों से होकर गुजरती है उत्तराखंड, उत्तर प्रदेश, बिहार, झारखंड वह पश्चिम बंगाल। सरकार के अनुसार 97 नगर की पहचान की गई है जो इसके किनारे बसे हैं। उत्तराखंड में बसे मुख्य शहर जैसे हरिद्वार, ऋषिकेश, तपोवन, श्रीनगर, उत्तरकाशी, जोशीमठ, उत्तर प्रयाग, गोचर कीर्ति नगर व बद्रीनाथ।

**निष्कर्ष:-**यदि गंगा न होती तो हमारे देश का एक महत्वपूर्ण भाग बंजर तथा रेगिस्तान होता। इसीलिए गंगा उत्तर भारत की सबसे पवित्र व महत्वपूर्ण नदी है। गंगा नदी भारतीय संस्कृति का भी अभिन्न अंग है। भारत के प्राचीन ग्रंथों: जैसे वेद, पुराण, महाभारत इत्यादि में गंगा की पवित्रता का वर्णन है। गंगा सबका गंदगी लेके उनका पाप लेके उनको मुक्त कर देती है। अघोर के रूप की तरह जिस तरह अघोर सबके पाप को अपने अंदर लेकर के उनको पवित्र बना देता है जिस तरह अघोर किसी को नहीं त्यागता उसी तरह गंगा भी किसी को नहीं त्यागती सबको अपना लेती है और पवित्र कर देती है। गंगा का स्वरूप है कि सबकी गंदगी सबके पाप को अपने अंदर ले लेना और उन्हें मुक्त कर पवित्र बना देना बिल्कुल उसी तरह जिस तरह अघोर करता है। जो किसी को नहीं त्यागता सबको अपने अंदर ले लेता है। गंगा और अघोर यह दोनों ही शिव से निकले हैं एक उनकी जटाओं से तो एक उनके पांच मुखों में से एक है।

**संदर्भ सूची:-**

1. जय गंगा-राधाकांत भारती
2. गंगा देवी-विकिपीडिया
3. गंगा की उत्पत्ति कथा- भजन संग्रह इन
4. अध्यात्म गंगा की धारा- श्री कृष्णकांत शर्मा जी
5. पुराण और साहित्य में गंगा- भारतकोश, ज्ञान का हिंदी महासागर

## शरद सिंह के उपन्यास कस्बाई सिमोन में लिव इन पर उपजे सवाल

प्रभा शर्मा

डॉ. अनामिका द्विवेदी

1. शोधार्थी, हिंदी विभाग, ए. के. पी. (पी.जी.) कॉलेज, खुर्जा, बुलन्दशहर, उप्र.
2. एसोसिएट प्रोफेसर, हिंदी विभाग, ए. के. पी. (पी.जी.) कॉलेज, खुर्जा, बुलन्दशहर, उप्र.

शरद सिंह वर्तमान समय की एक महत्वपूर्ण लेखिका है। जो हिन्दी कथा साहित्य में एक महत्वपूर्ण स्थान रखती हैं। कथा साहित्य लेखन के साथ-साथ वे एक कवयित्री भी हैं। उन्होंने के अपने उपन्यासों के माध्यम से समाज के विभिन्न वर्गों के चरित्रों को उभारने के साथ-साथ उनकी मानसिक स्थिति को भी बढ़ी सूक्ष्मता के साथ दर्शाया है। उपन्यासों के साथ-साथ उन्होंने मन को छू जाने वाली कहानियों को भी लिखा है। अपने उपन्यासों के माध्यम से उन्होंने लिव इन के प्रभाव और उसकी समाज में स्थिति, बेडिया, समाज में औरतों की समाजिक, आर्थिक स्थिति के साथ-साथ देह व्यापार जैसी कुप्रथाओं को दर्शाया है। औरतों के साथ-साथ उन्होंने मनुष्य के साथ हो रहे अपराधों और दयनीय स्थिति का भी उन्होंने बखूबी चित्रण किया है। शरद सिंह ने सामयिक मुद्दों पर खूब लेखनी चलायी है। अपने साहित्य लेखन के द्वारा शरद सिंह ने विभिन्न चरित्रों के माध्यम से उनकी सामाजिक, आर्थिक, मनोवैज्ञानिक स्थिति को दर्शाया है। साथ में उनके जीवन को यथार्थ से जोड़कर उनकी यातनाओं को पाठकों के समक्ष प्रस्तुत किया है। जिससे पाठक उनकी जीवन स्थिति को जान सकें। उनके विषय में अधिक से अधिक समझ सकें।

शरद सिंह का जन्म मध्यप्रदेश के जिला पन्ना में हुआ था। उसका जन्म 29 नवम्बर 1963 को हुआ। शरद सिंह जब बहुत छोटी थी, तभी इनके पिता श्री रामधारी सिंह का निधन हो गया था। इनका पालन पोषण इनकी माता जी श्रीमती विद्यावती सिंह ने किया। इनकी शिक्षा (शरद सिंह) की ननिहाल में हुई। इन्होंने बी०ए० सागर विश्वविद्यालय से किया। अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय रीवा से मध्यकालीन भारतीय इतिहास से एम०१० प्रथम वर्ष किया तथा द्वितीय एम०ए० वर्ष प्राचीन भारतीय इतिहास एवं पुरातत्व के विषय से किया तत्पश्चात् बी०ए०३० किया। खुजराहो की मूर्तिकला का सौन्दर्यात्मिक अध्ययन विषय में पी०एच०डी०। तत्पश्चात् निरन्तर लेखन कार्यों में अग्रसर है।

लिव इन रिलेशनशिप से तात्पर्य लिव इन रिलेशनशिप से तात्पर्य यह है कि इसमें स्त्री और पुरुष बिना विवाह के एक घर में लम्बे समय तक रह सकते हैं, जब तक वे चाहें।

लिव इन रिलेशनशिप से सम्बन्धित कानून लिव इन रिलेशनशिप को हमारा समाज स्वीकार नहीं करता। मगर कानून की बात करें तो न तो यह गैर कानूनी है और न ही अपराध की श्रेणी में आता है। इससे सम्बन्धित कुछ कानून इस प्रकार है-

1. घरेलू हिंसा का कानून- 'Domestic violence Act, 2005 की धारा 2F में लिव इन भी शामिल है। अर्थात् जिस प्रकार विवाहित जोड़ा इस एक्ट की मदद से घरेलू हिंसा से बच सकते हैं। उसी प्रकार लिव इन में भी बचा जा सकता है।'
2. CRPC की धारा 125 के तहत भरण पोषण का अधिकार-इस एक्ट के तहत

वे औरत जिन्हें उनके पुरुष साथी द्वारा छोड़ दिया है उन्हें पत्नी का दर्जा मिले।'<sup>2</sup>

3. सम्पत्ति के उत्तराधिकारी के अधिकार- 'जिस प्रकार विवाहित स्त्री के पति की मृत्यु के पश्चात् पत्नी का उसकी सम्पत्ति पर अधिकार होता है वैसे ही रिलेशनशिप अधिक समय तक चले तो वह एक प्रकार से विवाह माना जायेगा।'<sup>3</sup>

4. सन्तान का प्रश्न- राइट टू प्रापर्टी एक्ट के अनुसार लिव इन से उत्पन्न हुई सन्तान को अवैध नहीं माना जायेगा, जब उनके माँ-बाप लम्बे से साथ रह रहे हों।

शरद सिंह के उपन्यास कस्बाई सिमोन का परिचय इस प्रकार है-

कस्बाई सिमोन-इस उपन्यास का प्रकाशन वर्ष सन् 2018 है। यह उपन्यास लिव इन रिलेशनशिप पर आधारित है। इसका मुख्य बिन्दु स्त्री चेतना है। इस उपन्यास में स्त्री जीवन से सम्बन्धित सामाजिक आर्थिक व मानसिक चुनौतियों को सुगन्धा नामक पात्र द्वारा दर्शाया गया है। जो स्त्री के अधिकारों को जानती है तथा स्वयं एक कामकाजी स्त्री है। लेकिन लिव इन में रहना चाहती है। क्यों रहना चाहती है? क्योंकि उसके पिता का व्यवहार उसकी माँ के प्रति अत्यन्त कठोर था। उसके पिता एक प्राध्यापक थे। उनका अपनी छात्राओं से अनैतिक सम्बन्ध था। जिससे सुगन्धा का विवाह से विश्वास उठ गया। इसके पश्चात् वह रितिक नाम के व्यक्ति के साथ लिव इन रिलेशनशिप में रहने लगती है। वह स्वयं के जीवन को सिमोन के जीवन जैसा बनाना चाहती है। लेकिन वह एक कस्बाई सिमोन जैसी बन जाती है। क्योंकि पाश्चात्य समाज की इस प्रथा को भारतीय समाज न तो इसे माना है और न ही इसे कोई महत्व दिया है, जिससे रितिक और सुगन्धा को बार-बार परेशानियों का सामना करना पड़ता है। जैसे पड़ोसियों के ताने सुनना, बार-बार घर बदलना आदि। अन्ततः दोनों मिलकर एक घर खरीद लेते हैं। दोनों साथ में खुशी खुशी रहने लगते हैं, परन्तु स्वयं को पति के रूप में चित्रित करके सुगन्धा पर रौब झाड़ने लगता है। सुगन्धा इससे परेशान हो जाती है और विचार करती है वह स्वयं को रितिक के साथ बंधा हुआ पाती है। वह उस पर अधिकार जमाने का कोई मौका नहीं छोड़ता है इसके पश्चात् दोनों में झगड़े बढ़ जाते हैं और रितिक गुस्से में आकर सुगन्धा को रखैल कह देता है। जिससे वह आहत हो जाती है और रितिक को छोड़ देती है और सागर चली जाती है।

सागर में उसका परिचय छिन्दवाड़ा के प्राध्यापक डॉ० ऋषभ जैन से होती है। वह विवाहित है। परन्तु सुगन्धा के साथ भी दैहिक सम्बन्ध स्थापित कर लेता है परन्तु उसकी मर्दवादी सोच के कारण सुगन्धा उसे छोड़ देती है। इसके पश्चात् वह विशाल पटेल से जुड़ती है जो थिएटर के अभिनय के साथ साहित्य में भी रुचि रखता है। अपने इस सम्बन्ध से सुगन्धा प्रसन्नता अनुभव करती है और यहीं पर यह उपन्यास समाप्त हो जाता है। कस्बाई सिमोन पाश्चात्य संस्कृति को ध्यान में रखते हुए लिखा गया एक महत्वपूर्ण उपन्यास है। लिव इन पर लिखा

गया यह उपन्यास अनेक सवालों को पाठकों के समक्ष खड़ा करता है जिनमें कुछ सवाल इस प्रकार हैं-

1. समाज में स्त्री का स्थान:-स्त्री और पुरुष दोनों को ही समाज का आवश्यक अंग माना जाता है। लेकिन पुरुष हमेशा से स्त्री को अपने से कमतर आँकता आया है समाज के नियमों का निर्धारण भी पुरुष की मानसिकता के आधार पर किया गया है। स्वयं इस उपन्यास की पात्र सुगन्धा इस बात को मानते हुए कहती है कि स्त्री-पुरुष के बीच प्रथम और दोयम का भेद जाने कब मिटेगा? पुरुष सदा प्रथम बना रहना चाहता है और स्त्री दोयम बने रहने का समझौता करती रहती है। चाहे झुग्गी-झोपड़ी में रहने वाली पत्नी, हो या अमेरिका के व्हाइट हाउस में रहने वाली पत्नी, वह अपने पति की रंगरेलियों माफ़ कर देती है लेकिन पति ऐसा कभी नहीं करता है। चाहे वह भुखमरी में ही दिन क्यों न बिता रहा हो।<sup>4</sup> इस प्रकार स्त्री हमेशा अपने स्थान के लिए संघर्ष करती रहती है और पुरुष हमेशा उसे निचले पायदान पर देखकर खुश होता रहता है। इसके अलावा चाहे स्त्री विवाहित हो या आर्थिक रूप से समर्थ हो या न हो लेकिन उसकी स्थिति में कोई परिवर्तन नहीं होता। अगर परिवर्तन होता तो लेखिका स्वयं कहती हैं कि उस स्थिति में न तो देहेज हत्याएँ होती, न ही मादा भ्रूण हत्या और न महिलाओं के विरुद्ध अपराध का ग्राफ़ इतना ऊपर जा पाता।<sup>5</sup>

2. लिव इन और स्त्री स्वातन्त्र्य:-स्त्री और पुरुष दोनों के लिए स्वतन्त्रता की परिभाषा अलग-2 है। पुरुष की स्वतन्त्रता उसके दृष्टिकोण पर निर्भर करती है लेकिन स्त्री की स्वतन्त्रता पुरुष के अधिकार में होती है। वह जब चाहे स्त्री को उसकी स्वतन्त्रता की सीमाओं को ज्ञात कराता रहता है। सुगन्धा स्वयं इन सबको समझती हुई कहती है कि इन पाँच वर्षों के साथ मैं मैंने रितिक के स्वभाव में होने वाले परिवर्तनों को महसूस किया था। अब वह मुझे झिड़कने भी लगा था। कई बार बिल्कुल परम्परावादी पति की तरह। इधर कुछ समय से मैं अनुभव कर रही थी कि हमारा असामाजिक रिश्ता सामाजिक आकार लेता जा रहा था। दायित्वों को लेकर मुझसे रितिक की अपेक्षाएँ बढ़ गई हैं। वह मुझ पर अधिकार जमाने लगा था।<sup>6</sup>

3. सन्तान का वैध या अवैध होना:-लिव इन पाश्चात्य संस्कृति की संस्था है इसे हमारे देश में न तो स्वीकार किया है और न ही आगे यह पूर्ण रूप से स्वीकार किया जा सकता है। बल्कि यह यहाँ सीमित दायरे में ही सिमट रह सकता है। क्योंकि हमारा समाज परम्परावादी समाज है इसमें विवाह प्रणाली को विशेष महत्व दिया गया है तथा सन्तान भी वही मान्य है जो विवाह के उपरान्त पैदा हुई है। यदि विवाह से पहले सन्तान उत्पन्न हो जाती है, न तो उसे समाज में सम्मान मिलता है और न ही लोगों द्वारा उसे अपनाया जाता है। सुगन्धा इसको स्वीकार करती हुई कहती है कि हम शादी के बिना बच्चे को जन्म नहीं दे सकते हैं। वह वैध होकर भी अवैध कहलाएगा। यह मुझे स्वीकार नहीं है।<sup>7</sup>

4. लिव इन और पुरुषवादी मानसिकता:-पुरुष हमेशा स्त्री से अपेक्षा करता रहता है कि स्त्री को सदैव सीमित दायरे में रखे और उस पर हमेशा अपनी धौंस जमाकर रखे और उसे याद दिलाता रहे कि स्त्री उसे कमतर है। वह हमेशा चाहता है कि स्त्री उसे हमेशा प्रसन्न रखे और वह उसे रौब में रखकर याद दिलाये कि वह उसके अधीन है। स्वयं लिव इन रिलेशनशिप में रितिक के साथ रहने वाली सुगन्धा इन सभी चीजों को महसूस करती है और अपने आप की स्वतन्त्रता पर प्रश्न खड़ा करती हुई कहती है कि रितिक के विचारों में निशान पट गया था। मैं जहाँ एक स्वतन्त्र औरत के बदले पत्नी की तरह जीवन जीने लगी थी। वहीं रितिक कभी पति की तरह पेश आता तो असली पति बनने के लिए छटपटाने लगता।<sup>8</sup>

5. समाज द्वारा अस्वीकार्य:-पश्चिम देश चाहे कितना भी आगे क्यों न बढ़ गए हों परन्तु हमारी भारतीय संस्कृति में प्रेम सम्बन्धों को आज भी गलत

माना जाता है और समाज द्वारा उन्हें स्वीकार नहीं किया जाता है। जो लोग लिव इन में रहते हैं उनके प्रति लोगों का दृष्टिकोण बदल जाता है। उसे हीन दृष्टि से देखा जाता है। जब सुगन्धा की भी उसे समझाती है तो वह कहती है कि ठीक है तुम जैसे चाहो रहो, फिर भी याद रखना कि हमारा समाज अभी भी पुरानी परम्पराओं का कट्टर पोषक है। वह तुम्हें चैन से जीने नहीं देगा। इस बार भी के कथन का अहसास सुगन्धा को तब होता है, जब उसकी मकान मालकिन उससे विवाह सम्बन्धी प्रश्न करती है। समाज को पुरानी परम्पराओं का कट्टर पोषक निरूपित करने वाली माँ की बात मुझे पहली बार उस दिन याद आई जब हमारी नई मकान मालकिन ने मुझसे कहा था कि सुगन्धा जी आप शादी क्यों नहीं कर लेती रितिक जी से?<sup>10</sup>

6. लिव इन और समझौता:-जब पुरुष और स्त्री दोनों ही लिव इन में रहते हैं तो स्त्री को बार-बार समझौता करने पड़ते हैं। चाहे वे समझौते दबाब में किए गए हों, लेकिन करने पड़ते हैं। चाहे स्त्री का रहन-सहन सब पुरुष के अधिकार में होना चाहिए। यदि वह उस अधिकार से आगे बढ़ती है तो उसे ताने के द्वारा बार-बार कमजोर किया जाता है। मैं अपने मित्रों के साथ स्वतन्त्रतापूर्वक उठ बैठ नहीं सकती हूँ। मेरे मित्रों को लेकर रितिक के ताने मेरे हृदय को जब तब छलनी करते रहते हैं।<sup>11</sup>

लिव इन रिलेशनशिप के गुण-

1. साथ रहने पर गहरी समझ बढ़ती है और खुद को सुधारने के साथ-साथ आप अपने पार्टनर को अच्छी प्रकार से समझ सकते हैं।
2. इसमें स्वतन्त्रता होती है और किसी भी वस्तु के लिए रोक-टोक नहीं होती है।
3. इसमें घरेलू काम से लेकर आर्थिक जिम्मेदारियों को बाँटा जाता है। जिसने बिना झगड़ा हुए आराम से साथ में रहा जा सकता है।

लिव इन रिलेशनशिप के दोष-

यह रिलेशनशिप आसानी से टूट जाती है। इसमें किसी का कोई भी दबाव नहीं होता है।

1. 2. आर्थिक रूप से सक्षम न होने पर दोनों व्यक्तियों में झगड़े की सम्भावना अधिक बढ़ जाती है।
3. समाज के द्वारा लिव इन रिलेशनशिप को इतना सम्मान नहीं मिलता जितना विवाह को।
4. संतान को भी यहाँ वह स्थान प्राप्त नहीं होता जो विवाहित लोगों की सन्तानों को प्राप्त होता है।

सन्दर्भ सूची:-

1. www.Janstta.Com
2. www.Janstta.Com
3. www.Janstta.Com
4. शरद सिंह कस्बाई सिमोन पृष्ठ संख्या- 153-154, सामायिक प्रकाशन 3320-21 जटवाडा, नेताजी सुभाष मार्ग दरियागंज नई दिल्ली-110002, संस्करण 2018
5. तदुपरिवत पृष्ठ संख्या-8
6. तदुपरिवत पृष्ठ संख्या-147-148
7. तदुपरिवत पृष्ठ संख्या-161
8. तदुपरिवत पृष्ठ संख्या-161
9. तदुपरिवत पृष्ठ संख्या-108
10. तदुपरिवत पृष्ठ संख्या-109
11. तदुपरिवत पृष्ठ संख्या-148

## डॉ. देवेन्द्र दीपक के नाटक 'भूगोल राजा का : खगोल राजा का' में राजनीतिक परिस्थितियाँ प्रतिभा पूजा

शोधार्थी, बरकतउल्लाह विश्वविद्यालय, भोपाल, मप्र.

सारांश:-डॉ. देवेन्द्र दीपक साहित्य-शिल्पी हैं। उनकी प्रतिभा बहुआयामी है। वे कविता लिखते हैं, आलोचना लिखते हैं। साहित्य की सभी विधाओं को अपनी प्रतिभा का प्रसाद वितरित करते हैं। साहित्य में जब भी मूल्यपरक सृजन पर विचार होता है, व्यक्तित्व महनीय हो उठता है। होता यह है कि रचनाकार उस मिट्टी से, उस समाज से और उस वर्ग से, जिसमें वह रमा-बसा रहा है, अनिवार्यतः व्यवहारवाद के वशीभूत होकर शोभन दिखने के लिए अथवा अपना किसी तम्बू में बलात् प्रवेश बनाए रखने के लिए। इस स्थिति में या तो वह अपने उच्चतर वर्ग की मानसिकता को ओढ़ लेता है या फिर किंकर्तव्यविमूढ़ता की स्थिति में भटक जाता है। दोनों ही स्थितियों में उसके सृजन को, उसके कर्म की, कर्मभूमि की और सहकर्मियों के सान्निध्य की ऊर्जा से वंचित रहने के लिए अभिशास होना पड़ता है। परिणामस्वरूप उसका अपना जीवनानुभव भी किसी निष्कर्ष पर पहुँचने में असमर्थ रहता है। वह अपनी जन्मदात्री धरित्री से टूटकर पराया तो हो ही जाता है, उच्चतर श्रेणी की उपलब्धियों के भोग से सर्वथा अपरिचित होने के कारण उसके निष्कर्षों को भी आत्मसात् करने में अक्षम हो जाता है।

यह अपने समाज की पीड़ा को जैसे विस्मृत-सा कर देता है; और रचना में नाट्य सा रचने लगता है। ऐसे में किसी युगान्तरकारी सृजन की अपेक्षा व्यर्थ हो जाती है। काव्य में फुल्लेरापन, बनावट, सजावट और तरावट का इतना प्राचुर्य हो जाता है कि शब्द-गुल्मों की बहार उसकी दृष्टि को ओझल कर देती है। ऐसे में सृजन में पूर्णता आ ही नहीं पाती और एक ऐसे रक्तालोक पुरुष की अवतारणा, एक ऐसे काम्य मनु की प्रतिकृति उभर ही नहीं पाती जो हर युग में कांक्ष्य और वांछ्य रही है, जिसमें मानवता, मानवीय करुणा, क्षमा, दया और आध्यात्मिक विवेक तो सौंसे ले ही रहा होता है, और जो ऐसे समाज के निर्माण में भागी हो जो उसके समान ही मानवीय हो। यह तभी संभव हो पाता है जब रचना में रचनाकार का व्यक्तित्व समाया हुआ हो।

प्रस्तावना:-'भूगोल राजा का : खगोल राजा का' डॉ. दीपक का काव्य-रूपक है, जो प्रह्लाद के पौराणिक आख्यान पर आधारित होते हुए भी वर्तमान राजनीतिक परिस्थितियों की ओर खुलकर इशारा करता है। जब शासक निर्बन्ध हो जाता है तो कहता है-भू तो मेरी है ही, आकाश भी मेरा है। मैं संपूर्ण जगत् का शासक हूँ। उसके पार्श्व भी कहने लगते हैं- 'भूगोल राजा का : खगोल राजा का।' धरती पर तो हमारे महाराज का शासन है ही, खगोल पर भी उनकी छत्र चँवर डोलती है और यों नाटक की थीम किसी युग-विशेष तक सीमित नहीं है, शाश्वत है। रावण भी तो इसी भ्रम का शिकार हुआ था कि वह अजेय है। अजेय होने का यही भ्रम व्यक्ति को कुपथगामी बनाता है। ऐसा व्यक्ति अंततः अपने लोगों के ही विरोध का पात्र बनता है। विभीषण को भी रावण का

विरोध करना पड़ा। यह बात बड़ी प्रामाणिक है कि नाम और रूप बदलकर हिरण्यकशिपु बार-बार जन्म लेता है। सर्वसत्ता के एक व्यक्ति में केंद्रित होने से उत्पन्न सर्वभक्षी आकांक्षा के अंधेपन को चुनौती देने के लिए प्रह्लाद को भी बार-बार जनम लेना पड़ता है।

सामान्यतः प्रह्लाद को एक बालक के रूप में प्रस्तुत किया जाता रहा है। कवि प्रह्लाद को अग्निजा अनुभूतियों के ज्योति-स्पर्श से अभिभूत युवक के रूप में चित्रित कर रहा है। जिस समय हिरण्यकशिपु सुदीर्घ सौ वर्षीय तपस्या के लिए चले उस समय उनकी पत्नी कयाधु गर्भवती थी। इंद्र ने गर्भवती कयाधु का अपहरण करना चाहा तो नारद ने कयाधु को संरक्षण दिया। ऐसी स्थिति में प्रह्लाद को एक युवक के रूप में चित्रित करना तर्कपूर्ण है।

नाटक पौराणिक नाट्यशैली के अनुसार नांदी के वचनों से प्रारंभ होता है, जिसमें वैदिक प्रार्थना है। परमात्मा में जो गुण हैं, वे सब प्रार्थी में समाविष्ट हो जाएँ, यह उनकी कामना है।

प्रथम अंक राजपथ की पृष्ठभूमि प्रस्तुत करता है, जहाँ राजा का उद्धोषक कहता है- 'भूगोल राजा का खगोल राजा का'। उद्धोषक घोषणा कर रहा है कि प्रजा के किसी व्यक्ति को जो कुछ कहना हो, वह संबद्ध मंत्री से नहीं, उसके सचिव से कहे।

जनता शिवशंकर का नाम भी नहीं ले सकती जो लेता है, वह राजमहल का विरोधी मान लिया जाता है। एक वृद्धा जब 'नमो नारायण' कहती है तो वह भी दोषी मान ली जाती है। हिरण्यकशिपु के राज्य में केवल उसकी ही जय-जयकार होती है, देवी-देवताओं की नहीं।

उद्धोषणा के विरुद्ध आचरण अपराध घोषित होता है। प्रह्लाद के मित्र नग्नजित और विश्वजित राजघोषणा को अनुचित मानते हैं। उनकी सहानुभूति आम जनता के साथ है। वे दोनों प्रह्लाद को सब स्थितियों से अवगत कराते हैं। प्रह्लाद और उसके दोनों मित्र चाहते हैं कि हिरनाकुस के निरंकुश आदेशों के विरुद्ध प्रह्लाद की माता कयाधु कुछ करें। प्रह्लाद अपनी माता से कहता है-

नारी की शक्ति अजस्र

नारी ही खड़ी हो सकती है

अग्निधारा के सम्मुख वज्रशिला-सी

इस पर प्रह्लाद की माता कयाधु की टिप्पणी बड़ी यथार्थ है। नारी का कोई व्यक्तित्व नहीं। परिवार या उसके बाहर उसकी कोई परिणामकारी भूमिका नहीं। उसकी आत्मस्वीकृति पूरे नारी समाज की उपेक्षित स्थिति को व्यक्त करती है-

हम पत्नी भर होती हैं

सहचरी, सहयोगिनी, सहकारिणी

हमें मानता है कौन?

आभूषण पहनते-पहनते

हम स्वयं बन गई हैं आभूषण।

कयाधु की द्रव्युक्त मानसिकता का कवि ने अच्छा वर्णन किया है।

वह उसके मन में बैठ सके हैं। इसलिए तो कयाधु कहती हैं-

काल देवता का

अट्टहास सुनती हूँ मैं

विनाश अंधकार बन उतरेगा।

वह तरह-तरह से अनिष्ट स्वप्न देखती है। पति को समझाती है, पर वह सब अनसुनी कर देता है। उसका अनाचारी राजदंड अबाधगति से चलता है।

जब महान् शक्तियाँ किसी अविचारी शासक का साथ देने लगती हैं तो प्रजा हाहाकार कर उठती है। अभय आने पर राजसिंहासन धरनि लगता है। प्रह्लाद पिता का विरोध करता है। कहता है, 'शक्ति का केंद्रीयकरण सारे व्यवधान की जड़ है।'

राजा के हाथ में सारी शक्ति आ जाने से ही प्रजा में विद्रोह उठा और उसका परिणाम उसके अंत में हुआ। जनता जब जाग उठती है, तब प्रश्न उठता है-जागृत जनता का कोप कौन सहेगा? इस नाटक की थीम शेक्सपीयर के नाटक 'जूलियस सीजर' से मिलती-जुलती है। सीजर के अत्याचार से क्षुब्ध जनता ने जब विद्रोह किया, तब सीजर का अभिन्न साथी ब्रूटस भी सीजर का साथ छोड़ देता है। प्रस्तुत नाटक में प्रह्लाद का अपने पिता के विरुद्ध जनता का साथ देने की तत्परता अन्याय का प्रतिकार था।

व्यक्ति की अपनी-अपनी आस्था होती है। लेकिन निरंकुश सत्ता में किसी अन्य की आस्था का प्रश्न ही कहाँ उठता है। नग्नजित कहता है कि 'हिरनाकुस ने सबकी आस्था पर थोपा है अपने को विचारों को कचमूरभी वह बनाकर छोड़ेगा।'

निरंकुशता का प्रहार सर्वप्रथम स्वतंत्र चिंतकों और बुद्धिजीवियों पर होता है, क्योंकि वे शासक का ढोल नहीं पीटते हैं। निरंकुश शासन में आम आदमी को मूँगा बना दिया जाता है। विशिष्ट आदमी जेल में दूँस दिया जाता है, उसकी लेखनी की नोंक तोड़ दी जाती है।

लेखक ने आज की विश्व राजनीति में उभरती तानाशाही का सही खाका खींचा है। आज कहीं भी विचार-स्वातंत्र्य निर्वाध नहीं है। जहाँ कहीं भी अत्याचार और तानाशाही अपना सिर उठाएगी, वहीं इस नाटक की सार्थकता सिद्ध होगी। नाटक की अंतर्धारा में मानवीय स्वतंत्रता क सूत्र प्रवाहमान हैं।

हिरण्यकशिपु का पुत्र प्रह्लाद बुद्धिजीवियों के साथ रहता है। उसे अपने पिता की नीति-राजनीति सहन नहीं होती। वह अपने पिता से कहता है कि जो शासक चाटुकारों से घिरा रहता है, वह छेदवाली नाव पर घड़ने का परिणाम भोगता है। संसार के सम्राटों का पतन चाटुकारों की टकुरमुहाती सलाहकारों के कारण हुआ है।

राजा के न्याय-विरुद्ध आचरणों से ही अशांति फैलती है। राजा का मुकुट काँपने लगता है-धराशायी हो जाता है। प्रजा के आक्रोश को बहुत समय तक दबाया नहीं जा सकता। प्रह्लाद की माता भी अपने पति के शासन से संतुष्ट नहीं है।

प्रह्लाद और उसके मित्र को जिज्ञासा होती है कि क्या शासकीय सेवक शासन के हर तरह के आदेश मानने को बाध्य है। नाटक का एक पात्र पूछता है-'सद-असद का भेद जानना/ क्या कोई अपराध है?/ विवेक ही तो/ आदमी होने की पहचान है।'

जाग्रत युवक का कर्तव्य क्या है? क्या उसे प्रह्लाद के समान बड़ी-से-बड़ी सत्ता के विरुद्ध खड़ा हो जाना चाहिए? दमन से अन्याय की हमेशा विजय नहीं होती। जो अनाचार यह कहता है- 'भूगोल राजा का: खगोल राजा का।' उसे सदाचार के आगे झुकना पड़ता है, क्योंकि 'सत्यमेव जयते'।

हिरनाकुस की मृत्यु पर प्रह्लाद और उसकी माता का विलाप बड़ा करुण है। नारद की सांतवना के संदर्भ में प्रह्लाद कहता है-'कुछ भी हो/ पिता, पिता ही होता है।' नारद समझाते हुए कहते हैं-

यह वध/ तुम्हारे पिता का नहीं

तुम्हारे पिता की सर्वभक्षी अंधी/ आकांक्षा का है।

अंधी आकांक्षा आँधी-सी उठती है।

और आदमी को सूखे पत्ते-सा उड़ाती है।

छोटे-छोटे वाक्यों में अर्थगांभीर्य मिलता है। पति के भावी पतन और प्रह्लाद पर बढ़ रहे अत्याचारों से चिंतित कयाधु अपनी परिचारिका से अपनी मनःस्थिति व्यक्त करते हुए कहती है-

कयाधु-

मेरा दूध मुझे एक ओर खींचता है

और सिंदूर

दूसरे छोर पर खींच ले जाता है।

इसके उत्तर में परिचारिका कहती है-

आप तो धीरा हैं।

कयाधु नुरंत तुक मिलाती है-

अब तो चिरनीरा हूँ।

कितना सहज और सांकेतिक है यह प्रयोग। इस प्रकार के अनुप्रासिक संवादों की नाटक में बहुलता है और यह बहुलता दर्शकों को आह्लादित करती है।

भाषा का प्रवाह उस सरिता के समान है, जो मार्गों के अवरोधों को उद्गम से ही दूर करती चलती है। छोटे-छोटे वाक्यों में विचारों का गुंफन आह्लादकारी है। सूक्तिवाक्यों, मुहावरों, अलंकारों, प्रतीकों के होते हुए भी भाषा की सहजता अबाधित है। कुछ सनातन उक्तियाँ अपने संदर्भ में सटीक हैं-

आधी सत्ता काना करती।

पूरी सत्ता का मद अंधा।

जब-जब सत्ता हुई नृशंस

तब-तब नष्ट हुआ अवतंस।

रचनाकार डॉ. देवेंद्र दीपक ने पूर्विका में कहा है, 'जिन खंड और अर्मक का उल्लेख पुराणों में मिलता है, वे दैत्यों के गुरु शुक्राचार्य के पुत्र थे। उनके पास प्रह्लाद को मति-शोधन के लिए भेजा गया था। यकीनन प्रह्लाद के जीवन में गुरु के रूप में ऐसा कोई जीवन-द्रष्टा शलाका-पुरुष आया होगा, जिसने शास्त्र के साथ-साथ उसके शील के अधिष्ठान में भी योगदान दिया होगा। मैंने उसी शलाका-पुरुष को आचार्य के रूप में प्रस्तुत किया है। आदर्श से 'एलर्जी' रखनेवालों को कदाचित् आचार्य के चरित्र की तेजस्विता अखरे, लेकिन आचार्य जैसी तेजस्विता ही हमारे देश के बुद्धिजीवियों और शिक्षकों के लिए आज काम्य है। शील की दृष्टि से इस रचना में आचार्य जिस पंचशील की चर्चा हिरण्यकशिपु से करता है, उसपर हमारे शिक्षाशास्त्री प्रयोग कर सकते हैं।' समकालीन पीढ़ी के निरंतर मानव-मूल्य निरपेक्ष होते चला जाना देश को बुरी तरह आहत किया है। 'चरित्र' देश के लिए सबसे बड़ी आवश्यकता बन गई है। भौतिक संपदा-विस्तार की कामना ने आज के आदमी को निरा व्यक्तिवादी

बना दिया है तो दूसरी ओर आदमी की नैतिकता को परास्त करने के लिए नए मुहावरों को गढ़ा और अर्थवत्ता दी है। प्रश्न मनु को मुँह खोले रखने के लिए विवश करता है—जीवन में रसमयता, जीवंतता, मनु की मनु के रूप में पहचान बनकर कैसे आएगी? ऐसे में शील ही एकमात्र उत्तर बनकर उभरता है। पीढ़ी की इसी चिंता ने और समाज के निरंतर पतनशील होते चले जाने के सच ने लेखक के चिंतन को धारदार बनाया है। उसकी यह चिंता इन पंक्तियों में स्पष्ट है, जहाँ यह कहता है कि “नीतिनिर्धारण के महत्त्वपूर्ण कार्य में लगे हमारे देश के कर्णधार इस बात को समझें कि शील के अभाव में शस्त्र और शास्त्र, दोनों ही रचनात्मक भूमिका नहीं निभा सकते।” रचनाकार की यह चिंता रचना को राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य प्रदान करती है। अतः जरूरी है कि रचनाकार को पंचशील की उद्भावना और उसके निर्वाह से रूबरू हुआ जाए।

पौराणिक कथा-शिल्प को समकालीन राजनीतिक चरित्र में अनुस्यूत करने का नाटककार ने उपक्रम किया है। इस उपक्रम में कथाधु एक सशस्त्र विमर्शक के रूप में उभरती है।

हिरनाकुस की पत्नी और प्रह्लाद की माता होने के नाते वह निश्चित रूप से विकट परिस्थिति में है और समन्वय करना ही उसका मात्र कर्तव्य होता है। इस दृष्टि से उसे अद्भुत मेधा का धनी होना चाहिए और वह है। प्रह्लाद कहता है—‘मेरे पिता पूज्य हैं/ मैं अंश हूँ उनका ही/ वीर परंपरा उनकी/ प्रसार पाएगी मुझमें/ लेकिन यह अत्याचार/ इतना। किसलिए माँ?’ तो वह नितान्त आत्मीय होकर उत्तर देती है, ‘तुम्हारे पिता का दोष क्या है?/ दंड राजधर्म का अंग है अभिन्न।/ वज्र होना पड़ता है राजा को/ फूलों की रक्षा के हित/ काँटों का विधान/ संविधान का अंग है।’ यद्यपि प्रह्लाद उसे तुरंत काटता है, ‘ठीक कहा आपने/ लेकिन उन काँटों का विधान भी/ क्या है संविधान सम्मत/ जो निरपराध फूलों को ही/ करते हों छिन्न-भिन्न।’ तथापि कथाधु जिस धैर्य और गांभीर्य से इसे साध लेती है, शङ्कर कुआँ, उधर खाई वालीश् स्थिति में इससे अच्छा निर्वाह नहीं किया जा सकता। उसके संवाद में उसकी विवशता और बेचारगी तो झलकती ही है, उसका वैदुष्य भी झलक उठता है। तभी तो प्रह्लाद आह्वान करता है कि ‘मेरी माता/ लोकमाता की भूमिका का/ करे यदि निर्वाह/ तो निकल सकती है कोई-न-कोई राह।’

राजा को सद्गति और दुर्गति प्रदान करने में शासकीय कर्मचारियों का बहुत बड़ा हाथ होता है। आपातकाल इस बात का प्रमाण है। आपातकाल ने ही रचनाकार को यह रचना लिखने की प्रेरणा दी है। उसके सबसे सशक्त कारणभूत तत्व शासकीय कर्मचारी के चरित्र को परिभाषित किया है।

आपातकाल में लेखक की, कर्मचारी की, राजा की और प्रजा की क्या नियति बनती है, इसका चित्रण नाटक में विशद है। उसने इस सबके माध्यम से मनु को तलाशने की कोशिश की है। शकामायनीश् में मनु की तलाश, शँधेरे मेंश का मनु फैंटेसी बनकर रह गए हैं। यदि आज मुक्तिबोध होते तो जिस तरह किचकिचाकर वह प्रसाद के मनु से अमर्षित हुए थे, उससे कहीं अधिक किचकिचाकर वह डॉ. दीपक के इस सर्वोदयी मनु से अमर्षित होते। व्यंग्य विभिन्न स्तरों पर वाचाल है। व्यंग्य की यह वाचालता ऐसा आघात करती है कि आघात करनेवाला जहाँ अपने मन के संपूर्ण निस्तार का अनुभव करता है तो वहीं आघात आघातक के तिर्यक अधरों से उभरती विहसंत को भीतर तक भँसा अनुभव कर हँस भी नहीं पाता और बरदाशत भी नहीं कर पाता। यह आघात मन-मुटाव और कटुता पूरी-पूरी वाचकता प्रदान करता है। इसी व्यंग्य ने विडंबना को सहज-बोध बनाया है और इसी प्रयोग के कारण रचनाकार स्पष्ट-बयान हो सका है।

निष्कर्ष:-चूँकि काव्य-नाटक की रचना ‘क्या यह एक सच्चाई नहीं कि शील और सर्जना से शून्य मात्र कुछ सूचनाओं के एकत्रीकरण को भी शिक्षा का अर्थ और इति मान लेने के कारण हमने देश की एक पूरी पीढ़ी ही बरबाद कर ली?’ की प्रतिक्रिया में हुई है। अतः उसमें वे सारी बहसें मौजूद हैं, जो आज के युवा और भावी नागरिक की समझ के लिए जरूरी है।

आज जब तानाशाही प्रवृत्तियाँ पूरे विश्व में अपना तांडव कर रही हैं, डॉ. देवेंद्र दीपक की यह कृति अत्यंत सामयिक और प्रेरक है। उन्होंने एक पुराने तथा लगभग अब तक अछूते मिथक को उठाकर उसके अलौकिक तत्वों को तार्किक संगति देने में अपनी मौलिक दृष्टि का अच्छा परिचय दिया है। आचार्य के चरित्र पर तो मैं मुग्ध हूँ। नाटक रंगमंच के तंत्र दो अनुरूप है। इस नाटक ने दर्शकों का मनोरंजन ही नहीं किया, वरन् अन्याय के विरोध की प्रेरणा भी देता रहा है। वर्तमान युगीन संदर्भों को प्रह्लाद के मिथक में जिस सूझ-बूझ और कलात्मक परिपाक से दीपक जी ने उभारा है, उसके लिए मैं उन्हें बधाई देता हूँ। पूरी रचना में एक अद्भुत ताजगी है।

#### संदर्भ सूची:-

1. भूगोल राजा का: खगोल राजा का, डॉ. देवेन्द्र दीपक, पैरागान इन्टरप्राइजेज, दरियागंज नई दिल्ली।
2. डॉ. देवेन्द्र दीपक का आपातकालीन साहित्य: दृष्टि और मूल्यांकन, प्रो. (डॉ.) अरुण कुमार भगत, ज्ञानवर्धन प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण 2019।
3. डॉ. देवेन्द्र दीपक: पढ़, सुना और लिखा, कमला प्रसाद चौरसिया, पुष्पांजलि प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण 2018।
4. डॉ. देवेन्द्र दीपक के संपादकीय, सम्पादक: डॉ. अरुण कुमार भगत, पुष्पांजलि प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण 2016।

# श्रीमंत शंकरदेव की दृष्टि में नारी का स्थान

सागर छेत्री

शोधार्थी, हिन्दी विभाग, नागालैंड विश्वविद्यालय, कोहिमा परिसर

**शोध सार:-** भारतीय संस्कृति में नारी को उच्च दर्जा प्रदान किया गया। समय के साथ-साथ समाज में उसका स्थान काम होता आया। उसे केवल भोग-विलास की वस्तु तक ही आँका जाने लगा। उसे पुरुषों की तुलना में कमतर समझा जाता है। इसलिए उन्हें उन कार्यों को करने के योग्य नहीं समझा गया जो पुरुष करते थे। मध्ययुग एक ऐसा ही एक काल था और इसी युग में असम में महापुरुष श्रीमंत शंकरदेव का आगमन होता है। उनका जन्म ऐसे दौर में होता है, जिस समय का समाज अज्ञान-अंधकार में रहता आ रहा। पूरे समाज अन्याय, भेदभावपूर्ण, उच्च-नीच, छुआ-छुत से जकड़ा हुआ था। ऐसे में जब महिलाओं की स्थिति चरम अवनति के कगार पर थी और समाज महिला व्यभिचार से भरा हुआ था। ऐसी परिस्थिति में शंकरदेव ने मानवतावादी आदर्शों के साथ अपने धर्म को प्रचार करने का काम किया था। इस आलेख के माध्यम से शंकरदेव ने अपने साहित्य में किस प्रकार नारी का उल्लेख किया है, इसको देखने का प्रयास किया गया है।

**बीज शब्द:-**नारी, समाज, भक्ति, मध्यकाल, शंकरदेव, असम, नव-वैष्णव धर्म, श्री कृष्ण, मानवतावाद, पितृसत्तात्मक, रुढ़िवाद, ब्राह्मणवाद।

**मूल आलेख:-** प्रचीन भारत अर्थात् वैदिक युग में स्त्रियों का स्थान पूजनीय था। स्त्री को देवी, माँ सहचरी कहकर पुकारा जाता था। समाज के हर क्षेत्र में उनको पुरुष के बराबर ही अधिकार और अवसर सुलभ थे। पुत्री के रूप में वह पुरुष के समान ही प्रिय, युवती के रूप में युवक के समान ही स्वतंत्र, पत्नी के रूप में पति के समान अधिकार रखने वाली गृहस्वामिनी और माता के रूप में पिता से अधिक पूज्य थी। वैदिक शिक्षा के पठन-पाठन तथा यज्ञ आदि धार्मिक कृत्यों के अनुष्ठान में नारी के मार्ग में कोई बाधा नहीं थी। यही कारण है कि भारतीय सभ्यता के उस स्वर्ण युग में नारी और आध्यात्मिक उन्नति का जो स्थापित किया गया वह आज भी अनुकरणीय है। ऋग्वेद काल में गार्गी, मैत्रेयी, सावित्री और देवयानी आदि ऐसी स्त्रियाँ थी जो ऋषियों के साथ शास्त्रार्थ कर सकती थी। लीलावती जैसी गणितज्ञ हुईं जिसने 'दशमलव' प्रणाली को विकसित किया। उत्तर वैदिक काल में स्त्री का स्थान निम्नगामी होने लगा। उनके अपने व्यक्तित्व, आदर्श और लक्ष्य पुरुषों के चरणों में कुंठित हो गए। वर्ण व्यवस्था के कारण वह पुरुष से अलग होने लगी। इस युग में उसका मूल्य एक चल संपत्ति जितना ही रह गया।

इसी तरह मध्ययुग तक आते-आते स्त्री को सिर्फ एक भोग-विलास की वस्तु तक ही समझा जाने लगा। इसी मध्ययुग में रामानुज, रामानन्द, चैत्यय, कबीर, नानक आदि ऐसे कई महान समाज सुधारकों व धर्मगुरुओं का आविर्भाव होता है, जिन्होंने समाज में फैले कुरीतियों, परंपरिक रुढ़ियों को खत्म कर एक सु-समाज गढ़ने का काम किया। इसी समय असम

प्रांत में भी महापुरुष श्रीमंत शंकरदेव का आगमन होता है। पूर्वोत्तर भारत में भक्ति आंदोलन के प्रणेता के रूप में शंकरदेव का स्थान सर्वोच्च है। जिस तरह दक्षिण भारत में उगा भक्ति आंदोलन को उत्तर भारत में लाने का श्रेय रामानंद को जाता है। उसी प्रकार पूरे पूर्वोत्तर भारत में भक्ति को प्रचार-प्रसार करने वाले अगर किसी व्यक्तित्व की बात करे तो उनमें असम भूमि में जन्मे महापुरुष श्रीमंत शंकरदेव का नाम लिया जाता है।

शंकरदेव बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे। वे कवि, नाटककार, गायक और नर्तक के साथ-साथ समाज सुधारक भी थे। शंकरदेव द्वारा प्रवर्तित धर्म नव-वैष्णव धर्म है। यह नव-वैष्णव धर्म 'एकशरण नाम धर्म' नाम से प्रचलित है, जिसका मूल मंत्र है- 'एक देव, एक सेव, एक बिने नाई केव' अर्थात् एक ही परमात्मा के प्रति भक्त। उनके विचारों में जाति, धर्म, समुदाय, मतों के आधार पर कोई भेद भाव नहीं है। उन्होंने समानता तथा भाईचारे के आधार पर जातिगत मतभेदों, रुढ़िवादी एवं ब्राह्मणवादी रिवाजों और बलि प्रथाओं से मुक्त समाज गढ़ा है। शंकरदेव ने मंदिरों के स्थान पर एकशरण धर्म के माध्यम से 'सत्र' अर्थात् 'नामघर' को स्थापित किया। जहाँ सामूहिक रूप से किसी भी धर्म, जाति, संप्रदाय, स्त्री-पुरुष तथा किसी भी व्यक्ति विशेष इस आराधना में बिना किसी संकोच के शामिल हो सकता है। वह समाज में उच्च-नीच आदि भेद-भाव को खत्म कर सभी को समान भाव एवं सम्मान का दर्जा देने की बात करते हैं। इसी प्रकार वह स्त्री की भी उतनी ही समान अधिकार की बात करते हैं, जितना वह पुरुष की करते हैं।

शंकरदेव के साहित्य मुख्य रूप से भागवत, पुराण और श्रीमद् भगवद्गीता पर आधारित हैं। यह सभी ग्रंथ इनके प्रेरणास्रोत हैं। इन्होंने इन सभी ग्रंथों का गहन अध्ययन कर भागवत, कीर्तन, दशम, नाटक आदि के रचना कर जन साधारण तक आम भाषा में पहुँचाया है। जबकि शंकरदेव के चिंता-चर्चा के आधार ग्रंथ भागवत, पुराण आदि हैं, इसलिए स्त्री को लेकर कई जगह उन्होंने गलत भी लिखा है। जैसे-

‘घोर नरिमाया सव मायाते कुत्सित।

महासिद्ध मुनिरो कटाक्ष हरे चित्त ॥

दर्शाने करे तप जप जग भंग।

जानि ज्ञानीगणे एरे कामिनीर संग ॥<sup>1</sup>

‘जतते सुंदरी नारी परम अनर्थकारी

आतपरे नाहिके निस्तार ॥<sup>2</sup>

इसी तरह 'भागवत' में लिखते हैं-

‘स्त्री शूद्रगण अधम जवने।

आनो जाति पापी नरे ॥<sup>3</sup>

यह सब देखते हुए उन्हे स्त्री विरोधी भी कहा जा सकता है। लेकिन स्त्री को लेकर उनकी यह धारणा अपनी नहीं, सर्वभारतीय वैष्णव आदर्श की धारणा है। बल्कि शंकरदेव तो स्त्री को मानवतावादी आदर्श से उच्च स्थान देने की बात करते हैं। अर्थात् वे समाज निर्माण में पुरुष के साथ-साथ स्त्री का भी समान अधिकार है इस बात पर जोर देते हैं, इसलिए वे लिखते हैं-

‘स्त्री बाल्य ब्रीध्य समस्तरे अधिकार  
चांडालको करे नामे तेखने उद्धार ।।’<sup>4</sup>

इसी तरह-

‘स्त्री शूद्रे करे यदि आमात भक्ति  
ताहातो कहिबा इटो ज्ञान महामति ।’<sup>5</sup>

इस प्रकार शंकरदेव स्त्रियों को केवल धर्म चर्चा करने का अवसर ही नहीं देते बल्कि उनकी भी मानव और मानव की तरह मर्यादा और स्वतंत्रता की भी रक्षा की जाए वह इस बात पर जोर देते हैं।

शंकरदेव अपने साहित्य में स्त्री चरित्रों को सहज-सरल व स्वाभाविक रूप और कुछ स्थानों में आधुनिक सोच वाली अर्थात् आधुनिक विचारधारा वाली स्त्रियों का भी परिचय दिते हैं। उनकी ‘पत्नी प्रसाद’ एक ऐसा नाटक है जिसमें स्त्री मन की स्वस्थ चिंताधारा और आदर्श का प्रतिफलन हुआ है। इस नाटक में ब्राह्मण पत्नियों का श्री कृष्ण के प्रति प्रदर्शित भक्ति के बीच कर्म मार्ग से बढ़कर भक्ति मार्ग को श्रेष्ठ बताकर कृष्ण भक्ति की श्रेष्ठता को ही सिद्ध किया है। इन ब्राह्मण पत्नियों के माध्यम से स्त्री का दायित्वबोध, कर्तव्यबोध, सत्यता, एकाग्रता आदि का परिचय देखने को मिलता है।

शंकरदेव के साहित्य में स्त्री को एक माँ, पत्नी, गृहिणी, प्रेमिका आदि सभी रूपों का चित्रण मिलता है। निम्नलिखित बिंदुओं में माध्यम से शंकरदेव के साहित्य में स्त्री का वर्णन किस प्रकार हुआ है, देखने का प्रयास किया गया है-

**मातृरूप व मातृत्व भाव:** शंकरदेव की रचनाओं में स्त्री के मातृरूप का वर्णन विस्तृत रूप में हुआ है। उनके काव्य, नाटक, गीत आदि के माध्यम से नारी चरित्र की अगर बात करे तो वह मातृ यशोदा है। यशोदा को हम पत्नी, मातृ और गृहिणी के रूप में पाते हैं। ‘कालियादमन’ नाटक में अति संक्षिप्त में ही माँ यशोदा के चरित्र को बड़े ही सजीव और व्यापक रूप में चित्रित किया है। कृष्ण की सगी माँ न होने के बावजूद यशोदा पुत्र प्रेम में मुग्ध है। माँ होकर पुत्र को शासन भी किया है, ग्वालिनों से कृष्ण को माखन चुराते पकड़े जाने पर उन्होंने वकालत भी की है। कृष्ण त्रिलोक के अधिपति होने बावजूद मातृ होकर साधारण मनुष्य की तरह दीक्षा भी दी है। यशोदा में वह सारे गुण दिखाई देते जो एक माँ के अंदर होने चाहिए। एक बार जब कालिया नाग के विश से कालिंदी झील की जहारीले जल पीकर गोपशिशु व वहाँ के पशु के मृत्यु होते देख श्रीकृष्ण कालिया नाग को दमन करने के उद्देश्य से झील के अंदर चले जाते हैं। खबर पाते ही यशोदा भागती हुई वहाँ पहुँच जाती है। तब कृष्ण को ऐसी अवस्था में देख चिल्ला-चिल्ला कर रो पड़ती है और कहती है-

‘गधूलि कोने माईबे बंशी बाई।  
कोने मोक गोयो बुलिबो आई।।  
धूलाजारि काक कराइबो स्नान।  
कोने करिबेक गोरस पान ।।’<sup>6</sup>

कालिया नाग का दमन कर जब कृष्ण वापस आते हैं तब यशोदा कृष्ण को जिस तरह गोद में लेकर प्यार करती है इसका वर्णन शंकरदेव ने जिस प्रकार किया है, इससे प्रत्येक मातृ हृदय की भावनाओं का परिचय मिलता है। इसी प्रकार देवकी के मातृरूप का मनोरम चित्रण हुआ है। देवकी

कृष्ण की जन्मदात्री माँ होने के बावजूद कृष्ण को कभी नहीं देखा था। कृष्ण के रक्षा के साथ-साथ विश्व के कल्याण और शांति के लिए, जन्म के क्षण से अलग रहकर इन्होंने जो उदाहरण प्रस्तुत किया, वह दुर्लभ है। जन्म के क्षण से भी वह पुत्र से अलग रही। जब कंस को मारकर कृष्ण माता देवकी के पास आते हैं, तब कृष्ण को बाहों में लेने की हर्ष शंकरदेव ने इस प्रकार व्यक्त किया है-

‘हरिष लोतके शरीर तियाइल पुत्रक गलत धरि।

एको बुलिबाक नापरि थाकिला गला गलि करि कान्दि ।’<sup>7</sup>

यहाँ शंकरदेव ने देवकी को एक ऐसी स्त्री के रूप में चित्रित किया है जिसे अपनी औलाद से स्नेह है और सामाजिक ज्ञान से प्रबुद्ध है।

**स्वामिभक्ति:** शंकरदेव के साहित्य में हमें स्वामी भक्ति भाव विराट रूप में दर्शन होते हैं। ‘कालियादमन’ नाटक में शंकरदेव नाग पत्नियों द्वारा कृष्ण से अपने पति के प्राणदान मांगने के माध्यम से स्त्रियों की स्वामिभक्ति, परिवार के सभी सदस्यों के प्रति स्नेह और कल्याण को व्यक्त किया है-

‘हे परम ईश्वर: तोहरी पाद प्रहारे स्वामी मरि जाई:

उहि दुर्जने: तोहाक नाजानि दशिल

जत लागे माने सास्ति पावल:

हे परम ईश्वर: श्री कृष्ण अवहु कृपाकरु: हामाक अनाथ कराबि नाहि

तोहारि आगु आंचोल पाति पतिदन मागो ।’<sup>8</sup>

प्रेमिका: ‘रुक्मिणी हरण’ ‘पारिजात हरण’ आदि नाटकों में प्रेमी के रूप में रुक्मिणी के दृढ़ संकल्प प्रशंसीय हैं। अपने चाहने वाले प्रेमी को पाने के लिए रास्ते में आने वाले सभी बाधाओं व अडचानों को बौद्धिकता व तार्किकता से दूर करती दिखाई देती है। यहाँ नारी के एक साहसी प्रेमिका होने का वर्णन हुआ है। ‘रुक्मिणी हरण’ काव्य में शशिप्रभा, वेदनिधि और सुमालिनी चरित्र के जो वर्णन दिया गया है वह अपूर्व है।

श्री कृष्ण की प्रेमिका अगर बात की जाए तो सबसे पहले राधा का नाम आता है। लेकिन शंकरदेव ने अपने साहित्य के राधा चित्रण न के बराबर किया है। उनकी रचनाओं में गोपियों का कृष्ण के प्रति प्रेम को दिखाई देता है। शंकरदेव भागवत के दशम स्कन्द में लिखते हैं-

‘करिलाहा बश्य मोक भौलोहो अधीन

सुजिवे नपारो चिरकाले इटो ऋण ।।

कहो परमार्थ कथा नोबोलो ऊखन्दि

तोमासार प्रेम भकतित भौलो बान्दि ।।

जेवे-सेवे स्नेहत आपोनि एरा दाई

तेबेसे निर्धारी हउँ ऋण सुजा जाय ।।’<sup>9</sup>

इस प्रकार यहाँ वर्णित गोपियों के प्रेम भक्ति ने नारी को भक्ति के क्षेत्र में एक अलग स्थान प्रदान किया है। शंकरदेव ने कृष्ण के प्रेम में मोहित स्त्रियों को गोपियों के रूप में चित्रित किया है। यह सभी कृष्ण की भक्तिनी और प्रेमिका हैं। उनका यह प्रेम शारीरिक प्रेम नहीं है, आध्यात्मिक प्रेम है। जहाँ जीवात्मा से परमात्मा का मिलन होता है।

**स्वतंत्र स्त्री:** स्त्रियों के प्रति प्रगतिशील दृष्टि शंकरदेव के साहित्य में देखने को मिलता है। शंकरदेव ने नामधर स्थापना के माध्यम से स्त्री-पुरुष, उच्च-नीच को बिना भेद-भाग के समान रूप से स्थान दिया है। वह नामधर में बिना किसी बाधा के प्रवेश कर सकते हैं। जिसमें ईश्वर की आराधना के लिए किसी बाह्य आडंबर की आवश्यकता नहीं है। उन्होंने तत्कालीन समाज में व्याप्त स्त्री विरोधी अप्रगतिशील धारणाओं से मुक्त भक्ति परंपरा का विकास किया। ‘रुक्मिणी हरण’, ‘केलि गोपाल’, ‘कालिया दमन’, ‘पारिजात हरण’, ‘पत्नी

प्रसाद' आदि नाटकों में स्त्री को लेकर प्रगतिशील दृष्टिकोण देखने को मिलता है। जैसे-

'स्त्रीक दुर्बल करे कोननो निस्खले  
ज्वलंतबह्नि क बांधे बस्तर आंचले  
खानितेक रह आजि चेद करो शिर  
मुर धीर शरे पीवे तपत रुधिर।'<sup>10</sup>

इन पंक्तियों के द्वारा नारी के स्वाभिमान को दिखाया है। उन्हें सक्रिय बताया गया है, चाहे वह शारीरिक रूप से सक्षम हो या मानसिक रूप से। वह इतनी सक्षम है कि किसी भी मुश्किल परिस्थिति में लड़कर अपनी स्वाभिमान की रक्षा कर सकती है।

**निष्कर्ष :** इस प्रकार शंकरदेव के दृष्टि में नारी के अलग-अलग रूपों को देखा जा सकता है। कहीं पर वह माँ है, तो कहीं पर प्रेमिका, कहीं पर पत्नी, सखी तो कहीं पर गुरु, परामर्शदाता आदि। वैष्णव धर्म पुरुष प्रधान समाज है। भक्तिकालीन सामंती और पितृसत्तात्मक समाज में स्त्रियों को समाज में समान दर्जा प्राप्त नहीं था। फिर भी उस समय शंकरदेव ने श्रवण-कीर्तन के माध्यम से स्त्री-पुरुष को एक साथ नाम गाने का अधिकार प्रदान किया था। जिसे स्त्री-पुरुष के बीच जो भेदभाव है वह समाप्त हो जाए थे।

शंकरदेव का दर्शन मानवतावादी दर्शन है। जीव श्रेष्ठ मानव जाति को उन्होंने पुरुष और स्त्रियों में विभाजन नहीं किया है। दोनों ही एक ही ईश्वर की संतान व वंशज है। स्त्री की अगर सबसे बड़ी विशेषता को देखा जाए तो वो वह एक माँ है। भविष्य के पीढ़ी की जन्मदात्री। एक स्वस्थ एवं सशक्त पीढ़ियों को पाने के लिए माँ का आध्यात्मिक उत्थान होना अत्यंत आवश्यक है। जो माँ उदार, दयालु, स्नेही आदि गुणों से युक्त होती है और अनादर, ईर्ष्या, हिंसा, घृणा, विलासिता, अकर्मण्यता आदि नकारात्मक भावनाओं को त्याग कर कल्याणकारी दृष्टिकोण रखती है, उसकी संतान निश्चित रूप से एक सही मानव होगा, इसमें कोई संदेह नहीं है। इसी आध्यात्मिक आदर्श से प्रेरित होकर शंकरदेव ने पन्द्रहवीं शताब्दी में ही जिस समय समाज पुरी तरह से पारंपरिक रूढ़ियों एवं अंधविश्वासों से जकड़ा हुआ था। वैसे समाज में स्त्रियों के प्रति जो दृष्टिकोण या स्थान प्रदान किया है, उसके लिए आज भी उन्हें नारी आंदोलन के महानतम अग्रदूतों में से एक माना जा सकता है।

**संदर्भ सूची :-**

1. खंड-1, कीर्तनघोषा, हरमोहन/ पद-529
2. खंड-2, भागवत दशम स्कन्ध, घोषा- 2337
3. खंड-2 भागवत द्वितीय, घोषा- 2397
4. खंड-2, भागवत द्वितीय, घोषा- 1230
5. खंड-2, भागवत एकादश, घोषा- 262
6. कीर्तन-घोषा, कालियादमन पद
7. खंड-2, कालियादमन नाट, पृष्ठ- 8
8. खंड-2, कालियादमन नाट, पृष्ठ-8
9. खंड-2, भागवत-दशम स्कन्ध, घोषा- 1454
10. शंकरदेव संदीपिकापद सं. 75, पृष्ठ- 185

**संदर्भ ग्रंथ सूची :-**

1. चौधुरी, पारुल. शंकरदेव दृष्टि आरू दर्शन. चन्द्र प्रकाश. गुवाहाटी. 2012
2. चौबे, दिनेश कुमार. असम में वैष्णव मत एवं साहित्य. मेघालय

राष्ट्रभाषा प्रचार समिति. शिलांग. 2010

3. दास, स्वप्नाली. पाठक, कनिका (2024). शंकरदेव भक्ति-दर्शन. लॉइअर 'स बुक स्टॉल. गुवाहाटी. 2024
4. पाण्डेय, मैनेजर. भक्ति आन्दोलन और सूरदास का काव्य. वाणी प्रकाशन. नई दिल्ली. 2023
5. पालीवाल, कृष्णदत्त. नारी-विमर्श और भारतीय परंपरा. सस्ता साहित्य मंडल. नई दिल्ली. 2014
6. महंत, चक्रधर. श्रीमंत शंकरदेव धर्म आरू परंपरा. ग्रन्थ संस्कृति. जोरहाट. 2013
7. मेधी, दिलीप कुमार (सं). भारतीय भक्ति आन्दोलन और पूर्वोत्तर भारत के भक्ति आन्दोलन में शंकरदेव और माधवदेव का योगदान. शब्द-भारती (हिंदी संसाधन केंद्र). गुवाहाटी. 2015
8. वर्मा, महादेवी. शृंखला की कड़ियाँ. लोकभारती प्रकाशन. इलाहाबाद. 2008
9. शर्मा, धीरेन. प्राकशंकर युग साहित्यिक आरू साहित्य. अखिल भारतीय साहित्य परिषद. गुवाहाटी. 2018

## भारतीय साहित्यशास्त्र में आचार्य भगीरथ मिश्र का योगदान

शालिनी

प्रो. राकेश कुमार शुक्ला

1. शोधार्थी, वी. एस. एस. डी. कॉलेज, कानपुर, उप्र.
2. शोध निर्देशक, वी. एस. एस. डी. कॉलेज, कानपुर, उप्र.

शोध सारांश:-साहित्यशास्त्र के सम्यक ज्ञान के बिना किसी भी साहित्य का अध्ययन अधूरा है। अध्ययन-अध्यापन की दृष्टि से भारतीय काव्यशास्त्र की एक सुदीर्घ परम्परा रही है। साहित्यशास्त्र से तात्पर्य ऐसे शास्त्र से है जिसमें साहित्य के समस्त तत्वों की मीमांसा प्रस्तुत कर उसके स्वरूप एवं समस्याओं पर विचार किया जाय।

साहित्यशास्त्र का प्रारम्भ वस्तुतः संस्कृत से हुआ तथा हिन्दी में भी काव्यशास्त्रीय चिंतन परम्परा का विस्तार देखने को मिलता है। साहित्यशास्त्र के अन्तर्गत भारतीय मनीषियों ने काव्य के विभिन्न पक्षों का विस्तृत विवेचन किया है। संस्कृत काव्यशास्त्र के अन्तर्गत आचार्यों ने मुख्यतः 'कवि, काव्य और प्रमाता' को विवेचन का आधार बनाते हुए काव्य के व्यापक क्षेत्र का विश्लेषण प्रस्तुत किया जिसमें आचार्य भरतमुनि से लेकर, भामह, दण्डी, वामन, आनन्दवर्धन मम्मट आदि आचार्यों ने रस, ध्वनि, अलंकार, रीति एवं वक्रोक्ति आदि के संदर्भ में गम्भीर विश्लेषण प्रस्तुत किया।

इसी तरह संस्कृत काव्यशास्त्रीय परम्पराओं को आधार बनाकर हिन्दी में उसी के अनुरूप काव्य शास्त्रीय चिंतन की परम्परा परिलक्षित होती है। जिसका प्रारम्भ रीतिकालीन साहित्य से होता है। हिन्दी काव्यशास्त्रीय चिंतन कृपाराम की हिततरंगिणी से प्रारम्भ होता हुआ अपने विकासकाल में आचार्य केशव, चिंतामणि त्रिपाठी, मतिराम, भिखारीदास रसलीन, सुरति मिश्र, पद्माकर आदि कवि आचार्यों के काव्यशास्त्रीय ग्रंथों से परिपुष्ट हुआ। आधुनिक काल तक आते-आते काव्यशास्त्रीय चिंतन में भारतीय एवं पाश्चात्य साहित्यशास्त्र का समन्वित रूप देखने को मिलने लगा। इस काल में लाला भगवानदीन, बालकृष्ण भट्ट, महावीर प्रसाद द्विवेदी, मिश्रबन्धु, हरिऔध, आचार्य रामचंद्र शुक्ल श्यामसुन्दर दास, भगीरथ मिश्र आदि विद्वानों का काव्यशास्त्रीय चिंतन अत्यंत उल्लेखनीय एवं महत्वपूर्ण है।

आचार्य भगीरथ मिश्र शुक्लोत्तर समीक्षा के महत्वपूर्ण काव्यशास्त्रीय विचारक हैं। उन्होंने भारतीय एवं पाश्चात्य काव्यशास्त्र का गहन अध्ययन करते हुए अपना समन्वयवादी दृष्टिकोण प्रतिष्ठित किया। मिश्र जी ने काव्यशास्त्र का सूक्ष्म एवं गहन चित्रण करते हुए काव्य के स्वरूप काव्यात्मा, रसानुभूति, साधारणीकरण एवं काव्य भाषा आदि पर अपनी स्थापनाएं प्रस्तुत की हैं; जो की परंपरानुमोदित होते हुए भी नवीनता को ग्रहण किए हुए हैं।

इसके अलावा मिश्र जी ने आधुनिक साहित्य को दृष्टिगत रखते हुए नवीन काव्यशास्त्र की आवश्यकता महसूस करते हैं; क्योंकि साहित्य के नए-नए रूप काव्यशास्त्र के लिए चुनौती बनते जा रहे हैं, नया कवि अपनी कविता के लिए काव्यशास्त्र को अवरोधक तत्व के रूप में देखने लगा है; अतः वे काव्य

को अन्य ज्ञान की शाखाओं के परिप्रेक्ष्य में देखने की आवश्यकता महसूस करते हैं। इस प्रकार मिश्र जी का काव्यशास्त्रीय चिंतन अत्यंत महत्वपूर्ण एवं उपयोगी होने के साथ-साथ परंपरा एवं नवीनता का समन्वय प्रस्तुत करने वाला है।

बीज शब्द:-काव्यशास्त्र, रस, स्थापनाएं, साधारणीकरण, चिंतन, साहित्यशास्त्र।

शोध विस्तार:-

सरितामिव प्रवाहा, तुच्छ प्रथम ययोतरं विपुला।

ये शास्त्रसमारम्भा भवन्ति, लोकस्य ते वंध्या।।

अर्थात् नदी के प्रवाह के समान शास्त्र का भी प्रवाह प्रारंभ में छोटा सा होता है; बाद में बढ़ते-बढ़ते व प्रवाह विशाल बन जाता है। ऐसे ही शास्त्र लोकादर के भाजन होते हैं। साहित्य शास्त्र की भी यही स्थिति होती है।' साहित्य शास्त्र से तात्पर्य ऐसे शास्त्र से है जिसमें साहित्य रचना से संबंधित विविध रूपों शैलियों एवं प्रणालियां पर प्रकाश डाला जाता है। काव्यशास्त्र या साहित्य शास्त्र की यह दीर्घ परंपरा संस्कृत-प्राकृत-अपभ्रंश के कवियों एवं आचार्यों के चिंतन में दृष्टिगत होती है; जिसमें रस, ध्वनि, अलंकार, रस एवं वक्रोक्ति के संदर्भ में काव्यात्मा व काव्यास्वाद आदि का विश्लेषण किया गया है। संस्कृत काव्यशास्त्र की यह अखंड परंपरा हिन्दी को संस्कृत से उत्तराधिकार में प्राप्त हुई। प्रारंभ में रीतिकालीन कवियों ने संस्कृत के ग्रंथों का अनुकरण कर अपने मतों का प्रतिपादन किया। आधुनिक काल तक आते-आते हिन्दी काव्यशास्त्र ने परंपरा से प्राप्त अनेक तत्वों को छोड़कर पाश्चात्य चिंतन के नवीन तत्वों को ग्रहण कर लिया। इसी के तहत हिन्दी काव्यशास्त्रीय चिंतन में समालोचना की नवीन पद्धतियां प्रचलित हो गईं।

हिन्दी में शुक्लोत्तर युग के महत्वपूर्ण समीक्षक आचार्य भगीरथ मिश्र का काव्यशास्त्रीय चिंतन महत्वपूर्ण है। उनकी महत्वपूर्ण समीक्षात्मक कृतियों काव्यशास्त्र, काव्य रस: चिंतन और आस्वाद, काव्य मनीषा, हिन्दी रीति साहित्य, नया काव्यशास्त्र आदि में परंपरागत एवं मौलिक विवेचन मिलता है। समन्वयशीलता मिश्र जी के साहित्य चिंतन की महत्वपूर्ण विशेषता है। उनके विचार से काव्यशास्त्र उच्च कोटि के साहित्य सृजन की प्रेरणा देता है तथा उपलब्ध सामग्री के आधार पर काव्य का मूल्यांकन करता है।

भगीरथ मिश्र जी आधुनिक काल में काव्यशास्त्रीय तत्वों की उपेक्षा पर चिंता व्यक्त करते हुए नवीन काव्य शास्त्रीय पद्धतियों को विकसित करने का विचार व्यक्त करते हैं। आज के समय में जिस तरह से कविता, साहित्य और कला के क्षेत्र में नवीन परिवर्तनों के साथ-साथ नए-नए रूपों का विकास हो रहा है ऐसे में काव्यशास्त्र की पुरानी पद्धतियों के आधार पर नवीन काव्य का

मूल्यांकन चुनौती बनता जा रहा है; क्योंकि पुरानी मान्यताएं आज की कसौटी पर लागू नहीं होती अतः परंपरा का विकास और विस्तार आवश्यक है।

मिश्र जी आधुनिक काव्यशास्त्रीय समस्याओं के प्रति भी साहित्य मर्मज्ञ का ध्यान आकृष्ट कराते हैं क्योंकि आज का कवि काव्यशास्त्र से दूर रहकर कविता करना चाहता है। वह काव्य विवेक को कविता के लिए आवश्यक नहीं मानता बल्कि उसे प्रगति में बाधक ही समझता है। मिश्र जी काव्यशास्त्र को कविता का अवरोधक तत्व न मानते हुए बल्कि काव्य की उन्नति के लिए उसे अनिवार्य मानते हैं। मिश्र जी समय परिवर्तन के साथ-साथ साहित्य के विकास में भी नवीन परिवर्तनों की आवश्यकता महसूस करते हैं, जिसके लिए उन्होंने कुछ समस्याओं का जिक्र किया यथा - आज की कविता का अनिवार्य तत्व क्या है? काव्य की आत्मा क्या है? काव्य सृजन का हेतु क्या है? तथा कविता की भाषा कैसी हो? मिश्र जी के विचार से उपरोक्त प्रश्न तो प्राचीन ही हैं; परंतु उसके उत्तर हमें नवीन साहित्यिक परिप्रेक्ष में ढूँढने होंगे, जैसे कि आज के कवि कविता का अनिवार्य अंग अनुभूति को तथा काव्यात्मा स्वानुभूति को मानता है। अतः हमें वर्तमान साहित्य को दृष्टिगत रखते हुए काव्य शास्त्र की नवीन पद्धतियों पर विचार एवं विश्लेषण करने की आवश्यकता है।

इन सबके साथ मिश्र जी ने साहित्यशास्त्र का परम्परागत विश्लेषण भी किया जिसमें हिंदी काव्यशास्त्रीय चिंतन से लेकर संस्कृत काव्यशास्त्रीय चिंतन शामिल है। काव्यशास्त्र की प्रधान प्रेरणा तो संस्कृत काव्यशास्त्र से ही रहा लेकिन विषय, शैली, प्रवृत्तियों, छंदों आदि में हिंदी को यह परंपरा प्राकृत और अपभ्रंश से प्राप्त हुई। मिश्र जी के शब्दों में- 'रस नायिका भेद आदि पर भी कुछ ना कुछ वर्णन हमें प्राचीन हिंदी के ग्रंथों में मिल जाता है और यह संकेत मिलता है कि हिंदी रीति परंपरा की एक क्षीण धारा अपभ्रंश में भी अवश्य ही रही होगी।'<sup>2</sup>

मिश्रजी ने हिंदी रीति शास्त्र का भी गहन विश्लेषण प्रस्तुत किया है उनके विचार से हिंदी रीति साहित्य की सामाजिक एवं सांस्कृतिक देन है। इस साहित्य ने ऐसी कवित्व दृष्टि विकसित की जिससे समाज में काव्याभिरुचि का विकास हुआ। संस्कृत के अधिकतर ग्रंथों का उद्देश्य विषय या सिद्धांत को पूर्णतया स्पष्ट करना था, किंतु हिंदी के रीति ग्रंथों का लक्ष्य लक्षण को किनारे कर उसके अनुकूल ललित हिंदी के रचना करना था। मिश्र जी संस्कृत काव्यशास्त्र के सभी सिद्धांतों का कुछ ना कुछ प्रभाव हिंदी रीति साहित्य पर अवश्य मानते हैं उनके विचार से अलंकार रस और ध्वनि के आधार पर हिंदी के अधिकतर ग्रंथ रचे गए लेकिन रीति, वक्रोक्ति आदि सिद्धांतों की चर्चा न के बराबर है। अतः मिश्र जी ने अलंकार रस व ध्वनि सिद्धांतों के अंतर्गत ही हिंदी रीति शास्त्र का विवेचन किया है। वे लिखते हैं- 'हिंदी के रीतिशास्त्रीय ग्रंथों में काव्यशास्त्र से अपना परिचय प्रकट करना, लक्षण की अवधारणा के आधार पर सुंदर हिंदी काव्य रचना द्वारा उदाहरण प्रस्तुत करना और इस प्रकार शास्त्रीय प्रणाली पर कविता लिखना इन लेखकों का प्रमुख ध्येय जान पड़ता है। साहित्य शास्त्र के विविध अंगों तथा रूपों का विविधता पूर्ण शास्त्रीय ढंग से विवेचन और निरूपण करना नहीं।'<sup>3</sup>

काव्यशास्त्र प्राप्त विषय वस्तु का मूल्यांकन कर उत्तम कोटि के साहित्य सृजन की प्रेरणा देता है मिश्र जी ने हिंदी काव्यशास्त्र के अलावा संस्कृत काव्यशास्त्र के विभिन्न पहलुओं पर गंभीर चिंतन प्रस्तुत किया है। काव्यशास्त्र का प्रथम कार्य काव्य के स्वरूप को स्पष्ट करना है अतः काव्य के स्वरूप को प्रस्तुत करते हुए मिश्र जी लिखते हैं-काव्य जीवन और सत्य को संवेद्य बनाने वाली शब्द रचना है।'<sup>4</sup> उनके विचार से काव्य का ऐसा स्पष्ट स्वरूप विकसित

होना चाहिए जो किसी वाद के बंधन में बँधा न हो तथा जो अपने में विकासशील तत्वों का समावेशन कर सके। काव्य के स्वरूप को लेकर विभिन्न विद्वानों की परिभाषाओं से आचार्य मिश्र संतुष्ट नहीं दिखाई देते। आचार्य विश्वनाथ की 'वाक्य रसात्मकम् काव्यम्'<sup>5</sup> से मिश्र जी का मत है कि इससे काव्य में रस की अनिवार्यता सिद्ध होती है जिससे मतभेद उत्पन्न हो सकता है। इसी तरह पंडितराज जगन्नाथ द्वारा दी गई काव्य की परि 'भाषा' रमणीयार्थ प्रतिपादकः शब्दः काव्यम्'<sup>6</sup> में मिश्र जी के अनुसार शब्द में सदैव रमणीयता नहीं होती है। मिश्र जी काव्य को परिभाषित करते हुए लिखते हैं- 'शब्द, अर्थ अथवा दोनों की रमणीयता से युक्त वाक्य रचना काव्य है।'<sup>7</sup>

काव्य के स्वरूप के पश्चात संस्कृत काव्यशास्त्र में काव्यात्मा को लेकर अनेक मत उपस्थित हुए। मिश्र जी काव्य की ना तो कलापक्षीय ना ही भावपक्षीय विशेषताओं को काव्य आत्मा के रूप में स्वीकार करने के पक्ष में हैं। संस्कृत के 6 संप्रदायों अलंकार, रीति, रस, वक्रोक्ति, औचित्य और ध्वनि ने काव्यात्मा को अलग-अलग को परिभाषित किया है। मिश्र जी ने इन्हें काव्य की उत्कृष्ट विशेषताओं के तत्व माना है। उनके अनुसार- 'काव्य की आत्मा तो कोई ऐसी वस्तु होनी चाहिए जो काव्य में अनिवार्य हो और जिसमें उपर्युक्त तत्वों के संयोग होने पर काव्य का निर्माण या काव्य की उत्पत्ति होती है।'<sup>8</sup>

मिश्र जी रस को काव्य की आत्मा मानने के पक्ष में लिखते तो हैं लेकिन उनका मत है कि रस काव्य का अनिवार्य तत्व नहीं है। ऐसे में काव्य के जिन रूपों में रस नहीं है उनकी काव्यात्मा क्या होगी। उनके विचार से- 'रसानुभूति आत्मा नहीं है आत्मा रसानुभूति की स्थिति को प्राप्त होती है। आत्मा काव्य में निहित सत्य है वही अपने पूर्ण स्वरूप में रस के रूप में प्रकट होता है।'<sup>9</sup> मिश्र जी के विचार से काव्य में सत्य का महत्व अधिक है। गोस्वामी तुलसीदास भी 'कवित्व विवेक एक नहीं मोरे। सत्य कहां लिखि कागद कोरे।'<sup>10</sup> कहकर जीवन के सत्य को ही प्रकट करना चाहा। सत्य का अन्वेषण करना ही मनुष्य जीवन का पुरुषार्थ है। 'कवि का सत्य समाज का बल है वह हमारी प्रवृत्तियों का परिष्कार करता है उनको अपने सहज अमृत से सींचकर कर विकसित करता है और आनंदपूर्वक जीवन यापन की कला बताता है।'<sup>11</sup> कवि समस्त सौंदर्य को सत्य के रूप में चित्रित करता है अतः मिश्र जी के अनुसार- 'काव्य की आत्मा सत्य है।'<sup>12</sup> काव्यगत सत्य से ही मनुष्य में स्नेह और प्रेम जागृत होता है जो सच्ची मानवता के विकास में सहायक है। रस के स्वरूप एवं धारणा पर भी मिश्र जी का मौलिक चिंतन दृष्टिगत होता है। जीवन और काव्य में रस का महत्व हमेशा विद्यमान रहता है। रस का महत्वपूर्ण कार्य चित्त को प्रभावित करना होता है। मिश्र जी के विचार से रसात्मक सुख संसार के अन्य सभी सुखों से ऊपर है। चित्त की एक तटस्थ किंतु आनुभूतिक क्रियाशीलता रस कहलाती है। रसत्व का मूल स्रोत गुण का चित्त को प्रभावित करने वाली विशेषताएं होती हैं। चित्त की आनुभूतिक क्रियाशीलता को मिश्र जी ऐंद्रिक मानते हैं न की बौद्धिक। वे आनुभूतिक क्रियाशीलता की चार अवस्थाएं स्वीकार करते हैं। चित्त विस्तार, चित्त द्रुति, चित्त दीप्ति तथा चित्त संकोच।

रसानुभूति के संदर्भ में भगीरथ मिश्र जी एक रस की स्थिति मानने वाली विचारधारा के पक्षधर नहीं हैं। उनके विचार से एक रस का विचार आदर्शवादी है; चाहे वह भवभूति द्वारा 'एको रसः करुण एव निमित्तभेदात्'<sup>13</sup> कहकर करुण रस की प्रतिष्ठा करना हो या अभिनव गुप्त, भोजराज, और विश्वनाथ के अनुसार क्रमशः शांत, श्रृंगार एवं अद्भुत रसों को एकमात्र स्वीकारना हो। मिश्र जी के अनुसार- 'सामान्यतया अनुभवगत वस्तु ही रस के विविध रूप हैं। उनमें से विशिष्ट रस के प्रति आकर्षण या अभिरुचि व्यक्ति की

प्रकृति विशेष के कारण रहती है।<sup>14</sup>

रस निष्पत्ति और साधारणीकरण विषयक विशेष चिंतन भी मिश्र जी ने किया जिसमें वह रस निष्पत्ति और रसास्वाद दोनों की अलग-अलग स्थितियां मानते हैं रस निष्पत्ति वास्तविक जीवन में नहीं मिलती इसलिए इसे काव्य नाटक में ही आचार्य द्वारा स्वीकार किया गया है। 'रसास्वाद सहृदय पाठक या प्रेक्षक का होता है जबकि रस निष्पत्ति काव्य या नाटक में पूर्ण होती है। रस निष्पत्ति अन्यनिष्ठ है जबकि रसास्वाद सहृदयनिष्ठ या निजनिष्ठ है।'<sup>15</sup>

रसानुभूति के अंतर्गत साधारणीकरण अत्यंत महत्वपूर्ण विषय है जो की रसास्वाद के पूर्व की क्रिया है। मिश्र जी ने साधारणीकरण के संदर्भ में मिश्र जी संस्कृत के प्राचीन तथा हिंदी के महत्वपूर्ण समीक्षकों रामचंद्र शुक्ल और नगेंद्र आदि के मतों का विश्लेषण करते हुए अपनी मौलिक चिंतन सरणीयों को जोड़ा है। पूर्ववर्ती आचार्य के अनुसार आश्रय, आलंबन, उद्दीपन, स्थायी भाव तथा सहृदय आदि का साधारणीकरण से होता है। भट्टनायक विभाव आदि का साधारणीकरण मानते हैं, आचार्य शुक्ल के अनुसार- 'साधारणीकरण आलंबनत्व धर्म का होता है।'<sup>16</sup> जबकि डॉ. नगेंद्र ने कवि की अनुभूति का साधारणीकरण माना है। अतः मिश्र जी इन मतों में परस्पर कोई विरोध न मानते हुए उन्हें एक ही वस्तु को देखने के दो पहलुओं के अंतर्गत स्वीकार है। इसी के अंतर्गत मिश्र जी की मान्यताओं की बात करें तो वे समस्त व्यापार का साधारणीकरण मानते हैं जो की प्राचीन आचार्य के समान ही है। मिश्र जी के शब्दों में- 'काव्य के श्रवण और नाटक के प्रेक्षण में साधारणीकरण तो समस्त काव्य व्यापार का होता है पर उस सब का सदैव प्रेक्षक की भावना के साथ तादात्म्य में नहीं होता।'<sup>17</sup>

मिश्र जी ने साधारणीकरण का संबंध विभाव व अनुभाव पक्ष से ही माना है। कवि द्वारा अत्यक्त अनुभूति से नहीं। मिश्र जी पूर्ण रस की दशा में सबका साधारणीकरण और तादात्म्य में मानते हैं। इन सब के अलावा मिश्र जी ने साधारणीकरण को पश्चात विद्वानों के विचारों में भी खोजने का प्रयास किया जिनमें टॉलस्टाय, वर्ड्सवर्थ आदि का नाम उल्लेखनीय है।

उपर्युक्त चिंतन के अलावा आचार्य भगीरथ मिश्र का काव्य भाषा के स्वरूप के संबंध में महत्वपूर्ण विश्लेषण मिलता है। काव्य साहित्य की भाषा कैसी होनी चाहिए, उसमें कौन से ऐसे महत्वपूर्ण तत्व विद्यमान हो जो उसे सरल, मधुर और भावानुभूति के अनुकूल बना सके। मिश्र जी लय, बिम्ब और वक्रता काव्य के तीन महत्वपूर्ण तत्व स्वीकारते हैं; जिन पर उन्होंने विस्तृत विश्लेषण किया है। मिश्र जी काव्य भाषा में लय को अनिवार्य तत्व के रूप में स्वीकार करते हैं क्योंकि लय रचना को आकर्षक, प्रभावकारी और संवादात्मक रूप प्रदान करती है मिश्र जी बिम्बात्मक काव्य भाषा के पक्षधर है क्योंकि बिम्बात्मकता काव्य को रोचक, मधुर और सरल रूप प्रदान करती है। 'काव्य भाषा सामान्य भाषा की अपेक्षा कल्पना शक्ति से प्रक्षेपित बिंदुओं के माध्यम से संप्रेषण कार्य को अधिक प्रभावशाली ढंग से संपन्न करती है। अतः वह एक विशिष्ट रूप ग्रहण करती है।'<sup>18</sup> लय और बिम्ब के अलावा मिश्र जी उक्त वैचित्र या वक्रता को भी काव्य भाषा का महत्वपूर्ण तत्व स्वीकारते हैं। उपरोक्त काव्यशास्त्रीय विश्लेषण के अलावा मिश्र जी ने काव्य में कल्पना तत्व, अलंकार, छंद आदि को अपनी महत्वपूर्ण चिंतन दृष्टि से विवेचित करने का प्रयास किया। इस प्रकार मिश्रजी ने साहित्यशास्त्र के सभी तथ्यों का नवीन दृष्टिकोणों से विश्लेषण प्रस्तुत किया है तथा काव्यशास्त्रीय मान्यता एवं पद्धतियों को नवीन रूप में प्रस्तुत करने के पक्षधर दिखाई देते हैं जिससे परंपरा एवं नवीनता के सामंजस्य से उच्च कोटि के साहित्य सृजन की प्रेरणा जन्म ले सके।

संदर्भ सूची:-

1. गणेश त्रयंबक देशपांडे: भारतीय साहित्यशास्त्र, संगम प्रेस लि. पुणे, 1960, पृ. 1
2. डॉ. भगीरथ मिश्र: 'हिंदी काव्यशास्त्र का इतिहास', लखनऊ विश्वविद्यालय प्रकाशन, 1945 पृ. 49
3. डॉ. भगीरथ मिश्र: 'हिंदी रीत साहित्य', राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, 1956 पृ.22
4. डॉ. भगीरथ मिश्र: 'काव्य मनीषा', हिंदी समिति सूचना विभाग, लखनऊ, उत्तर प्रदेश 1969 पृ. 20
5. आचार्य विश्वनाथ: 'साहित्य दर्पण', प्रथम परिच्छेद
6. पंडित राज जगन्नाथ: रस गंगाधर, पृ. 10
7. डॉ. भगीरथ मिश्र: काव्यशास्त्र, विश्वविद्यालय प्रकाशन, गोरखपुर 1957 पृ. 11
8. डॉ. भगीरथ मिश्र: 'काव्य मनीषा', हिंदी समिति सूचना विभाग, लखनऊ, उत्तर प्रदेश 1969 पृ. 50
9. डॉ. भगीरथ मिश्र: नया 'काव्यशास्त्र' विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, 1993, पृ. 5
10. गोस्वामी तुलसीदास: 'रामचरितमानस', बालकाण्ड, गीता गोरखपुर प्रकाशन,
11. डॉ. भगीरथ मिश्र: 'काव्य मनीषा', हिंदी समिति सूचना विभाग, लखनऊ, उत्तर प्रदेश 1969 पृ. 58
12. डॉ. भगीरथ मिश्र: 'काव्य मनीषा', हिंदी समिति सूचना विभाग, लखनऊ, उत्तर प्रदेश 1969 पृ. 54
13. भवभूति: 'उत्तररामचरितम'
14. डॉ. भगीरथ मिश्र: काव्य रस चिंतन और आस्वाद', विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी 1990, पृ. 11
15. डॉ. भगीरथ मिश्र: काव्य रस चिंतन और आस्वाद', विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी 1990, पृ. 53
16. आचार्य रामचंद्र शुक्ल: 'चिंतामणि भाग-1, प्रकाशक इण्डिया प्रेस लिमिटेड, पृ.230
17. डॉ. भगीरथ मिश्र: काव्य रस चिंतन और आस्वाद', विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी 1990, पृ. 59
18. डॉ. भगीरथ मिश्र: नया 'काव्यशास्त्र' विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, 1993, पृ. 105

# डॉ. रामदयाल मुंडा : आदिवासी समाज के सशक्तिकरण से वैश्विक नेतृत्व तक

कृष्णा सरदार

डॉ. जास्मिन पटनायक

1. शोधार्थी, हिंदी विभाग, कलिंगा इंस्टिट्यूट ऑफ सोशल साइंस, भुवनेश्वर, ओडिशा
2. असिस्टेंट प्रोफेसर एवं शोध निर्देशक, हिंदी विभाग, कलिंगा इंस्टिट्यूट ऑफ सोशल साइंस, भुवनेश्वर, ओडिशा

सारांश:- डॉ. रामदयाल मुंडा (1939 - 2011) के प्रमुख भारतीय आदिवासी नेता, विद्वान और लेखक थे, जिनके साहित्य के माध्यम से आदिवासी समुदायों के उत्थान हेतु एक अमिट छाप छोड़ी। वे भारतीय आदिवासी समुदाय के एक विलक्षण व्यक्तित्व थे, जिन्होंने न केवल भारतीय संस्कृति, भाषा और समाजशास्त्र के क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान दिया, बल्कि वैश्विक स्तर पर भी आदिवासी पहचान को स्थापित किया। झारखण्ड में मुंडा जनजाति में जन्में मुंडा ने आदिवासी समुदायों की समृद्ध सांस्कृतिक विरासत को संरक्षित और बहाल करने के लिए अपना जीवन समर्पित कर दिया। मुंडा एक विपुल लेखक थे, जिन्होंने कई किताबें और लेख लिखे, जो आदिवासी आबादी द्वारा सामना किए जाने वाले इतिहास लोक कथाओं और सामाजिक आर्थिक मुद्दों पर आधारित थे। उनके साहित्यिक कार्यों ने न केवल आदिवासी जीवन की अनूठी परम्पराओं का जश्न मनाया, बल्कि शिक्षा और सशक्तिकरण के लिए एक शक्तिशाली उपकरण के रूप में भी काम किया। अपने लेखन के माध्यम से, उन्होंने समझ और प्रशंसा को बढ़ावा देते हुए मुख्यधारा के समाज और आदिवासी समुदायों के बीच की खाई को पाटने की कोशिश की। साहित्य से परे, मुंडा आदिवासी कालत में गहराई से शामिल थे और उन्होंने झारखण्ड अकादमिक परिषद की स्थापना में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। उन्होंने आदिवासी शिक्षा के लिए अपने पद का उपयोग करते हुए रांची विश्वविद्यालय के कुलपति के रूप में भी कार्य किया। रामदयाल मुंडा की विरासत उनके जीवन काल से कहीं आगे तक फैली हुई है, क्योंकि उनका साहित्य आदिवासी के उत्थान के लिए उनके बीच गर्व और पहचान की भावना को बढ़ावा देने के प्रयासों को प्रेरित और सूचित करता रहता है। जिससे उनमें गर्व और पहचान की भावना पैदा होती है। आदिवासियों के प्रति उनकी अटूट प्रतिबद्धता ने भारत के सांस्कृतिक परिदृश्य पर एक स्थायी प्रभाव छोड़ा है। इस आलेख पर मैं रामदयाल मुंडा, उनके इतिहास और आदिवासी साहित्य में उनके योगदान के बारे में चर्चा करूंगा कि कैसे उनके लेखन ने आदिवासियों की सकारात्मक मदद की है।

**बीज शब्द**:- आदिवासी, साहित्य, पहचान, भाषा एवं शिक्षा, संस्कृति, भारतीय प्रतिभा।

**मूल आलेख**:- रामदयाल मुंडा (1939 - 2011) एक भारतीय आदिवासी शिक्षाविद, कला प्रेमी, संगीत प्रेमी, समाज सेवी, कुशल नेतृत्वकर्ता एवं राजनीतिज्ञ थे वहीं वे एक कुशल प्रशासक भी थे। मुंडा ने देश में आदिवासी समुदायों के अधिकारों और कल्याण की कालत करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। 23 अगस्त 1939 को झारखण्ड राज्य के रांची जिला अंतर्गत तमाम प्रखंड के दिवड़ी गांव में जन्मे रामदयाल मुंडा आदिवासी संस्कृति से गहराई से

जुड़े माहौल में पले - बड़े। उनके शुरुआती अनुभवों ने आदिवासी सशक्तिकरण के प्रति उनकी प्रतिबद्धता को बढ़ावा दिया। एक साहित्यकार के रूप में मुंडा की यात्रा उनकी सक्रियता के साथ-साथ सामने आई और उनका लेखन आदिवासी समुदायों की आवाज और चिंताओं को बढ़ाने का एक शक्तिशाली माध्यम बन गया। एक सामाजिक कार्यकर्ता के रूप में अपने काम के अलावा, रामदयाल मुंडा एक विपुल लेखक भी थे, जिन्होंने आदिवासी संस्कृति और पहचान पर ध्यान केंद्रित करते हुए साहित्य के क्षेत्र में योगदान दिए। उनकी उल्लेखनीय साहित्यिक कृतियों में निबंध, कविताएँ और लेख शामिल हैं जो आदिवासी समुदायों की समृद्ध सांस्कृतिक विरासत पर प्रकाश डालते हैं। मुंडा के लेखन में अक्सर पहचान, सामाजिक न्याय और स्वदेशी संस्कृतियों के संरक्षण के विषयों की खोज की गई। अपने साहित्यिक योगदान के माध्यम से, उनका उद्देश्य आदिवासी समुदायों के सामने आने वाली चुनौतियों और उनके सशक्तिकरण की आवश्यकता के बारे में जागरूकता पैदा करना था। जबकि रामदयाल मुंडा को मुख्य रूप से सामाजिक और सांस्कृतिक क्षेत्रों में उनके काम के लिए पहचाना जाता है, उनका साहित्यिक योगदान उनकी विरासत की एक महत्वपूर्ण पहलू बना हुआ है, जो भारत के आदिवासी समुदायों की विविध सांस्कृतिक परम्पराओं को संरक्षित करने और मनाने के महत्व पर प्रकाश डालता है। मुंडा के साहित्यिक भंडार में निबंध, कविता और लेख सहित विविध प्रकार की शैलियाँ शामिल थी। उनके काम आदिवासी जीवन की अनूठी संस्कृति छवि को गहराई से प्रतिबिंबित करते थे, जो अक्सर पहचान, सामाजिक न्याय और स्वदेशी संस्कृति के संरक्षण की विषयों की खोज करते थे। मुंडा ने आदिवासियों की समृद्ध विरासत के लिए समझ और सराहना को बढ़ावा देते हुए मुख्यधारा से समाज और आदिवासी समुदायों के बीच की खाई को पाटने की कोशिश की। ऐतिहासिक विश्लेषणों के अलावा मुंडा ने कविता के माध्यम से अपने विचारों और टिप्पणियों को व्यक्त किया। उनकी कविताएँ अक्सर गहरी भावनाओं, सांस्कृतिक गौरव की भावना से ओतप्रोत आदिवासी जीवन की सुन्दरता का बखान करते थे और साथ ही इन समुदायों के सामने आने वाले अन्याय पर भी शोक व्यक्त करते थे। उनकी काव्यात्मक अभिव्यक्तियाँ आदिवासी पहचान के सार और आधुनिकीकरण के सामने इसके संरक्षण की आवश्यकता को व्यक्त करने का एक मार्मिक माध्यम बन गई। मुंडा की साहित्य कृतियाँ किताबों से आगे बढ़कर विभिन्न पत्रिकाओं और समाचार पत्रों में प्रकाशित कई लेखों तक फैली हुई हैं इन लेखों में आदिवासी समुदायों के सामने आने वाली सामाजिक आर्थिक चुनौतियों से लेकर शिक्षा और संस्कृति के संरक्षण के महत्व तक कई विषयों को शामिल किया गया है। राम दयाल मुंडा की साहित्यिक सक्रियता आदिवासी

भाषाओं को बढ़ावा देने तथा आदिवासी समुदायों के बीच भाषाई विविधता के महत्व पर जोर दिया और सांस्कृतिक विरासत के एक महत्वपूर्ण पहलू के रूप में उनकी भाषाओं के संरक्षण और प्रचार की वकालत की। राम दयाल मुंडा का जीवन और साहित्यिक कार्य सक्रियता और साहित्य के अंतःसंबंध का एक प्रेरणादायक प्रमाण है। उनका लेखन आज भी गूंजता रहता है, जो आदिवासी जीवन और संस्कृति की जटिलताओं में अंतर्दृष्टि प्रदान करता है। 'हमारे समाज में सजीव के साथ निर्जीव के साथ भी बराबर का संबंध है। जल, जंगल, और जमीन आदिवासियों का आधार है और आदिवासी साहित्य के मूल तत्व भी यही होना चाहिए। आज कई चीजें आदिवासी संस्कृति को विकृत कर रही हैं, उनकी पहचान आदिवासी साहित्य की जिम्मेवारी है।' मुंडा की विरासत भारत के आदिवासी समुदायों के अधिकारों और सम्मान के लिए चल रहे संघर्ष और सामाजिक परिवर्तन की वकालत में साहित्य की स्थायी शक्ति के लिए चल रहे संघर्ष के अनुस्मारक के रूप में कार्य करती है।

आदिवासी साहित्य भारतीय साहित्य का एक महत्वपूर्ण और विशिष्ट हिस्सा है, जो आदिवासी समाज के जीवन, संघर्ष, संस्कृति और अनुभवों को चित्रित करता है। आदिवासी समुदाय के उत्थान के लिए राम दयाल मुंडा ने अथक प्रयास किए जो उनके जीवन के विभिन्न पहलुओं-सांस्कृतिक परम्पराएं, प्रकृति से संबंध, सामाजिक समस्याएं और आदिवासी आबादी के सशक्तिकरण के प्रति गहरी प्रतिबद्धता का प्रतिनिधित्व करते हैं। 'किसी समुदाय का जीवन उस क्षेत्र की प्रकृति और मनुष्य द्वारा उस प्रकृति के संस्करण के बीच चलता है। यह क्रिया और प्रतिक्रिया प्रकृति और मनुष्य की पारस्परिक निर्भरता के आधार पर चलती है। प्रकृति मनुष्य का संपोषण करती है और मनुष्य प्रकृति का।' यह इतनी पारस्परिक है कि एक के बिना दूसरे का जीवन्त रहना असंभव है। भारतीय समाज में आदिवासी समुदाय की पहचान, उनकी संघर्षों और उनके जीवन के वास्तविक चित्रण को समाज के सामने लाता है। यह साहित्य न केवल आदिवासी समुदाय की सांस्कृतिक धरोहर को बचाने का काम करता है, बल्कि समाज में उनके अधिकारों, स्थिति और बराबरी की आवश्यकता को भी उजागर करता है। मुंडा ने आदिवासी पहचान की जड़ों का पता लगाने के लिए आदिवासी समुदायों के ऐतिहासिक आख्यानों में गहराई से उतरकर, उनका उद्देश्य रूढ़िवादिता को दूर करना, सामाजिक-सांस्कृतिक गौरव को बढ़ावा देना और ऐतिहासिक प्रतिकूलताओं के सामने आदिवासी समाजों के लचीले पन को उजागर करना था। 'साहित्य के विकास के लिए आदिवासी भाषाओं को बढ़ावा देना जरूरी है। ग्रामीण क्षेत्रों में साहित्य की मौखिक परम्परा जीवित है। उन्हें लिपिबद्ध करने के लिए हमारे साहित्यकारों और शोधार्थियों को गांवों में जाना चाहिए। तभी आदिवासी भाषा-संस्कृति का संरक्षण हो सकेगा।' मुंडा का ऐतिहासिक विश्लेषण केवल विद्वत्पूर्ण कार्य नहीं थे, उन्होंने वकालत के लिए एक मूलभूत उपकरण के रूप में कार्य किया। अपने लेखन के माध्यम से उन्होंने आदिवासी समुदायों द्वारा सदियों से सामना किए जा रहे प्रणालीगत अन्याय और भेद भाव के बारे में जागरूकता पैदा करने का प्रयास किया। डॉ. रामदयाल मुंडा की सम्पूर्ण साहित्यिक उपलब्धि के माध्यम से सिद्ध होता है कि उनके साहित्य के माध्यम से जो आनंदोपलब्धि हुई है, वह कम नहीं है। इस क्रम में उन्होंने साहित्य में जो स्थान प्राप्त किया वह निश्चय ही गौरव की बात है।' उन्होंने आदिवासी साहित्य को न केवल साहित्यिक दृष्टि से, बल्कि सामाजिक और राजनीतिक दृष्टि से भी एक महत्वपूर्ण क्षेत्र माना है, जो समाज में आदिवासी समुदाय की समाज और सम्मान को बढ़ाता है।

भारतीय समाज में एक विशेष और महत्वपूर्ण स्थान रखती है, जो

इन समुदायों के इतिहास, संस्कृति और जीवनशैली को परिभाषित करती है। आदिवासी पहचान कई तरह से जुड़ी होती है-यह उनकी परम्पराओं, भाषा, धार्मिक विश्वासों आदि होती है और सामाजिक संरचना के साथ गहरे रूप से जुड़ी होती है। आदिवासी पहचान का मुख्य तत्व उनकी अपनी जड़ों से जुड़ा होता है, जो उन्हें बाहरी प्रभावों से अलग और विशिष्ट बनाता है। आदिवासी समुदायों की अपनी एक विशेष परम्पराएं होती हैं, जो उनकी सांस्कृतिक पहचान का अभिन्न हिस्सा होती हैं, जैसे कि पारंपरिक नृत्य, संगीत, त्योहार और शिल्प। ये सभी परम्पराएं आदिवासी समुदाय की पहचान को जीवित रखने में मदद करती हैं। उनकी सादगी और प्रकृति से गहरा संबंध रखती हैं जो उनके जीवन के हर पहलू में दिखाई देता है, जैसे खेती-बाड़ी, पारिवारिक व्यवस्था और धार्मिक विश्वास। आदिवासियों का जीवन मुख्य रूप से जंगलों, नदियों और अन्य प्राकृतिक संसाधनों से जुड़ा होता है। उनकी पहचान प्रकृति के साथ घनिष्ठ संबंध पर आधारित है। जंगलों को उनके 'घर' के रूप में देखा जाता है और वे इन संसाधनों का सम्मान करते हुए जीवन यापन करते हैं। मुंडा ने व्यापक समाज से सहानुभूति और एकजुटता हासिल करने की कोशिश की। मुंडा ने कविता के माध्यम से अपने विश्वासों और सांस्कृतिक गौरव की गहराई को व्यक्त किया। उनकी कविताएँ पाठकों के साथ भावनात्मक स्तर पर जुड़ने और आदिवासी जीवन की आत्मा की झलक दिखाने का एक सशक्त माध्यम थी। प्रकृति की सुन्दरता, सामुदायिक बंधनों की ताकत और स्वदेशी परम्पराओं की समृद्धि का जश्न मनाने वाले छंदों के माध्यम से, मुंडा का उद्देश्य आदिवासी आबादी के बीच पहचान और गौरव की भावना पैदा करना था।

भाषा एवं शिक्षा का आपस में गहरा संबंध है। भाषा केवल संचार का माध्यम नहीं है, बल्कि यह ज्ञान अर्जन, विचारों की अभिव्यक्ति और सांस्कृतिक पहचान का महत्वपूर्ण हिस्सा भी है। मुंडा ने साहित्यिक सक्रियता का एक प्रमुख पहलू भाषा संरक्षण पर उनका जोर था। सांस्कृतिक पहचान को आकार देने में भाषा की गहराई को पहचानते हुए, उन्होंने आदिवासी भाषाओं की सुरक्षा और प्रचार के लिए वकालत की। 'भाषा ही संस्कृति की संवाहिका है, और है उसकी संरक्षिका और संवर्धिका। संस्कृति की सुरक्षा और संवर्धन उसकी भाषा के बिना संभव नहीं। भाषा है तो संस्कृति है। अपनी भाषा नहीं तो संस्कृति नहीं।' अपनी मातृभाषा को जीवित रखने के लिए हमें भाषा के महत्व को समझना होगा क्योंकि जब हम जन्म लेते हैं तो सबसे पहले अपनी माँ की भाषा यानि मातृभाषा का ही प्रयोग करते हैं। इसलिए हमें अपने खून के मूल्य से बढ़कर अपनी मातृभाषा को हृदय से प्यार करने की आवश्यकता है। 'भाषा का मूल्य समझ कर, इसे अपनी साँस समझना चाहिए। साँस के बिना हम जी नहीं सकते, उसी तरह मातृभाषा रहित हम गौरवमय जीवन जी नहीं सकते।' मुंडा के लेखन ने जनजातीय समुदायों के बीच भाषाई विविधता के महत्व को रेखांकित किया। आदिवासी समुदायों के भीतर शैक्षिक सुधार के लिए शिक्षा की परिवर्तनीय शक्ति को पहचानते हुए, उन्होंने सांस्कृतिक रूप से संवेदनशीलता और समावेशी शैक्षिक प्रथाओं की आवश्यकता को रेखांकित किया। शैक्षिक सुधार का समर्थन करना, मुंडा का समग्र दृष्टिकोण, ऐतिहासिक विश्लेषण, काव्यात्मक अभिव्यक्ति और जमीनी सक्रियता का संयोजन, उस गहरे प्रभाव का उदाहरण देता है जो एक प्रतिबद्ध लेखक हाशिये पर पढ़े समुदायों की कहानी को आकर देने और समाज में सकारात्मक बदलाव लाने में कर सकता है। आदिवासी क्षेत्रों में सांस्कृतिक रूप से समावेशी शिक्षा को बढ़ावा देने वाली पहल हुई, जो आदिवासी भाषाओं की मान्यता, स्कूली पाठ्यक्रम में आदिवासी इतिहास और परम्पराओं को शामिल करना और आदिवासी छात्रों की सांस्कृतिक पहचान का

सम्मान करने वाले शैक्षणिक संस्थानों की स्थापना में मुंडा के अथक प्रयासों के कुछ परिणाम थे। मुंडा की साहित्यिक सक्रियता ने आदिवासी समुदायों के भीतर भाषाओं के संरक्षण, सांस्कृतिक गौरव और आत्म निर्णय को बढ़ावा देने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

आदिवासी संस्कृति भारतीय समाज का अभिन्न हिस्सा है, जो अपनी अद्वितीयता, विविधता और समृद्ध परम्पराओं के लिए जानी जाती है। यह संस्कृति भारत के विभिन्न हिस्सों में, खासकर जंगलों, पहाड़ियों और दूर-दराज के क्षेत्रों में रहने वाले आदिवासी समुदायों द्वारा निभाई जाती है। किसी भी समाज का मन (बुद्धि) उसकी भाषा होती है तो हृदय उसकी संस्कृति। सामाजिक विकृति से मुक्ति का नाम संस्कृति है। संस्कृति कुछ और नहीं किसी समाज के जीने की सर्वश्रेष्ठ कला है। संस्कृति अपने क्षेत्र की प्रकृति के अनुरूप युगों के अनुभव से निर्मित होती है। आदिवासी समुदायों की अपनी अलग परम्पराएं और विश्वास होते हैं, जो आमतौर पर प्रकृति, देवताओं और पूर्वजों साथ जुड़ी होती है। प्रकृति के प्रति गहरी श्रद्धा रखने वाले ये समुदाय जल, जंगल और जमीन को बहुत महत्व देते हैं। आदिवासी संस्कृति में संगीत और नृत्य का अत्यधिक महत्व है। यह नृत्य और संगीत अक्सर उत्सवों, सामूहिक कार्यों और धार्मिक अनुष्ठानों का हिस्सा है। खासतौर पर उनके नृत्य में प्रकृति, प्राचीन कथाएं और सामूहिक जीवन को दर्शाया जाता है। आदिवासी प्रकृति के साथ जुड़ाव होने कारण पेड़-पौधे, नदियों और पहाड़ों के प्रति आस्था और प्रेम को उजागर करता है। उनके पारंपरिक लोक गीत, नृत्य और संगीत का आयोजन होता है, जिसमें ढोल, नगाड़े और बांसुरी जैसे वाद्ययंत्रों की धुन पर लोग नृत्य करते हैं। इससे आदिवासी कला और सांस्कृतिक धरोहर को बनाए रखने में मदद मिलती है, और नई पीढ़ी को अपनी संस्कृति से जोड़े रखता है। 'अनेकता में एकता' और 'एकता में अनेकता' भारतीय संस्कृति का प्राण तत्व है।<sup>8</sup> मुण्डारी में एक कहावत है- 'सेन गे सुसुन काजी गे दुरंग, डुरी गे दुमंग' अर्थात् चलना ही नृत्य है, बोलना ही संगीत है, और शरीर ही ढोलक है। मुंडा ने आदिवासी समुदायों की समृद्ध सांस्कृतिक विरासत को प्रदर्शित करने के लिए एक मंच के रूप में काम किया, उन रुढ़ियों को चुनौती दी जो अक्सर उन्हें आदिम या पिछड़े के रूप में चित्रित करते थे। उन्होंने आदिवासी कलाओं और परम्पराओं को बढ़ावा देने वाले सांस्कृतिक कार्यक्रमों और पहलों में सक्रिय रूप से भाग लिया। उनके अथक प्रयासों ने पारम्परिक कला रूपों, संगीत और नृत्य के पुनरुद्धार में योगदान दिए, जिससे आदिवासी समुदायों को पहचान और सशक्तिकरण की भावना मिली। आदिवासी जीवन की सांस्कृतिक समृद्धि को उजागर करके मुंडा ने व्यापक समाज के भीतर विविधता के लिए समावेशित और सम्मान को बढ़ावा देने के लिए उत्प्रेरक बन गए।

डॉ.रामदयाल मुंडा एक प्रमुख भारतीय सामाजिक कार्यकर्ता और अनुसंधानकर्ता थे, जो आदिवासी समुदायों के अधिकारों के लिए संघर्ष करते रहते थे। मुंडा का योगदान आदिवासी संस्कृति और पहचान को बचाव देने में महत्वपूर्ण रहा है। उन्होंने आदिवासी बच्चों की शिक्षा, स्वास्थ्य और जीवन स्तर को सुधारने के कई पहलें शुरू कीं और साथ ही उनका मानना था कि समाज में बदलाव लाने के लिए संस्कृति और परम्पराओं का सम्मान आवश्यक है। वे एक शिक्षाविद, लेखक, संगीतकार, समाजसेवी और राजनेता के रूप में बहुआयामी भूमिका निभाते रहे। उनका जीवन संघर्ष और उपलब्धियों से भरा रहा, जो भारतीय प्रतिभा की सच्ची मिसाल है। वे भारतीय जनजातीय समाज के विकास, उनकी सांस्कृतिक पहचान और अधिकारों के लिए निरंतर संघर्षरत रहे। डॉ. रामदयाल मुंडा न केवल एक अंतर्राष्ट्रीय स्तर के भाषाविद,

समाजशास्त्री और आदिवासी बुद्धिजीवी और साहित्यकार थे, बल्कि वे एक अप्रतिम आदिवासी कलाकार भी थे। उन्होंने मुंडारी, नागपुरी, पंचपरगनिया, हिंदी, अंग्रेजी में गीत कविताओं के अलावा गद्य साहित्य रचा है। उनकी संगीत रचनाएँ बहुत लोकप्रिय हुई हैं और झारखण्ड की आदिवासी लोक कला, विशेषकर 'पाइका नृत्य' को वैश्विक पहचान दिलाई है। डॉ. रामदयाल मुंडा भारतीय आदिवासी समाज के सशक्तिकरण और उनकी संस्कृति को संरक्षित रखने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाने वाले व्यक्तियों में से एक माने जाते हैं। डॉ. मुंडा ने न केवल भारत में, बल्कि वैश्विक स्तर पर भी आदिवासी समुदायों के अधिकारों और सांस्कृतिक पहचान को बढ़ावा देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। डॉ. रामदयाल मुंडा ने मुंडारी तथा क्षेत्रीय भाषाओं को देश के पटल पर नहीं लाया बल्कि हिंदी को विश्व प्रचारित करने के लिए उन्होंने अनेक अच्छे-बुरे अच्छे हिंदी उपन्यासों को अंग्रेजी में अनुवाद भी किया। जैसे- 'कल्याणी', 'जमानिया का बाबा', 'धुर्वस्वमिनी', 'रश्मि' आदि।<sup>9</sup> उन्होंने आदिवासी समाज के सतत विकास, शिक्षा और स्वशासन के अधिकारों को बढ़ावा दिया। मुंडा ने भारतीय कला, संगीत और परम्पराओं को दुनिया भर में प्रस्तुत किया। उनकी लोकगीत और सांस्कृतिक प्रस्तुतियों ने अंतरराष्ट्रीय स्तर पर आदिवासी धरोहर को लोकप्रिय बनाया। उन्होंने अपने वैश्विक दृष्टिकोण और नेतृत्व के माध्यम से आदिवासी समाज को अंतरराष्ट्रीय स्तर पर एक नई पहचान दिलाने में अहम योगदान दिए।

**निष्कर्ष:** डॉ. रामदयाल मुंडा का जीवन और कार्य आदिवासी समाज के उत्थान और उनके अधिकारों की रक्षा के लिए प्रेरणादायक है। उन्होंने अपनी शिक्षा, समाजशास्त्र में गहरी समझ और संघर्ष के माध्यम से आदिवासी समाज की आवाज को मुख्यधारा में लाया। आदिवासी समुदायों के बीच एक सम्मानित आकृति के रूप में, मुंडा के योगदान शब्दों के दायरे से परे विस्तारित है, वे सामाजिक न्याय, सांस्कृतिक संरक्षण और जनजातीय जनसंख्या के सशक्तिकरण के लिए आजीवन प्रतिबद्धता को शामिल करते हैं। मुंडा का योगदान जनजातीय समुदायों की सीमाओं से काफी दूर तक फैला हुआ है। उनकी विरासत भविष्य की पीढ़ियों को उनकी सांस्कृतिक विरासत की सराहना और सुरक्षा के लिए प्रेरित करती है, जो विपत्तियों के सामने गर्व और लचीलापन की भावना को बढ़ावा देती है। मुंडा का साहित्यिक और सामाजिक परिदृश्य पार एक अमिट छाप छोड़ा है, हमें याद दिलाता है कि दृढ़ विश्वास के साथ संचालित होने पर शब्दों की शक्ति, सकारात्मक परिवर्तन के लिए उत्प्रेरक और उन लोगों के लिए प्रेरणा का एक स्थायी स्रोत हो सकता है। उनके योगदान से न केवल भारत, बल्कि वैश्विक स्तर पर आदिवासी समुदाय की पहचान और अधिकारों को महत्व मिला। मुंडा की विचारधारा और उनकी सामाजिक प्रतिबद्धता यह साबित करती है कि वे भारतीय समाज के एक महान नेता और विद्वान थे, जिनकी धरोहर आने वाली पीढ़ियों के लिए प्रेरणा का स्रोत बनी रहेगी।

**सन्दर्भ सूची:-**

1. टेटे, वंदना, आदिवासी दर्शन और साहित्य, 2021, पृष्ठ सं - 139
2. मुंडा, डॉ. रामदयाल, आदिवासी अस्तित्व और झारखंडी अस्मिता के सवाल, 4268- 3. अंसारी रोड, दरियागंज नई दिल्ली, 2022, पृष्ठ सं -29
3. टेटे, वंदना, आदिवासी दर्शन और साहित्य, 2021, पृष्ठ सं - 139
4. नाग, डॉ. शांति, डॉ. रामदयाल मुंडा व्यक्तित्व एवं कृतित्व, रुम्बुल दिरी ओड़ :, सरनाटोली - हतमा, रांची कॉलेज के पीछे, रांची

- (झारखण्ड), पृष्ठ सं - 235
5. 'गिरिराज', डॉ. गिरिधारी राम गौड़, झारखण्ड की सांस्कृतिक विरासत, पृथ्वी प्रकाशन 126, विधा विहार रोहतक रोड न्यू दिल्ली 110024, प्रथम संस्करण 2019, पृष्ठ सं - 96
  6. ये. स. डॉ. जोवाकिम, डुंगडुंग, आदिवासी - मूलवासी सदानऔर गैर आदिवासी संस्कृति एक अवलोकन, झारखण्ड झरोखा न्यू बिल्डिंग, न्यू मार्केट, रातू रोड, रांची, (झारखण्ड), प्रथम संस्करण 2020, पृष्ठ सं - 35
  7. 'गिरिराज', डॉ. गिरिधारी राम गौड़, झारखण्ड की सांस्कृतिक विरासत, पृथ्वी प्रकाशन 126, विधा विहार रोहतक रोड न्यू दिल्ली 110024, प्रथम संस्करण 2019, पृष्ठ सं - 155
  8. चतुर्वेदी, डॉ. कुमार, सन्तोष, भारतीय संस्कृति, लोकभारती प्रकाशन पहली मंजिल, दरबारी बिल्डिंग, महात्मा गाँधी मार्ग इलाहाबाद - 211001, संस्करण 2017, पृष्ठ सं- 65
  9. नाग, डॉ. शांति, डॉ. रामदयाल मुंडा व्यक्तित्व एवं कृतित्व, रुम्बुल दिरी ओड़ा : सरनाटोली - हतमा, राँची कॉलेज के पीछे, राँची - 834008 (झारखण्ड) पृष्ठ सं - 238

# विभिन्न प्रकार के मुखौटे और उनका संक्षिप्त ऐतिहासिक विवरण

निवेदिता लोहिया

प्रो. शेखरचंद्र जोशी

1. शोधार्थी, दृश्य कला संकाय, सोबन सिंह जीना विश्वविद्यालय, अल्मोड़ा
2. विभागाध्यक्ष, दृश्य कला संकाय, सोबन सिंह जीना विश्वविद्यालय, अल्मोड़ा

**शोध सार:-** यह लेख विभिन्न संदर्भों में 'मुखौटा' शब्द को समझने और साथ ही भिन्न क्षेत्रों में इसके प्रभावों को समझने का एक लघु प्रयास है। प्रागैतिहासिक काल से लेकर वर्तमान में आध्यात्मिकता से लेकर चिकित्सा तक, मुखौटे के विचार का समाज पर गहरा प्रभाव पड़ा है जिसे बेहतर ढंग से समझने में ये लेख पाठकों की सहायता करेगा। इस लेख में हम मुखौटे के अदृश्य पहलुओं पर प्रकाश डालेंगे और उनका एक संक्षिप्त इतिहास प्रदान करेंगे। भिन्न देशों व क्षेत्रों के मुखौटों पर भिन्न भिन्न प्रभाव पड़ता है जिसका प्रमाण उनके निर्माण और तकनीक में देखे जा सकता है जैसे की यूरोप और जर्मनी में इन्हें स्कैंडिनेविया (मुखौटे) के नाम से जाना जाता है, जिसके इतिहास का लोगों पर गहरा, भिन्न तथा हानिकारक प्रभाव पड़ना है, जबकि कई अन्य स्थानों में, उन्हें अभी भी भयावह, पवित्र आदि वस्तुओं के रूप में देखा जाता है। चित्र के रूप में मुखौटे के रचनात्मक रूप को डाक टिकटों में देखा जा सकता है, जिसका प्रकाशन 2010 में प्रो. ऋतुराज वशिष्ठ द्वारा 'मुखौटों का नंस्कृतिक अध्याय' में किया गया है। यह लेख अतीत से वर्तमान तक के मुखौटों के भावनात्मक विकास के पहलू को दर्शाता है।

**मुख्य शब्द:-** मुखौटा, स्कॉटलैंड मुखौटे, धैर्यम, बुबोनिक प्लेग, अंत्येष्टि।

मुखौटे आज भी एक महत्वपूर्ण सामाजिक प्रभाव रखने वाली सबसे पुरानी व लोकप्रिय कला है। विद्वानों के मत अनुसार ये मुखौटे 40,000 से 50,000 वर्ष तक पुराने हैं। इस कला को जीवित रखने का श्रेय भारत और अन्य देशों की जनजातियों को जाता है। वर्षों की लोकप्रियता के बाद, मुखौटे मूर्ति अभिव्यक्ति के एक कलात्मक रूप में विकसित हुए हैं। A mask is explained as anything that disguises or conceals, a pretense (मुखौटों को ऐसी वास्तु माना गया है जो व्यक्ति विशेष की छवि को छिपाती है) मुखौटा उत्तने ही अद्भुत हैं जितना कि प्रकृति का स्वरूप है, और उनका उपयोग ऐतिहासिक रूप से प्रकृति के भेष/वेष या व्यक्तित्व को छिपाने लिए किया जाता रहा है, इसलिए, मुखौटा अनुकरण और कल्पना का मिश्रण हैं। यह मानवीय भावनाओं या अभिव्यक्तियों का एक अत्यधिक नाटकीय चित्रण है जो समय के साथ बम गया है। दुनिया भर में रॉक आर्ट पर मुखौटों के निशान देखे जा सकते हैं। ये शैल चित्र अनुष्ठानों, नमारोहों आदि का जीवंत उदाहरण हैं, यहाँ मुखौटे पहने हुए व्यक्ति को देखा जा सकता है, विद्वानों के अनुसार इन व्यक्तियों को अनुष्ठान करने वाला ओझा या महायाजक माना जाता है। इन चित्रों का सबसे अच्छा उदाहरण फ्रांस के एरीज की गुफा को माना गया है, जो प्रथम पुरापाषाण काल की है। यहाँ एक एंथ्रोपोमोर्फिक (आधे जानवर और आधे मानव

बाली आकृतियों चरित्र को एक संगीत धनुष का उपयोग करते हुए चित्रित किया गया है (चित्र नं.1) विद्वानों के मत अनुसार यह चित्रकारी अनुष्ठान का प्रतिनिधित्व करती है, जहाँ इस अनुष्ठान को करने वाले व्यक्ति को सर्वोच्च के साथ जुड़ने के लिए एक मुखौटा लगाना पड़ता है, जो एक माध्यम के रूप में काम करता है। Prehistoric and tribal people had deep metaphoric functions in their traditional masks (प्रागैतिहासिक और आदिवासी लोगों के पारंपरिक मुखौटों में गहरे रूपक कार्य है), जैसा कि कहा गया है- the mask symbolized the spirit he wished to invoke (मुखौटा उन आत्मा का प्रतीक है जिसे वह (जनजातियाँ) आमंत्रित करना चाहती थी। They, with their spiritual-based quality, could serve as powerful tool for spiritual development through masked मुखौटे अपने आध्यात्मिक-आधारित गुण के माध्यम से आध्यात्मिक विकास के लिए शक्तिशाली उपकरण के रूप में काम कर सकते हैं) उन आधारों पर हम कह सकते हैं कि मुखौटे का विचार किमी एक स्थान तक निमित नहीं था, और इनके उपयोग के प्रमाण दुनिया भर के गुफा चित्रों, आदिवासी संस्कारों और अन्य सांस्कृतिक परंपराओं में पाए जाते हैं।

इसी तरह मुखौटे बनाने के लिए कई प्रकार की सामग्री का उपयोग किया जाता है जैसे- लकड़ी, मिट्टी, हामीदांत, कांस्य, बांस के टुकड़े, प्लास्टर, कपड़े, घास, टेराकोटा, पेपर मारो और चांदी आदि।



चित्र नं. France, Upper Paleolithic period  
El-hechicero.jpg (599x333) (historiadelararte.us)

मुखौटे की अवधारणा केवल आध्यात्मिकता के लिए नहीं थी: यह मनोरंजन से लेकर शैक्षिक क्षेत्रों तक फैली हुई है। दक्षिण भारत में तेर्यम और क्यवल्ली, पश्चिम में हेनेनिस्टिक युग के दौरान मनोरंजन क्षेत्र में पहली बार मुखौटे का आध्यात्मिकता के माथ- माथ मनोरंजन के लिए उपयोग किया गया था, जो आज भी प्रचलित है। कहानियों को बताने के लिए मुखौटे का उपयोग कई कला शैलियों द्वारा साझा किया जाने वाला एक नत्व है। Theatrical masks were a standard element of stage production in ancient Mediterranean societies प्राचीन काल में भूमध्यसागरीय ममाजों में

रंगमंच के मुखौटे मंच निर्माण का एक मानक तत्व थे)। According to archeological research, the first known theatrical performance took place in 532 B.C° (पुरातत्व अनुसंधान के अनुसार, पहला ज्ञात नाटकीय प्रदर्शन 532 B.C. में हुआ था। यूनानी थिएटरों में मुखौटा प्रदर्शन का सबसे महत्वपूर्ण पटक था। हेलेनिक नाटक को तीन श्रेणियों में विभाजित किया गया है: त्रासदी, व्यंग्य और हास्य। एम्फीथिएटर ऐसे थिएटर हैं जिन्हें विशेष रूप में इस प्रकार के प्रदर्शनों के लिए डिज़ाइन किया गया था। हेलेनिक नाटक में पहने जाने वाले मुखौटे हेलमेट या पूरे सिर वाले मुखौटे थे, जिनमें बड़े आकार की विशेषताएं थीं। ग्रीक रंगमंच मुखौटे के इर्द-गिर्द केंद्रित है, रंगमंच में उनके उपयोग के अनावा इन मुखौटों का गहरा धार्मिक महत्व था। इसके माय ही हमें ग्रीक में अंतिम संस्कार के मुखौटे मिलते हैं, जिनका उपयोग दफनाने के लिए किया जाता है, जिसका सबसे अच्छा उदाहरण अगामेनन (Agamemnon) राजवंश का सोने का मुखौटा है जिसे माइसीन (Mycenae) में खोजा गया था। पूनानी अंतिम संस्कार मुखौटे सोलहवीं शताब्दी B.C. के है (चित्र नं. 2) ये मुखौटे यूनानी फूलदानों का भी महत्वपूर्ण हिस्सा थे और इनकी उत्पत्ति 6 शताब्दी ऋष्ट. से होने का अनुमान है (चित्र नं. 3) केरला में नाट्य कलाएँ और अनुष्ठान सांस्कृतिक परंपरा के घटक हैं। उत्तरी भारतीय क्षेत्र उत्साहपूर्वक प्रचलित थेय्यम का घर है, एक उत्सव जिसमें मनुष्यों को देवताओं में परिवर्तित किया जाता है। यह एक नृत्य प्रदर्शन है जो पूरी तरह में पुरुष प्रधान है और इसमें जनजाति के निचले वर्ग के सदस्य शामिल होते हैं। एकमात्र थेय्यम संस्कार ऐसा है जिसमें महिलाएं भाग लेती हैं वह देवक्यु है। There are about 300 varieties, and each one is different from another, and so is the stories narrated बेय्यम में नगभग 300 विविधता है, और प्रत्येक एक दूसरे से अलग है, और इसी तरह कहानियों का वर्णन किया गया है) These performances are held at sacred places such as Kaavu, Mundy or Kulam भये नृत्य प्रदर्शन काबू, मुख्या या कुलम जैसे पवित्र स्थानों पर आयोजित किए जाते हैं) 'कबू' शब्द समारोहों के लिए उपयोग किए जाने वाले एक खुले क्षेत्र को मंदिरित करता है और ये क्षेत्र एक देवता को समर्पित है जिसे बरगद, तुलसी और केले जैने पौधों द्वारा संरक्षित किया जाता है। चूँकि कबू एक निश्चित देवता को नमर्पित स्थान है, इसलिए यह देवता के निवास स्थान के आधार पर भिन्न होते हैं। इन प्रदर्शनों के दौरान चेहरे पर जीवंत रंग लगाए जाने हैं और सिर पर चांदी का मुकुट समारोह के दौरान पहना जाता है, जिसे 'मुंडी' कहा जाता है। थेय्यम में सारे समारोह समान होते हैं, लेकिन चरित्र के कपड़े, सजावट और साज-मज्जा अलग-अलग होती हैं। पतने ब्रश का उपयोग करके ज्यामिनीय पैटर्न और डिज़ाइन के साथ कलाकार के चेहरे को पेंट करने में कई घंटे लगते हैं। चेहरा रंगने की प्रक्रिया के लिए अम्भावी तम्बू बनाए जाते हैं, और प्राकृतिक मामग्री और रंगों का उपयोग करके चेहरे को चित्रित किया जाता है (चित्र नं. 4,5)



चित्र नं. 2 अंत्येष्टि, मुखौटा माइसीनी चित्र नं.3, डोनिस्सू पूजा का मुखौटा  
<https://d7hftxdivxxvm.cloudfront.net> <https://ipinimg.com>



चित्र नं. 4. थेय्यम कलाकार, चित्र नं.5, मुंडी  
<https://www.bbc.com><https://www.bbc.com>

इनके अलावा, मध्य युग के दौरान सजा के मुखौटे और औषधीय मुखौटे प्रचलन में थे। स्कॉटलैंड ब्रिडल-टॉचर मुखौटे मजा मुखौटे का एक और नाम है ये मुखौटे स्कॉटलैंड और इंग्लैंड में प्रचलित थे केवल निम्न वर्ग के सदस्य ही इन मुखौटों को पहनते थे क्योंकि ये मुखौटे निम्न वर्ग के लिए ही बनाए गए थे। ये मुखौटे लोहे के बने थे और पिंजरों से मिलते-जुलते थे। इन मुखौटों को एक निर्धारित समय के लिए पहना जाता था और वे मुखौटे विशेष जानवरों पर आधारित थे, जिसका एक अंग लंबा होता था, जो पहनने वाले के अपराध को दर्शाते थे, उदाहरण के लिए, एक वाचान व्यक्ति को मुर्गे का मुखौटा पहनाया जाता था (चित्र नं.6) The first face masks were created to combat the earliest plagues in 6 century शुरुआती महामारियों से निपटने के लिए पहने औषधीय (medical mask) मुखौटे 14 शताब्दी में बनाए गए थे। छठी शताब्दी में, ब्लैक प्लेग, जिसे बुबोनिक प्लेग के रूप में भी जाना जाता है, रोमन साम्राज्य में फैल गए थे। इस घातक बीमारी ने 14वीं और 17वीं शताब्दी तक अकेले यूरोप और एशिया में लगभग 20 करोड़ लोगों की जान ले ली। इस दौरान पहने जाने वाले मुखौटे उनके डिज़ाइन के कारण लोकप्रिय हुए थे। Plague doctors wore the iconic bird-beak masks"। प्लेग के डॉक्टरों ने प्रतिष्ठित पक्षी-चोंच के मुखौटे पहने थे। चोंच में दो छोटे छेद के माथ जड़ी-बूटियों, मसालों, पाउडर वाइपर मांस, वर्मवुड, सूखे फूलों, कपूर या सिरके के स्पंज में भरी जाती थी जो एक प्रकार का श्वसन यंत्र की तरह दिखता था, जिससे मृत्यु की गंध को खत्म करने में मदद मिलती थी। लोगों के साथ आंखों के संपर्क में बचने के लिए, मुखौटे में आंखों का निर्माण कांच से किया गया था। मुखौटे में चोंच के आकार का डिज़ाइन होता था, जिसका उद्देश्य नासिका के माध्यम से फेफड़ों में प्रवेश करने से पहले हर्बल रक्षा द्वारा हवा को शुद्ध करना था (चित्र नं.7)



चित्र नं.6, स्कॉटलैंड मुखौटा, चित्र नं. 7, बुबोनिक प्लेग मुखौटा  
<https://img.atlasobscura.com>,<https://dresstorian.com>

बर्तमान समय में मुखौटे एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। माना जाता है कि अफ्रीकी मुखौटों ने आधुनिक युग में मुखौटों के व्यापक मजावटी उपयोग के लिए एक प्रमुख प्रेरणा के रूप में काम किया है। कई मुखौटों को बुरी आत्माओं को दूर करने के लिए बनाया गया है, जो एक प्राचीन प्रथा का हिस्सा है और अभी भी एक महत्वपूर्ण सांस्कृतिक पटक के रूप में उपयोग किया जाता है। बौद्ध और अधिकांश भारत के लोग, विशेष रूप से उत्तर के लोग, इन मुखौटों का विशेष रूप में उपयोग करते हैं। चूँकि बच्चों के अनुकूल निर्देशात्मक खेलों में मुखौटे का उपयोग किया जाता है, वे बच्चों की शिक्षा में

महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। यहां तक कि इन दिनों सबसे ट्रेंडी पार्टियां भी मुखौटे के बिना पूरी नहीं होतीं, जो इन सामाजिक कार्यक्रमों का एक महत्वपूर्ण घटक हैं। कई मुखौटे जो महले उपयोग में थे, उन्हें समाज और ममय की मांगों के अनुरूप बदल दिया गया है, जिससे उन्हें ममकालीन का पदनाम मिला है।

**विभिन्न प्रकार के मुखौटे:**—वर्तमान परिदृश्य में मुखौटों का व्यापक उपयोग किया जाता है जो विभिन्न प्रकार की मामग्री में बनाए जाते हैं। ऋजुराज वशिष्ठ ने अपनी पुस्तक में विभिन्न मुखौटों का वर्णन किया है जैसे—हड्डी, पत्थर, लोहे, धातु, सोना, तांबा, मिट्टी के मुखौटे आदि। नाइजीरिया, जिम्बाब्वे, इथियोपिया, सुहान आदि देशों में चोपड़ी का उपयोग मुखौटे के रूप में किया जाता था। इन मुखौटों में पक्षियों के बाल, नाखून, त्वचा आदि जैसी विशेष विशेषताएं होती हैं। पशु कपाल के मुखौटों का उपयोग व्यापक रूप से आध्यात्मिक नृत्य में किया जाना है जो तीन सौ b.c से अभ्यास में हैं। पत्थर के मुखौटे प्रागैतिहासिक काल से चलन में हैं और पूरी दुनिया में लोकप्रिय हैं, इनकी पूजा ज्यादातर आदिवासी समाज में की जाती है। उत्तराखंड में राजजात यात्रा में चांदी के मुखौटे लोकप्रिय रूप से देखे जाते हैं, यह शिव और पार्वती को समर्पित एक तीर्थ उत्सव है। अन्य देशों में चांदी के मुखौटे मिलते हैं जो मेक्सिको के हैं जिसे 'रिपोज तकनीक' के माध्यम से बनाया गया है जिसका वजन लगभग 1.7 किलोग्राम है। आध्यात्मिक मूर्तियों के लिए अक्सर मिश्रित धातु के मुखौटों का उपयोग किया जाता है, इन धातुओं की संख्या आठ है और इन्हें अष्टधातु के रूप में जाना जाता है। इसी तरह, धार्मिक, सामाजिक, राजनीतिक, वैज्ञानिक, पार्टी आदि महित विभिन्न प्रकार के मुखौटे देखने को मिलते हैं।

गमीरा मुखौटे, बिहार, गमीरा शब्द की उत्पत्ति ग्राम चंडी शब्द से हुई है जो एक देवी है, जो कि काष्ठ के बने होते हैं। ये मुखौटे पारंपरिक रूप से दो प्रकार के होते हैं—भारी और हल्के, सजावटी उद्देश्य के लिए भारी मुखौटे का उपयोग किया जाता है जबकि नृत्य ममारोहों में हल्के मुखौटे का उपयोग किया जाता है। गामिरा लकड़ी का उपयोग पोलिया और देसी समुदायों के कारीगरों द्वारा गामी मुखौटे बनाने के लिए किया जाता है। ये मुखौटे पश्चिम बंगाल के दिनाजपुर, जलपाईगुडी और कूच बिहार जिले में लोकप्रिय हैं। गमीरा एक अनुष्ठान नृत्य प्रदर्शन है जो भगवान शिव को समर्पित है। प्रदर्शन का समय बंगाली महीने यानी अप्रैल के चैत्र-मध्य, अंबुबाची-जून के मध्य पर आधारित होता है। मुखौटे को तराशने के लिए लोहे के औजारों का उपयोग किया जाता है और इन मुखौटों में चिकनी बनावट प्राप्त करने के लिए रेत के कागज का उपयोग किया जाता है। मुखौटे को रंगने के लिए राख, सिंदूर, सफेद और केसर का उपयोग किया जाता है, मिट्टी और सब्जी के रंग का उपयोग मुखौटे को पूरा करने के लिए किया जाना है। अधिकांश नृत्य प्रदर्शन रामायण, महाभारत और अन्य पौराणिक कथाओं पर आधारित हैं (चित्र नं 8)

उड़ीसा अपने कागज और लकड़ी के मुखौटे के लिए जाना जाता है जो पारंपरिक जड़ों-महाकाव्यों, पौराणिक कथाओं, लोक कथाओं आदि पर आधारित हैं। चित्र कारीगर समुदाय द्वारा बनाए गए उड़ीसा के राम मुखौटों की ऊंचाई 29 सेमी और चौड़ाई 22.5 सेमी है और इसे गहरे हरे रंग में चित्रित किया गया है और उनके मुकुट को ज्यामितीय डिजाइन और नाल शीर्ष के साथ पीले, सफेद, लाल, हरे रंग में चित्रित किया जाता है। ये मुखौटे पेपर माचे तकनीक से बने हैं (चित्र नं 9)। वैष्णव धार्मिक विरासत असमिया रंगमंच की नींव के रूप में कार्य करती है। कवि और वैष्णव उपदेशक श्रीमंत शंकरदेव ने पंद्रहवीं और सोलहवीं शताब्दी में 'सत्र' की स्थापना की। इस मुखौटा परंपरा के प्राथमिक देवता, जिन्हें 'मत्र' के रूप में जाना जाता है, विष्णु हैं, और गारूर

इसके संरक्षक हैं। सत्र असम का सर्वोच्च वैष्णव संस्थान है। सत्रिया मुख मुखौटे को उनका नाम उस स्थान से मिलता है जहाँ वे बनाए जाते हैं। इस क्षेत्र में मुखौटे के लिए मुख शब्द का उपयोग किया गया है, और जो व्यक्ति उन्हें बनाता है उसे खनीकर कहा जाता है। असम में तीन अलग-अलग प्रकार के मुखौटे बनाए जाते हैं: मुख मुखा फेस मुखौटे, चो मुख लाइफ साइज मुखौटे (लंबाई में दो में तीन मीटर) और लोटोकोई मुख छोटे आकार के मुखौटे हैं। ये मुखौटे मिश्रित सामग्री से बने होते हैं—देशी बांस, सूती कपड़े, मिट्टी, बाल, आदि, इसलिए हम कह सकते हैं कि सामग्री मुखौटों का महत्वपूर्ण हिस्सा है क्योंकि यह मुखौटे के निर्माण में आवश्यक भूमिका निभाते हैं (चित्र नं 10), इसलिए हम कह सकते हैं कि सामग्री मुखौटे का महत्वपूर्ण हिस्सा है क्योंकि यह मुखौटे के निर्माण में आवश्यक भूमिका निभाते हैं।



चित्र नं 8. खार मुखौटे, चित्र नं 9, राम मुखौटा  
भारतीय संग्रहालय कोलकाता



चित्र नं 10. अरिहानुर के मुखौटा  
भारतीय संग्रहालय कोलकाता

**मुखौटा बनाने की तकनीक:**— विभिन्न क्षेत्रों और समुदायों के मुखौटे आकार, रूप, डिजाइन आदि में भिन्न होते हैं। in early era the masks were made in simplified form, now some innovative decorations

have changed their aesthetic value. (प्रारंभिक युग में मुखौटे सरल रूप में बनाए जाते थे, अब कुछ नवीन मजावटों ने उनके मौंदर्य मूल्य को बदल दिया है।) मुखौटे बनाने के लिए उपयोग किए जाने वाले तरीकों और आपूर्ति को इस अध्याय में शामिल किया जाएगा। कलाकार और शिल्पकार विभिन्न तरीकों का उपयोग करके मुखौटे बनाते हैं। ये तकनीक, जिनमें से कुछ को आमतौर पर पेपर माचे, लकड़ी, धातु, पत्थर आदि के रूप में जाना जाता है, प्रसिद्ध हैं और दुनिया भर में उपयोग की जाती हैं। इनके उदाहरणों में कागज और लकड़ी या अन्य गैर-टिकाऊ सामग्री से बने मुखौटे शामिल हैं। इसके अलावा मुखौटे बनाने के लिए कई अलग-अलग प्रकार की सामग्री का उपयोग किया जाता है जैसे फाइबर, धातु, थर्मोकॉल आदि हैं।

हमने इस लेख में कई प्रकार के मुखौटों का संक्षिप्त अवलोकन प्रदान करने का प्रयास किया है। यह लेख मुखौटों के विभिन्न पहलुओं और विभिन्न क्षेत्रों में उनके उपयोग और तकनीक को दर्शाता है। यह लेख अतीत से लेकर वर्तमान तक के मुखौटों को प्रकाश में लाने का एक छोटा सा प्रयास है। इनमें से अधिकांश मुखौटे अब दुनिया भर के संग्रहालयों में संरक्षित हैं और अनम जैसे कुछ राज्यों की सरकार ने इन मुखौटों को संरक्षित करने का प्रयास किया है। प्रागैतिहासिक युग से लेकर आध्यात्मिक और रचनात्मक विश्वास के रूप में मुखौटे का प्रभाव स्पष्ट रूप से पड़ता है। क्षेत्रिय मुखौटे की सामग्री और निर्माण का उस संस्कृति और परिवेश पर गहरा प्रभाव पड़ता है। प्रागैतिहासिक मुखौटा का मुख्य लक्ष्य दिव्य शक्ति से जुड़ना है।

**संदर्भ सूची :-**

1. The Pioneer. Sangeet Natak Academy Library. 22nd Jan 2000.
2. Anati Fradkin Ariela, Anati Emmanuel. Mind, Man and Mask In Prehistoric art, Mind Man and Mask, Indira Gandhi National Centre for the arts, New Delhi, ISBN-81-7305-192-5,2001.
3. -Ibid-1.
4. Thongtawee Chollada. Mask in performing arts: The change in spiritual and artistic value through evolution of social context, Journal of Advance in Humanity and Social Science, 2016, 2(2): 98-106, ISSN: 2414-3111.
5. Hamilton Laine Stephanie. Making Roman Theatrical Masks: An Aspect of Ancient Performance Culture. Acta lassyensja Comparations, 9/2011.
6. Malik S.C., Mind and the mask, Indira Gandhi National Centre for The Arts New Delhi, ISN-81-7305-192-5, 2001.
7. Menon M Divya. D Sreejith. Reading Theyyam As An Archive Of The Subaltem Community of Northern Kerala. SnodhKosh Journal of Visual and Performing Arts. ISSN (Online): 2582-7472. July - December 2021 2(2).
8. Ibid-6.
9. Pan Kelly, Goel Anuva, Akin Lilliana, Patel R.Sutchim, MD, Through Plagues and Pandemics: The Evolution of Medical Face Masks, RIMI Archives. Rhode Island Medical Journal, December 2020.
10. Ibid-8

**Website :-**

1. <https://www.bharatonline.com>
2. <https://www.sahapedia.org>
3. <https://gaatha.com>
4. <https://iguca.gov.in>
5. <https://en.wikipedia.org>

# रिपोर्ताज विधा : युद्ध वर्णन और धर्मवीर भारती की युद्ध यात्राएँ

डॉ. चन्द्र प्रकाश शर्मा

सहायक आचार्य, राजकीय महाविद्यालय, दौसा, राजस्थान

शोध सार:-मानव की यह प्रकृति रही है कि वह समाचारों के प्रति निरंतर उत्सुक रहता है। दुनिया के किसी भी भू-भाग में भूकंप, बाढ़, सूनामी, तूफान, अकाल, महामारी जैसी प्राकृतिक आपदाएं तथा युद्ध, कांति, आतंक जैसी घटनाएं पटित होती हैं तो माहित्यकार भी अपनी संवेदनाओं को ममेटे उम पटना की जांच पडतान के लिए यात्रा पर निकल पड़ता है। यह संवेदना पक्ष ही घटना की रिपोर्टिंग को रिपोर्ताज जैसी साहित्य की विधा बनाता है। हिंदी में भी युद्ध जैसी घटनाओं पर बरी संख्या में अनेक माहित्यकारों द्वारा रिपोर्ताज लिखे गए हैं। हिंदी में युद्ध के मोर्चे में रिपोर्ताज लेखन में धर्मवीर भारती का नाम सबसे पहले रखा जाएगा। युद्ध के मोर्चे पर जाकर युद्ध के आँखों देखे हाल का का जैसा वर्णन उन्होंने किया वैसा हिंदी में उपलब्ध नहीं है। उनका पड़ना रिपोर्ताज 'मुर्दों का टीना' 'हंस' में छप था, कुछ छिटपुट रिपोर्ताज जैसे पार्क निडिगा और सडक की नालटेन', 'संत मुए क्या रोडए' आदि भी अपनी त्रिशिष्ट उपस्थिति को रेखांकित करते हैं परंतु उनकी ख्याति का मुख्य आधार बांग्लादेश संबंधी रिपोर्ताज है। सितंबर 1971 में धर्मयुग के प्रधान संपादक के रूप में भारती जी ने मुक्तिवाहिनी के सहयोग में बांग्लादेश की गुप्त यात्रा की थी। फिर दिसंबर 1971 में भारतीय बलमेना के सहयोग से भारत पाक युद्ध के वास्तविक मोने पर जाकर रोमांचक अनुभव जुटाये। में मारे रिपोर्ताज उम समय धर्मयुग के अंकों में प्रकाशित होते रहे। इनमें मुक्तिवाहिनी के अदम्य माहम, निःस्वार्थ राष्ट्रभक्ति, स्वाभिमान, मनुष्यता और युद्ध की अनूठी मिसालें दर्ज हैं। गुद्ध के भगावन दृश्य को धर्मवीर भारती ने अपनी आँखों से देखा और उसका वर्णन किया है। युद्ध के मौके पर मटित होते पूरे ब्यौरों को उन्होंने मानवीय संवेदनशीलता के साथ चित्रित किया है।

**बीज शब्द:-**विभीषिका, मुक्तिवाहिनी, महाकाय, आधारभूमि, अपरिहार्य, कल्पनातीत, सहभागी, मोचबिंदी, अभिभूतकारी, उन्मुक्त, भौका, युगनेतना, मर्यातका।

**मूल आलेख:-**साहित्य की विधा के लप में रिपोर्ताज का विकास द्वितीय विश्व युद्ध (सन् 1939) के आसपारा माना जाता है। इससे पहले इसे पत्रकारिता की रिपोर्ट के रूप में ही जाना जाता था। द्वितीय विश्व युद्ध के समय अनेक माहित्यकारों ने युद्धक्षेत्रों से महायुद्ध की विभीषिका का ऐसा जीवंत वर्णन प्रस्तुत किया कि पूर्व प्रचलित रिपोर्ट अपनी विधागत सीमाओं को तोड़कर रिपोर्ताज के रूप में अपना स्वरूप नहती दिखाई पढनी है। डॉ. कृष्ण देव सारी का मानना है कि 'द्वितीय विश्वयुद्ध की विभीषिकानों हीरोशिमा और नागासाकी के विनाश का जो मर्मांतिक विवरण पत्रकारों और साहित्यकारों ने प्रस्तुत किया, वही इस विधा के प्रादुर्भाव और विकास की कहानी है।' युद्ध की इन विभीषिकाओं को पाठक के समक्ष प्रस्तुत करने वाले इन लेखकों ने एक ओर

मनुष्य की संवेदनाओं को अकोग तो इमरी और राष्ट्रीय भावना ने ओतप्रोत अपने देश के सहामी योद्धाओं के पराक्रम एवं बलिदान का आँखों देखा ऐसा जीवन वर्णन प्रस्तुत किया जो पाठकों को अपनी आँखों के समक्ष प्रत्यक्ष महसूस हुआ। कमी साहित्यकारों ने इस विधा को बहे मनोयोग से अपनाया। रूसी साहित्यकार 'एत्रिया एहरनबर्ग सन 1936 के आसपास रिपोर्ताज लेखक के रूप में बहुत प्रसिद्ध हुए।

अमेरिका के 'डॉस पैसोस', फ्रांस के 'आधे मेसरीज', इंग्लैंड के 'क्रिस्टोफर इथरवुड शादि प्रसिद्ध पश्चिमी रिपोर्ताज लेखक हैं जिन्होंने इस विधा को पश्चिम में बढ़ावा दिया। इनके माथ ही रूस के एक अन्य लेखक 'जान हीन' हैं, जिन्होंने रूम की नमाजवादी कानि पर रिपोर्ताज लिखे जो कि 'टैन क्षेत्र बैट शुरु व वर्ल्ड पुस्तक में संगृहीत हैं।' प्रथम महायुद्ध के दिनों में 'ग्नो मारिया' द्वारा निखा गया महाकाय रिपोर्ताज 'आँखों देखा महायुद्ध' रिपोर्ताज की पहली पुस्तक होगी, जिस पर कई फिल्मे भी बन चुकी है। इसके पश्चात प्रख्यात कथाकार 'अर्नेस्ट हेमिंगवे के द्वारा स्पेनिश मिविल वार की रिपोर्टिंग के रूप 'टोरेटों स्टार' और 'तुला अत' के लिए लिखी गई रिपोर्टिंग, मूलतः रिपोर्ताज के रूप में निजी गई थी, जिसने पहली बार प्रेमिखे को विख्याति प्राप्त हुई थी। स्पेनिश मिविल वार के अतिरिक्त ये रिपोर्ताज प्रथम महायुद्ध में भी संबंधित हैं। यद्यपि तब इन्हें रिपोर्टिंग ही कहा गया था, किंतु ये रिपोर्ट रिपोर्ताज नाम की नई गद्य विधा को ही जन्म दे रही थीं। ये रिपोर्ताज उनकी 'बाईलाइन' नाम की पुस्तक में संकलित है।

हिंदी रिपोर्ताज के प्रारंभ के विषय में डॉ. हरिमोहन ने जो सूचनात्मक विवरण दिया है उसमें इग विधा को युद्धों की रिपोर्टिंग से जोड़कर लिखा है कि 'रिपोर्ताज विशुद्ध रूप से पत्रकारिता जगत से श्राकर माहित्य के क्षेत्र में प्रतिष्ठित हुई 'नटनापरक' विधा है।.....फ्रांस में प्रयुक्त होने जाना 'रिपोर्ताज' शब्द भारत में आया और अंग्रेजी का रिपोर्ट शब्द ममाचार पत्रों के माध्यम से इस और संकेन करने लगा। फलतः इस विधा को द्वितीय विश्व युद्ध की घटना से जन्म लेने वाली विधा माना जाता है, क्योंकि उस समय पुद्ध की विभीषिका के समाचार रिपोर्ट के रूप में समाचार पत्रों में छपते थे।'।

संवेदना पक्ष ही घटना की रिपोर्टिंग को पत्रकारिता मे अलग ग्वरूप प्रदान करते हुए रिपोर्ताज नेगी साहित्य की विधा बनाता है। हिंदी में भी युद्ध जैसी घटनाओं पर बड़ी संख्या में जनेक नाहित्यकारों द्वारा रिपोर्ताज लिखे गए हैं। 1966 में भारत-पाकिस्तान युद्ध की आधारभूमि पर शिवसागर मिथ ने 'लखेंगे हजार साल' शीर्षक से रिपोर्ताज लिखे। भदंत आनंद कौसल्यायन की कृति 'देश की मिट्टी बुलाती है' (1966) में कई महत्वपूर्ण रिपोर्ताज हैं। शंकर दयाल सिंह ने भारत-पाक के 1965 और 1971 के युद्धों को लेकर कई

महत्त्वपूर्ण रिपोर्टाज निषे हैं। 'युद्ध के चौराहे नक' (1969) में पहने 'युद्ध' और 'युद्ध के आस पाग' संग्रह में दोनों युद्धों से संबद्ध रिपोर्टाज हैं। इसके अतिरिक्त रेणु ने 1965 के भारत पाकिस्तान युद्ध पर 'युद्ध की डायरी' तथा बांग्लादेश के मुक्ति संग्राम पर 'पुन अश्रुत पूर्व' नाम में रिपोर्टाज लिखे हैं। पाकिस्तानी पत्रकार महमूद नाम का एक रिपोर्टाज 'गुद्ध छिड़ता है तो खून दोनों ओर बहता है। शीर्षक से 'सारिका' में खपा जिनमें गुद्ध तथा दोनों देश के लोगों के अमन पसंद स्वभाव और राद्दावना को व्यक्त किया गया है।<sup>१</sup>

भारती जी के रिपोर्टाज संग्रह 'युद्ध-गात्रा' की भूमिका में 'पुष्पा भारती' ने लिया है कि 'वहाँ जो कुछ देखा और सुना उसे दुनिया को विश्वाने और सुनाने के लिए बालकृष्ण के द्वारा लिए गए चित्रों और अपनी कलम को हथियार बनाकर धर्मगुग के पृष्ठों को एक अनोखी अभूतपूर्व लड़ाई का मैदान बनाकर दिखा दिया इसके पहले भी इतिहास में अनेक युद्ध हुए हैं और पत्रकारों ने युद्ध की रिपोर्टिंग भी की है-जनता ने मत्र जाना है उनके निचे रिपोर्टाज के माध्यम ते। पर सभी ने देश की सीमा रेखा पर जाकर बुद्धभूमि में मिलते ममाचारों के आधार पर अपने लेख लिखे थे। धर्मवीर भारती नाम का यह पत्रकार तो टान बेटा था कि ऐसे नहीं-उसे जो अपनी खुली आँखों से मुद्द होते हुए देखना और लिखना है-आँखों देखा हाल। अपनी जान का जोश्विम नेकर उम दृढनिश्चयी पत्रकार ने वह कर दिखाया जो कल्पनातीत था, असंभव दीखने वात्रा अनोखा रोमांचक सत्य था।<sup>१</sup>

मनुष्यता और बर्बर पाशात्रिकता के भीषण बेलको भारती जी ने अपनी आँखों से देखा। यह भयात्रह जोखिम गहन आस्मा और अटूट मनुष्य निष्ठा के बिना असंभव था। दिनंबर 1971 की यात्रा के सहयात्री विष्णुकांत शाम्त्री ने उस जोखिम को रेखांकित करते हुए लिखा है शायद ही उनसे पहले किसी हिंदी पत्र के प्रधान संपादक ने अपने प्राणों को जाजी पर लगाकर इस प्रकार का आँखो देखा, अपने पर बीता युद्ध संस्मरण लिखा हो। शाम्त्री जी ने अपने रिपोर्टाज 'बांग्लादेश में भारती जी के साथ में लिखा है कि युद्ध के मोर्चे पर जाने का कैसा उल्लाह भारती जी में था कि भारतीय सेना के अधिकारियों के द्वारा एक बार रोक दिए जाने पर उनका मन व्यथित हो गया था-'हम लोग भारी मन से अपने होटल लौटे। भारती जी बहुत क्रुद्ध और शुन्ध ये। उन्होंने दृढतापूर्वक कहा कि 'हम लोगों को रोकने का इन्हें कोई हक नहीं है। न य नोग इनके बुलाने पर आए हैं, न उनके अनुमतिपत्र में हम बांग्लादेश में कोई सुविधा प्राप्त करेंगे।'<sup>१</sup>

युद्ध की भीषण विनाशलीला को धर्मवीर भारती ने अपनी आँखों से देखा और उसका वर्णन किया है। युद्ध के मौके पर पटित होते पूरे न्यौरों को उन्होंने मानवीय संवेदनशीलता के माथ चित्रित किया है। 'धर्मवीर भारती ग्रंथावली' में भारती जी की जो भूमिका छपी है उसमें उन्होंने इस विषय को उठाते हुए लिखा है कि-'और इससे भी ज्यादा गोमांचक और अर्धबान होता है किमी देश की क्रांतिकारी उधन-पुथल में स्वयं सहभागी रहना और वहाँ की जनता के मुक्ति आंदोलन का एक भाग बन सकना। यह मेरा भाग्य ही समशिए कि बांग्लादेश के मुक्ति मंग्राम में साथी बनने का अवसर मिला। हवाई हमलों, फूटने बमों, गरजनी नोपों, बरसती गोलियों, जलनी जीपों और खेतों में विद्धरी लाशों के बीच से गुजरना उन। कहाँ गया था भय उस समय?'<sup>१</sup>

इस युद्ध के समूचे संघर्ष के भयोवह परिणामों और बने जीवन की त्रासदी की ओर भी भारती जी ने जहाँ तहाँ अवसर पाने ही ध्यान दिलाया है। ये वर्णन कोरे ब्यौरे नहीं है, बरिक् संवेदना पर लेले गये प्रत्यक्ष आमान है। भारती जी की मंवेवता के अनेक साक्ष्य इन रिपोर्टाजों में भरे पड़े हैं। एक अंग यहाँ उद्धृत है..... बाहर अंधेरा, अंदर एक उदामी। जाते ही जाने आत्मीय वन

जाने वाले इस क्षेत्र में लौटते समय कैसा तो लग रहा है और अगर अवटूबर नवंबर में फिर गब और मे वमहाय बनेने लोगों पर पाकिस्तानी टैंक और बमबार टूट पड़ेगे तो। इनकी स्वाधीनता को स्वीकार कर इनके साथ कंधा मिलाकर कोई न घड़ा हुआ तो। एक-एक व्यक्ति ने चलते समय उमगर किया है कि फिर आवएगा। लेकिन अगर हम फिर आये भी तो जिन्होंने बुलाया है, ये मिलेंगे क्या? कितना गाद्दा, कितना अपरिहार्य अंधेरा है।<sup>१</sup> और लेखक ने मुक्तिवाहिनी के इस स्वाभिमान को अपने रिपोर्टाजों में इस तरह दर्ज किया है 'कैप्टेन उगी नांत भाव में मेरी ओर बहुत विश्वास में देखकर कहते है, फैक्ट्स, नयिंग बट फैक्ट्स तथ्य के अलावा कुछ भी नहीं। आप जो कुछ देख रहे हैं केवल वही लोगों तक पहुंचाइए। वे तथ्य ही हमारी बात कह देगे। हम कोई रियायत नहीं चाहते, कोई अतिरिक्त ग्नोरिफिकेशन (प्रभामंडल) नहीं।'<sup>१०</sup>

युद्ध के ममय बातावरण किस तरह का होता है, हर तरफ आश्वर्यचकित कर देने वाली घटनाएँ घटित होती है और प्रत्येक क्षण कौतुहल बना रहता है। इसका चित्रण भारती जी रिपोर्टाज में देखा जा सकता है-गोष्वति वेता और भी बेचैन कर जाती है हमेशा। आज तो और भी। यौं। करीब 6 बजे मारी बतियां गुल हो जाती है। सायरन बजने लगते है चारों ओर अन्धा पुष्प। यह हुआ क्या? बात क्या है?'<sup>११</sup>

युद्ध के मोर्चे को पाठक के समक्ष जीवंत कर देने वाले ये वर्णन ही धर्मवीर भारती के रिपोर्टाज नेखन कौशल की विशेषता है। नाना प्रकार के श्रमायो के नाम नड़ते हुए मुक्ति मेनिको की अंततः विजय की श्राधार भूमि मनुष्यता का चरम मूल्य इस अंश में दृश्य है, जो अपने कमांडर को भी मैन्यूट करने के लिए विवश कर देता है। दो पाकिस्तानी मैनिक पेट्रोलिंग कर रहे थे अचानक उनका सामना भारतीय मैनिक में हो जाता है दोनों तरफ से गोली चली, एक को गोनी नगी और वह गिर पड़ा, इमरा भागना है और वह फिर लौट कर आता है। वह पास आकर पहले वाले मृत सैनिक को उठाकर कंधे पर लाद कर ले जाना चाहता है। भारती जी ने इस दृश्य को कितनी संवेदना के माथ निता है वह देखने लायक है। मैंने बंदूक माधी, पर फिर नीची कर ली। उस वक्त मुझे लगा कि वह तो सिर्फ अपने दोस्त का दोस्त है। उस समय दुश्मन नहीं। मैंने गोली नहीं चनायी। मैं कसूरवार है। आप जो मजा दें, कबूल है। मैंने उसकी ओर देखा। फिर खड़ा हुआ और उसे मैंने मैन्यूट दी। उसने कहा, आई एम प्राउट ऑफ यू। बात यह है कि बहादुर आदमी मूणा भी बहुत बड़े दिल से करता है, डरता नहीं।<sup>१२</sup>

भारती जी के ये रिपोर्टाज अब उनकी ग्रंथावली में संकलित हैं। ग्रंथावली के संपादक डॉ. चंद्रकांत बांदिवडेकर द्वारा सातवें भाग में 'युद्ध यात्राएँ' नाम से उन्हें संकलित किया है। डम खंड में उन रिपोर्टाजों को तीन उपभागों में बाँटा गया है-'मुक्तिक्षेत्रे युद्धक्षेत्र', 'युद्ध गात्रा', और 'बुद्धोपरांत'। धर्मवीर भारती ग्रंथावली के संपादक चंद्रकांत बांदिवडेकर ने ग्रंथावली की भूमिका में भारती के उस पात्रा लेखन पर उनकी डम सूजन कला को इस प्रकार शब्दबद्ध किया है-'यथार्थ कैसे रोमांचक होता है, प्रकृति कैने मानवीय संस्पर्श से सघाण होती है, अदम्य साहसिकता कैसे सहज क्रीड़ा बनती है, बौद्धिक तत्लाश कैसे सुखमय और बहु प्रसवा होती है, नए लौक, नए प्रदेश, नए रीति-रिवाज, नई विचारधाराएँ कैसे आत्मीयता के घेरे में आकर आंनोकित करती हैं, इस सबका अनुभव ओतप्रोत है इस में।<sup>१३</sup> जो रिपोर्टाज उन्होंने लिखे वे बेजोड हैं और हिंदी रिपोर्टाज के उत्कर्ष को सिंचित करते हैं। युद्ध पर रिपोर्टाज लेखन भारती जी के उत्साही लेखन के लिए उठाये गए साहितिक प्रयवों का फन है। निञ्जय ही युद्ध की पृष्ठभूमि पर साहित्य निखना एक कनि के निए साहस का काम है। विष्णुकांत शाम्त्री भारती जी की दूसरी बांग्लादेश यात्रा में उनके

सहजर थे। उनके रिपोर्टाज 'बांगलादेश के संदर्भ में' (1973) शीर्षक से पुस्तकाकार प्रकाशित हुए। जैसे ये रिपोर्टाज अपने निखे जाने के साथ ही धर्मगुग में प्रकाशित होते रहे। इन्हें देश की जनता का अभिभूतकारी लेह मिला। उस समय को बाद करने हुए उन्होंने पुम्नका की भूमिका में उन्होंने लिखा है- 'कैमे अद्भुत थे वे दिन। उतेजना, विक्षोभ और उत्साह का जैमा अनुभव उन दिनों हुआ वैसा कभी नहीं हुआ था, कहीं विश्वविद्यालय का शांतिपूर्ण प्राध्यापक जीवन और रहों, युद्ध के मोर्चों पर अर्द्धसैनिक वेश में गोलों के धमाकों के बीच मुक्ति योद्धाओं का माहचर्य।

शरणार्थियों की दुर्दशा देखकर रुतेजा मुंह को आता था, तो बांगलादेश के नौजवान कार्यकर्ताओं की निष्ठा और लगन आश्चर्य करनी थी कि स्थिति पलट कर रहेगी।<sup>14</sup>

उनके 'मुक्तियोद्धाओं के शिविर में' रिपोर्टाज का यह अंश वर्तमान विषय के पनि उनकी गहरी समझ और श्रात्मीग प्रेम का अनूठा साध्य है जिसमें वे एक बांगला गीत का उल्लेख करते हैं 'दि अभी तक निकला नहीं था। और निस्तन्हाना और घने अंधेरे के बीच उस ऊबड़ साबड़ गम्ने पर दौड़ रही थीं दो नीपें, और यह हवा-यह उन्मुक्त प्राक्तिक विस्तार। सामने में कोई जंतु दौड़ गया। ब्रेक के अटके ने विचारधारा को भी सकझोर दिया। लगा ऐसा ही अंधेरा बांगलादेश के उपर भी छा गया है, क्या वह दूर होगा? और तभी मेरे मन में काँध गयीं नमीमुन आग की पत्कियाँ ए आमार कुलप्लानी का क्षण दूबे, तिमिर हननेर गान आमार कटे (किनारों को बुबा देने वाला यह अँधेरा टिक सकेगा कितनी देर, अँधेरे को चीर देने वाला गाना है मेरे कंठ में) कैप्टेन गशीद और उनके साथी अंधेरे को चीर देने की साधना में ही तो लगे हैं।<sup>15</sup> 'बांगलादेश के संदर्भ के में रिपोर्टाज संग्रह के अलावा भी उनके और कई रिपोर्टाज पत्र पत्रिकाओं में छपे।

रिपोर्टाज का उद्देश्य मार्मिक पटनाओं के माध्यम से संवेदनाओं को जाग्रत करना और कटु सत्य को मामने लाना होता है। किमी मटना के ब्यौरों की प्रधानता तो होनी ही है माय ही रिपोर्टाज में युगनेतना, मानवीय विषमताओं का चित्रण, जीवन मूल्यों के द्वंद का वर्णन, जनसामान्य व परिवेश में जुद्राव भी होता है जो किमी भी रिपोर्टाज को पेश बनाता है। वर्तमान में रिपोर्टाज त्रिधा केवन किमी नहीं पटना पर ही आधारित नहीं रह गई है। अब छोटी-छोटी पटनाएं व प्रसंग भी रिपोर्टाज के विषय बनने लगे हैं। अब इना विधा का विषय विस्तार भी व्यापक हुआ है गाँव से लेकर शहर नक तथा पुराने विचारों से लेकर नवीन तकनीक तक विषय बनकर इसमें स्थान पाने लगे हैं। स्वाधीनता के बाद जीवन अधिक मटना मंकुन और विविधनापूर्ण हो गया है। अकान मुखमरी, बाढ और युद्ध में आगे बढ़कर विकास, प्राकृतिक एवं मानत्रकृत आपदाएँ विभिन्न प्रकार की दुर्घटनाएँ, गरीबी, विषमता, प्रकृति-सौंदर्य, आँध, श्रौद्योगिकीकरण, विस्थापन आदि विभिन्न त्रिषय क्षेत्रों तक विस्तार होता चला गया है। यह बात सही है कि रिपोर्टाज का लेखन मामान्यतः वर्तमान-कालिक घटनाओं पर होता है किंतु यह भी सच है कि यह मानव जीवन के निकट का माहित्य है जो उमे वास्तविकता के करीब बनाये रखता है। नो रिपोर्टाज भारती जी ने निश्च वे माहम के पर्याय हैं तथा शिल्प की दृष्टि से भी बेजोड़ हैं और हिंदी रिपोर्टाज के उत्कर्ष को निन्द करत है। युद्ध पर रिपोर्टाज लेखन भारती जी के उत्माही लेखन के लिए उठाये गए माहसिक प्रयत्नों का फल है। कभी कभी रचनाकार मटनाओं का दर्शक मात्र न रहकर स्वयं भोक्ता भी बनता है जैना कि बंगाल के अकाल के समय रांगेय राभव ने, स्वतंत्रता आंदोलन के समय कन्हैयालाल मित्र प्रभाकर ने, पटना जलधनय के समय रेणु ने जैसा देखा और भोगा उसका मार्मिक वर्णन प्रस्तुत किया। उसी तरह से गिलादेश गुद्ध के सथम

धर्मवीर भारती व विष्णुकांत शास्त्री ने स्वयं भोक्ता तथा साक्षी बनकर युद्ध की घटनाओं को पाटक के सामने जीवंत किया है। युद्ध क्षेत्र के मोर्चे में ऐसा सजीव वर्णन भारती जी जैसे साहसी लेखक ही कर सकते हैं। युद्ध जैसी इन हृदय विदारक घटनाओं पर जो रिपोर्टाज का अत्यंत संवेदनशील विषय हो सकता था, पता नहीं क्यों रिपोर्टाज लेखन प्रायः न के बराबर हुआ है। इसी तरह की और भी ऐसी अनेक घटनाएँ जैसे भोपाल गैस त्रासदी, कारगिल युद्ध, कर्ज में दूबे किसानों के द्वारा की जा रही आत्महत्याएँ, जंगलो से आदिवासियों का विस्थापन, भूखलन की केदारनाथ जैत्री त्रासदियों आदि पिछले कई सालों व दशकों के दौरान भारत में परित हुई हैं जिन पर रिपोर्टाज लेखन की आधिक संभावनाएँ भी पर उन पर उस प्रकार का लेखन नहीं हुआ।

संदर्भ सूची:-

1. डॉ. कृष्णदेव झारी व डॉ. मुरेश गौतम, साहित्य सिद्धांत और साहित्य विधाएँ, शारदा प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्रथम संस्करण, 1999, पृ.सं.-142
2. अरुण प्रकाश, गद्य की पहचान, अंतिका प्रकाशन, गाजियाबाद, पटना में. 2012, पृ.सं.- 169
3. डॉ. श्रीनिवास शर्मा, माहित्यिक विधाएँ- सिद्धांत और विकास, के. एस. पनौरी प्रकाशन, गाजियाबाद, प्रथम संस्करण, 2002, पृ.सं.- 210
4. डॉ. हरिमोहन, साहित्यिक विधाएँ पुनर्विचार, दिवि पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रिब्यूटर्स, नयी दिल्ली, प्रथम संस्करण, 1999, पृ.सं.-273
5. सारिकावर्ष 15, अंक 162, अगस्त 1975
6. धर्मवीर भारती, युद्ध यात्रा, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र. सं. 2020, भूमिका भाग
7. में. जुगल किशोर जेथलिया, विष्णुकांत शास्त्री चुनी हुई रचनाएँ खण्ड 2, थी बहाबाजार कुमारसभा पुस्तकालय, कोलकाता, प्र. सं 1973, पृ. नं. 176
8. में. चंद्रकांत बादिवडेकर, धर्मवीर भारती ग्रंथावली वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, नं. 1998, खंड 7, भूमिका भाग
9. वही, पृ. सं. 146
10. वही, पृ. सं.-146
11. धर्मवीर भारती, बुद्ध यात्रा, वृद्धः अप्रत्याशित आरंभ, वाणी प्रकाशन, नवी विन्नी, प्र.सं. 2020, पृ. नं. 25
12. में. चंद्रकांत मादिवडेकर, धर्मवीर भारती संभावती, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, म. 1998, वड-7, पृ. नं.-151
13. वही, बंड-7, भूमिका भाग
14. विष्णुकांत शास्त्री बांगलादेश के संदर्भ में हिंदी प्रचारक संस्थान, वाराणसी, प्र. सं 1973, भूमिका भाग
15. में. प्रेमशकर त्रिपाठी, विष्णुकांत शादी रचना संचयन, मुक्तियोद्धाओं के शिविर में, साहित्य आकादेमी, नई दिल्ली, प्र.सं 2024, पृ. सं.291

# उत्तर प्रदेश के विभिन्न कृषि क्षेत्रों में मृदा स्वास्थ्य पर जैविक और रासायनिक खादों के प्रभाव का तुलनात्मक अध्ययन

डॉ. देवेन्द्र कुमार स्वर्णकार

असिस्टेंट प्रोफेसर, डा. मातिवर सिंह पी.जी. कॉलेज पूराउत्तम, जमालपुर, मड़ियाहूँ, जौनपुर

सारांश:- यह शोध पत्र उत्तर प्रदेश के विभिन्न कृषि क्षेत्रों में जैविक एवं रासायनिक खादों के उपयोग से मृदा स्वास्थ्य पर पड़ने वाले प्रभावों का तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत करता है। अध्ययन में मुख्यतः पूर्वी, पश्चिमी, मध्य और तराई क्षेत्रों के प्रमुख कृषि जिलों को शामिल किया गया है। शोध के निष्कर्ष दर्शाते हैं कि दीर्घकालिक रूप से जैविक खादें मृदा की उर्वरता, सूक्ष्मजीव गतिविधियों और संरचना को बेहतर बनाती हैं, जबकि रासायनिक खादों का अत्यधिक उपयोग मृदा की भौतिक, रासायनिक एवं जैविक गुणवत्ता को नकारात्मक रूप से प्रभावित करता है।

**शब्द कुंजी:-** मृदा स्वास्थ्य, कार्बन, प्रदूषण, जैविक खाद, रासायनिक खाद।

**परिचय (Introduction):-** कृषि भारत की अर्थव्यवस्था की रीढ़ है, और उत्तर प्रदेश देश का प्रमुख कृषि राज्य है। अधिकतम उपज प्राप्त करने हेतु रासायनिक खादों का अत्यधिक उपयोग पिछले कुछ दशकों में बढ़ा है। हालाँकि, इसके दुष्परिणाम जैसे मृदा की उर्वरता में गिरावट, जल प्रदूषण और पारिस्थितिकी तंत्र पर नकारात्मक प्रभाव सामने आए हैं। दूसरी ओर, जैविक खादें जैसे गोबर की खाद, वर्मीकम्पोस्ट, हरी खाद और जैव उर्वरक मृदा की दीर्घकालिक उर्वरता को बनाए रखने में सहायक सिद्ध हो रहे हैं। शोध की उद्देश्य (Objectives):-

- जैविक एवं रासायनिक खादों के उपयोग से मृदा स्वास्थ्य में होने वाले परिवर्तनों का विश्लेषण करना।
- उत्तर प्रदेश के विभिन्न कृषि क्षेत्रों में इन खादों के उपयोग की प्रवृत्तियों का मूल्यांकन करना।
- मृदा की भौतिक, रासायनिक और जैविक गुणों पर खादों के प्रभाव का तुलनात्मक अध्ययन करना।
- टिकाऊ कृषि के लिए उपयुक्त सिफारिशें प्रस्तुत करना।

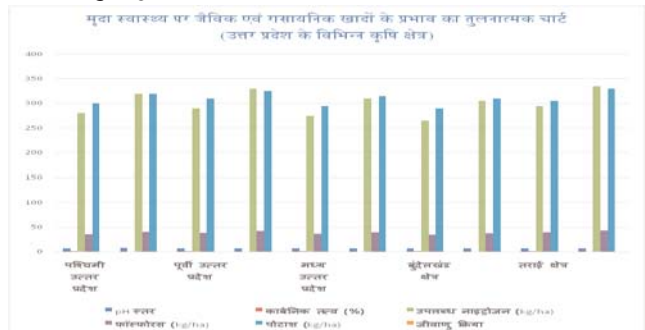
**सामग्री एवं विधियाँ (Materials and Methods):-** अध्ययन में उत्तर प्रदेश के चार भौगोलिक कृषि क्षेत्रों से कुल 40 खेतों को चुना गया- 10 खेत जैविक खेती वाले, 10 रासायनिक खेती वाले और 20 मिश्रित खेती वाले। मृदा नमूनों का संग्रह गहराई (0-15 सेमी) से किया गया। निम्नलिखित मापदंडों का विश्लेषण किया गया:-

- pH
- विद्युत चालकता (EC)
- कार्बनिक कार्बन (%)
- नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, पोटैशियम की उपलब्धता

- मृदा जीवाणुओं की संख्या
- सूक्ष्म पोषक तत्वों का स्तर (Fe, Zn, Mn, Cu)

**परिणाम एवं चर्चा (Results and Discussion):-**

- pH और EC:-** रासायनिक खादों के लगातार प्रयोग से कई स्थानों पर मृदा का pH अम्लीय हुआ, जबकि जैविक खादों ने pH को तटस्थ बनाए रखा। EC में रासायनिक खादों के खेतों में वृद्धि पाई गई जो लवणता बढ़ाने का संकेत देती है।
- कार्बनिक कार्बन:-** जैविक खादों वाले खेतों में औसतन 1.2% कार्बनिक कार्बन पाया गया जबकि रासायनिक खादों वाले खेतों में यह मात्र 0.6% था। मिश्रित खेतों में यह 0.9% के आसपास रहा। इससे स्पष्ट होता है कि जैविक खादें मृदा के कार्बनिक पदार्थों को संरक्षित करती हैं।
- पोषक तत्व उपलब्धता:-** रासायनिक खादों से NPK की उपलब्धता तत्काल होती है, लेकिन दीर्घकालिक स्थायित्व नहीं रहता। जैविक खादों से पोषक तत्वों की उपलब्धता धीरे-धीरे होती है किंतु मृदा की संरचना को स्थिर बनाए रखती है।
- मृदा सूक्ष्मजीव विविधता:-** जैविक खादों से समृद्ध खेतों में जीवाणुओं और फफूंदों की अधिक संख्या पाई गई, जो मृदा की जीवंतता और पोषक तत्व चक्रण में सहायक होते हैं। रासायनिक खादों से जीवाणु संख्या में गिरावट देखी गई।
- सूक्ष्म पोषक तत्व:-** Zn, Fe और Mn जैसे सूक्ष्म तत्व जैविक खादों वाले क्षेत्रों में संतुलित पाए गए, जबकि रासायनिक खादों के अत्यधिक प्रयोग ने कुछ सूक्ष्म तत्वों की कमी उत्पन्न की।



**क्षेत्रवार अवलोकन (Regional Observations):-**

- पूर्वी उत्तर प्रदेश (जैसे गाजीपुर, देवरिया):- यहाँ जैविक खादों के प्रयोग से धान और गेहूँ की उत्पादकता में दीर्घकालिक सुधार देखा गया।

- पश्चिमी उत्तर प्रदेश (जैसे मेरठ, मुजफ्फरनगर):-रासायनिक खादों का अत्यधिक उपयोग मृदा की लवणता को बढ़ा रहा है।
- मध्य उत्तर प्रदेश (जैसे कानपुर, लखनऊ):-मिश्रित खाद उपयोग प्रचलन में है और मृदा स्वास्थ्य में संतुलन देखा गया।
- तराई क्षेत्र (जैसे पीलीभीत, बहराइच):-जैविक खादों के उपयोग से जलधारण क्षमता और फसल गुणवत्ता में वृद्धि देखी गई।

#### विश्लेषण:-

- जैविक खादें मृदा के कार्बनिक तत्व और जैविक सक्रियता को बढ़ाती हैं, जिससे मृदा दीर्घकालीन रूप से उपजाऊ बनती है।
- रासायनिक खादें तात्कालिक उत्पादन बढ़ा सकती हैं, लेकिन लंबे समय में मृदा की गुणवत्ता और सूक्ष्मजीवों की क्रियाशीलता को कम कर सकती हैं।

#### चुनौतियाँ (Challenges):-

- जैविक खाद की सीमित उपलब्धता
- किसानों में जागरूकता की कमी
- बाजार में जैविक उत्पादों की उचित कीमत न मिलना
- नीति और सरकारी सहायता की आवश्यकता

#### सिफारिशें (Recommendations):-

1. सरकार द्वारा जैविक खादों के उत्पादन एवं वितरण को बढ़ावा देना।
2. किसानों को प्रशिक्षण एवं जागरूकता कार्यक्रम के माध्यम से शिक्षित करना।
3. जैविक खेती के उत्पादों को मूल्य आधारित बाजार उपलब्ध कराना।
4. रासायनिक खादों के अंधाधुंध उपयोग पर नियंत्रण और संतुलित उपयोग का प्रचार।

#### निष्कर्ष (Conclusion):-

इस अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि जैविक खादें मृदा के स्वास्थ्य, संरचना और उत्पादकता को दीर्घकालिक रूप से बेहतर बनाती हैं, जबकि रासायनिक खादें अल्पकालिक लाभ देती हैं किंतु दीर्घकाल में मृदा को नुकसान पहुंचा सकती हैं। उत्तर प्रदेश जैसे कृषि प्रधान राज्य में सतत और संतुलित खेती के लिए जैविक खादों का प्रयोग बढ़ाया जाना समय की आवश्यकता है।

#### संदर्भ सूची:-

1. भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद (ICAR) रिपोर्ट्स
2. उत्तर प्रदेश कृषि विभाग के आँकड़े
3. "Soil Microbiology and Organic Farming" - Sharma et al. (2020)
4. "Effect of Chemical Fertilizers on Soil Health" - Ramesh et al. (2018)
5. FAO (Food and Agriculture Organization) Guidelines on Sustainable Soil Management (2021)

## द्रेष्काणाधारे अङ्गनां प्रतिनिधिभावः-

गिरीश राजौरिया

शोधार्थी, महर्षि पाणिनि संस्कृत एवं वैदिक विश्वविद्यालय, उज्जैन, मप्र.

मनुष्यशरीरस्य कस्मिन् अङ्गे घातः अथवा ग्रन्थी भविष्यति? अस्य विचाराय प्राचीनाचार्यैः द्रेष्काणाधारे शरीरस्य भागत्रयाणां कल्पनां कृत्वा लग्नादिभावान् शरीरस्य विभिन्नाङ्गानां प्रतिनिधयो मन्यते यथा-

यदि लग्ने प्रथमो द्रेष्काणो भवेच्चेत् लग्नादिभावाः शिरस्तः मुखं यावत् विभिन्नाङ्गानां प्रतिनिधित्वं कुर्वन्ति। अत्र लग्नं शिरसः, द्वितीयद्वादशभावौ क्रमशः दक्षिणवामनेत्रयोः, तृतीयैकादशभावौ क्रमशः दक्षिणवामकर्णयोः, चतुर्थदशमभावौ क्रमशः दक्षिणवामनासापुटयोः, पञ्चमनवमभावौ क्रमशः दक्षिणवामकपोलयोः, षष्ठमाष्टमभावौ क्रमशः चिबुकस्य दक्षिणवामभावयोः तथा सप्तमभावो मुखस्य प्रतिनिधित्वं कुर्वन्ति।

यदि लग्ने द्वितीयो द्रेष्काणो भवेच्चेत् तदा लग्नादिभावाः कण्ठदन्तनाभिं यावत् विभिन्नाङ्गानां प्रतिनिधित्वं कुर्वन्ति। यथा लग्नं कण्ठस्य, द्वितीयद्वादशभावौ क्रमशः दक्षिणवामस्कन्धयोः, तृतीयैकादशभावौ क्रमशः दक्षिणवामहस्तयोः, चतुर्थदशमभावौ क्रमशः दक्षिणवामकक्षप्रदेशस्य, पञ्चमनवमभावौ क्रमशः हृदयस्य दक्षिणवामभागयोः, षष्ठमाष्टमभावौ उदरस्य दक्षिणवामभागयोः तथा सप्तमो नाभिप्रदेशस्य प्रतिनिधित्वं कुर्वन्ति।

यदि लग्ने तृतीयद्रेष्काणो भवेत् चेत् तदा लग्नादिभावाः वस्त्रितः पादपर्यन्तं विभिन्नाङ्गानां प्रतिनिधित्वं कुर्वन्ति, यथा लग्नं वस्त्रितः, द्वितीयद्वादशभावौ क्रमशः लिङ्गमलद्वारयोः, तृतीयैकादशभावौ क्रमशः दक्षिणवामवृषणस्य, चतुर्थदशमभावौ क्रमशः दक्षिणवामौरुभागयोः, पञ्चमनवमभावौ क्रमशः दक्षिणवामजान्वोः, षष्ठमाष्टमभावौ क्रमशः दक्षिणवामजङ्घयोः तथा सप्तमभावः पादयोः प्रतिनिधित्वं कुर्वन्ति।

लग्नादिभावानां रोगाः-

कुण्डल्यां लग्नादिद्वादशभावैः मनुष्यजीवनै घटितायाः प्रत्येकस्याः घटनायाः पूर्वानुमानं क्रियते। केन-केन भावेन के-के रोगा भविष्यन्तीति एतेषां विचारः क्रियते, तत्तु इत्थं प्रकारेण वर्तते-

प्रथमभावः-

एतस्माद् भावात् शिरोवेदनायाः, मानसिकरोगाणाम् एवं स्मरणशक्तेः हासस्य विचाराः क्रियन्ते। अयं भावो व्यक्तेः स्वास्थ्यस्यापि प्रतिनिधिभावो विद्यते। व्यक्तेः शारीरिकमानसिकक्षमतयोः भावेनानेन मूल्याङ्कनं क्रियते।

द्वितीयभावः-

एतस्माद् भावाद् मृत्योः विचारः क्रियते। अयं भावो नेत्ररोगस्य, कर्णरोगस्य, मुखरोगस्य, नासिकारोगस्य, दन्तानां रोगस्य तथा कण्ठरोगस्य प्रतिनिधित्वं करोति।

तृतीयभावः-

एतस्माद् भावात् कण्ठसम्बन्धितविभिन्नरोगाणां, गण्डमालायाः, श्वासस्य, कासस्य, फुफ्फुससम्बन्धितरोगाणाम् एवं हस्तसम्बन्धितविभिन्नरोगाणां

विकाराणाञ्च विषये विचारः क्रियते।

चतुर्थभावः-

एतस्माद् भावाद् वक्षःस्थलस्य, हृदयस्य एवं तत्समकक्षास्थीनां वेदनायाः रोगाणाञ्च विषये विचारः क्रियते, मूढतायाः एवं अन्यमानसिकविकाराणां विषये विचारोऽपि एतस्मादेव भावात् सम्भवति।

पञ्चमभावः-

एतस्माद् भावात् मन्दाग्नेः, अरुचेः, पित्तरोगस्य, यकृतस्य, झिल्लिकायाः एवं मज्जासम्बन्धितरोगाणां विचारः क्रियते। अयं भावः उदरस्य सर्वेषां रोगाणां प्रतिनिधित्वं करोति।

षष्ठमभावः-

एतस्माद् भावात् कटिप्रदेशस्य वेदनायाः, 'एपेण्डिक्स' रोगस्य, आर्नरोगाणां, 'हर्निया' रोगस्य एवं अशमरीरोगस्य विचारः क्रियते।

सप्तमभावः-

एतस्माद् भावात् प्रमेहस्य, मधुमेहस्य, प्रदरस्य, उपदंशस्य, 'पथरी' रोगस्य, गर्भाशयरोगस्य तथा वस्त्रितसम्बन्धितरोगाणां विचारः क्रियते।

अष्टमभावः-

एतस्माद् भावात् गुप्तरोगस्य, वीर्यविकारस्य, अर्शस्य, भगन्दरस्य, उपदंशस्य, संसर्गजन्यरोगस्य, वृषणरोगस्य एवं मूत्रकृच्छस्य विचारः क्रियते।

नवमभावः-

एतस्माद् भावात् स्त्रीणां मासिकधर्मसम्बन्धितरोगाणां, यकृतदोषस्य, रक्तविकारस्य, वायुविकारस्य, जङ्घायुगलयोः वेदनायाः एवं मज्जासम्बन्धितविभिन्नरोगाणां विचारः क्रियते।

दशमभावः-

एतस्माद् भावात् गठिया रोगस्य, कम्पवातस्य, चर्मरोगस्य, जान्वोः पीडायाः एवम् अन्यवातरोगाणां विचारः क्रियते।

एकादशभावः-

एतस्माद् भावात् पादयोः घातस्य, पादयोः अस्थिभङ्गस्य, पिण्डलिकयोः पीडायाः, शीतविकारस्य एवं रक्तविकारस्य विचारः क्रियते।

द्वादशभावः-

एतस्माद् भावात् असहिष्णुतायाः, बलहीनतायाः, नेत्रविकारस्य, 'पोलियो' रोगस्य एवं शरीरसम्बन्धितविभिन्नरोगाणां प्रतिरोधक्षमतायाः अभावस्य विचारः क्रियते।

संदर्भ सूची:-

1. वृहज्जातकः पूर्वाद्धृत, अ० 5, श्लो० 24।
2. जायावत् परिजातः पूर्वाद्धृत, अ० 3, श्लो० 77

## मुक्तिबोध के काव्य दर्शन : एक समीक्षा

अर्जुन पासवान

शोधार्थी, कॉटन विश्वविद्यालय, गुवाहाटी

आधुनिक नयी कविता के प्रखर एवं लोकप्रिय कवि थे-मुक्तिबोध। उनकारचना संसार सन् 1937 से सन् 1964 तक की कालावधि तक फैला रहा। उनके समस्त रचना का आधार उनका अतीत तथा आगत जीवन कास्वप्न रहा। त्रासदी की बात कहें तो अपने जीवनकाल में कोई भी काव्य-संग्रह प्रकाशित ही नहीं करा सके। उनकी रचनाओं में तत्कालीन समय के साथ-साथ उनका अपना जीवन भी अभिव्यक्त होता है। उन्हें अपनी कविताओं में अपने जीवन को समझने की बैचेनी आसानी से देखा जा सकता है,जिससे उनकी कविताओं में जीवन के प्रति गहरी प्रतिबद्धता दिखाई पड़ती है। वे मार्क्सवाद से प्रभावित थे किंतु यह उनके लिए कोई सिद्धांत नहीं है, वह उनके आत्मसंघर्ष की आवाज है और इसलिए उनकी भाषा जीवनानुभवों को अभिव्यक्त करने में सक्षम होती है। वे प्रत्ययवादी दर्शन के समर्थक व एक प्रतिबद्ध रचनाकार थे। उनके अनुसार साहित्य कला है और इसमें मानव जीवन के सभी अंगों की अभिव्यक्ति होती है। वे मानव से बड़ी और कोई सत्ता को नहीं मानते थे। इसलिए वे उनकी समस्याओं के हल उनके अंदर हीस्वीकार करते हैं, उनसे बाहर नहीं।स्वाधीनता संग्राम में जहाँ सभी देश की आजादी के लिए लड़ रहे थे, तब इनका मानना था कि आजादीका अर्थ था-मानवीय अधिकारों के लिए लड़ना। उन्होंने साहित्य और राजनीति को एक मानते हुए दोनों के मूल आधार जन-जीवन का यथार्थ जीवन की अभिव्यक्ति स्वीकार किया। इसलिए उनकीसमस्त रचनाओं में लोगों के प्रति संवेदना है उसे आसानी से देखा जा सकता है, जिसे वे बड़ी मार्मिकता से प्रस्तुत करते हैं, इसी से उनकी तथा उनकी रचनाओं की प्रासंगिकता को आसानी से समझा जा सकता है।

**बीजशब्द:-**नयी कविता, मार्क्सवाद, प्रयोगवाद, समकालीन, मुक्तिबोध, भाषा, फैंटसी।

मुक्तिबोध आधुनिक काल के नयी कविता की एक प्रतिनिधि कवि हैं। उनका साहित्यिक जीवन भी एक माली की भाँति रहा जो अपने जीवन में किसी वृक्ष को बड़ी स्नेह से खाद-पानी देकर उसे बढ़ा करता है, लेकिन जब उसमें फल लगना शुरू होता है तब माली का इस संसार से जाने का समय निकट आ जाता है। मुक्तिबोध के जीवन की कहानी भी कुछ ऐसी ही है। उनकी प्रथम काव्य-संग्रह चांद का मुँह टेढ़ा हैसन् 1964 में प्रकाशित हुई, लेकिन अफसोस वे उसे प्रकाशित होते हुए भी नहीं देख सके। श्रीकांत वर्मा इस संदर्भ में लिखते हैं कि 'मुक्तिबोध, जो कविताओं को अपनी जिंदगी से भी अधिक सहेजते थे, इस समय अपना संग्रह देख सकने में असमर्थ हैं, बेहोश हैं, यह विश्वास करते हैं वे पूरी तरह निरोग होंगे और अपनी कविताओं का पहला संकलन देख सकने में समर्थ होंगे।' वे कभी अपनी कविताओं का संकलन व प्रकाशन करते हुए देख न सके। उनकी दो कविताओं चंबल की घाटी और अंधेरे में को छोड़ दे तोबाकीसभी कविताओं का चयन व संकलन उनके संपादकों ने ही किया।

**रचना संसार:-** मुक्तिबोध की पहली कविता संग्रह चांद का मुँह टेढ़ा

है में उनकी छोटी और अधिकतर लंबी कविताएँ संकलित हैं। उनकी अधिकतर कविताएँ लंबी होने के कारण तत्कालीन केवल कुछ पत्रिकाओं में ही प्रकाशित हो सकीं। उनकी भूल-गलती, पता नहीं, मुझे कदम-कदम पर, मुझे नहीं मालूम, मेरे लोग और मैं तुम लोगों से दूर हूँ, कल जो हमने चर्चा की थी, एक अरूप शून्य के प्रति, नक्षत्र खंड आदि छोटी रचनाएँ थी, वहीं ब्रह्मराक्षस, डूबता चांद कब डूबेगा, मुझे याद आते हैं, चकमक की चिंगारियाँ, एक अंतर्कथा, एक स्वप्न कथा, इस चौड़े ऊँचे टीले पर, चंबल की घाटी और अंधेरे में उनकी लंबी कविताएँ हैं। इन कविताओं के जरिए उन्होंने जीवन की जटिलता को समझने का प्रयास किया है। इस संग्रह की पहली छोटी कविता भूल गलती (1964) में कल्पना पत्रिका में प्रकाशित हुई, जो 73 पंक्तियों की कविता है। इसमें वे पूंजीवादियों के षड्यंत्रों का खुलासा करते हुए नजर आते हैं। वहीं उनकी दूसरी कविता पता नहीं भी कल्पनापत्रिका में पाँच भागों में प्रकाशित हो चुकी थी वहीं उनकी तीसरी कविता ब्रह्मराक्षस (1957) तत्कालीन पत्रिका कवि में प्रकाशित हुई, जो दो खंडों में विभाजित एक लंबी कविता है। दिमागी गुहा का औरांग-ऊटांग (1951) के बाद आनंदवन में प्रकाशित हुई, जो 89 पंक्तियों की कविता है। लकड़ी का रावण इस संग्रह में पहली बार संकलित होने वाली कविता है, जो 144 पंक्तियों की कविता थी। इसके बाद इसी संग्रह की छठी कविता चांद का मुँह टेढ़ा है (1957) विविधा पत्रिका में प्रकाशित हुई, जो उनकी 303 पंक्तियों की एक लंबी कविता है। उनकी कविता डूबता चांद कब डूबेगा के बारे में नेमिचंद्र जैन लिखते हैं- 'इस कविता का अंश संकेतमें 1956 में प्रकाशित हुआ। यही परिवर्तित अंश इसी शीर्षक से चांद का मुँह टेढ़ा है में स्वतंत्र कविता के रूप में संकलित हुआ, जो अतिरिक्त अंश कवि ने डूबता चांद कब डूबेगा के अंतर्गत जोड़ा। उसे मुक्तिबोध रचनावली में 337 पृष्ठ में जोड़ा गया है।' फिर अंत में एक भूतपूर्व विद्रोही का आत्मकथन (1959) उनकी 222 पंक्तियों की एक लंबी कविता है।

मुक्तिबोध की समस्त काव्य-भंडार को नेमिचंद्र जैन मूलतः तीन भागों में विभाजित करते हुए निम्नलिखित ढंग से प्रस्तुत किया है। जैसे-

1. प्रारंभिक रचनाएँ- सन् 1935 से सन् 1939 तक

2. कविताएँ- सन् 1940 से सन् 1948

3. कविताएँ- सन् 1949 से सन् 1956

? रचनावली के दूसरे भाग में उनकी 1957 से 1964 तक की कविताएँ संकलित हैं।

प्रगतिवादी विचारधारा: सन् 1935 से 1939 के दौर की कविताओं को मुक्तिबोध की प्रारंभिक रचनाओंके अंतर्गत रखा जाता है। उनकी इन कविताओं में छायावादी रोमांटिक परंपरा के साथ-साथ प्राचीन परंपराएँ का संमिश्रण भी आसानी से देखी जा सकती है। नेमिचंद्र जैन लिखते हैं कि 'एक तरह से यह कहा जा सकता है कि मुक्तिबोध का कवि के रूप में तैयारी का काल

है, जिसमें वे अपना निजी मुहावरा तलाश रहे थे, बना रहे थे और मांज रहे थे। मुक्तिबोध की इस दौर की कविताओं पर माखनलाल चतुर्वेदी की शैली और संवेदना की छाप दिखाई देती है।<sup>3</sup> मुक्तिबोध स्वयं भी लिखते हैं कि 'रमाशंकर शुक्ल 'हृदय' की कविताएँ जो माखनलाल चतुर्वेदी के स्कूल से निकली हुई शाखा थीं-मुझे प्रभावित करती रहीं। जिनकी विशेषता थी-बात को सीधा न रखकर उसे केवल सूचित करना, तर्क यह था कि उससे वह अधिक प्रखर होकर सामने आती है।'<sup>4</sup> अतः इससे यह स्पष्ट होता है कि वे अपने प्रारंभिक दौर में माखनलाल चतुर्वेदी से बेहद प्रभावित थे। इस छायावादी अंतर्मुखता को उन्होंने रूप की प्रचलित परंपरा में ही अभिव्यक्त किया। अतः उनकी प्रारंभिक रचनाएँ इन्हीं परंपराओं से प्रभावित रही।

हिंदी साहित्य में मुक्तिबोध का आगमन प्रगतिवाद के दौर से हुआ। इस समय में सक्रिय होकर सृजन कार्य कर रहे थे। साहित्यकार जो अपने परिवेश से प्रभावित होता है इससे वे भी बच न सकें। वे अपनी रचनाओं में प्रगतिवादी दृष्टिकोण और आगे चलकर यथार्थवादी दृष्टिकोण से प्रभावित होकर लिखने लगे। साथ ही वे वैचारिक आदर्श के रूप में समाजवादी विचारधाराओं पर भी बहस करने लगे थे। सन् 1935 से 1939 तक की उनकी कविताओं में शृंगारिक भावनाओं की अभिव्यक्ति अधिकतर देखी जा सकती है किंतु यह शृंगारिकता छायावादी मांसलता से अलग था। इस संदर्भ में चंद्रकांत देवताले लिखते हैं कि 'यह एक ऐसे कवि की रचना है, जिसके मन में अपनी स्थिति से जुड़ी तकलीफ है। लेकिन इस तकलीफ को वह बचन जैसी सहज शैली में कहना नहीं चाहता'<sup>5</sup> और सही मायने में यह उनके स्वभाव की एक प्रमुख विशेषता भी रही। अब वे माखनलाल चतुर्वेदी के साथ-साथ रमाशंकर शुक्ल से भी बेहद प्रभावित हुए। वे उनके किसी भी बात को सीधे-सीधे व्यक्त न करने की शैली से बेहद प्रभावित थे। यहीं से वे कविताओं में जीवन को समझने तथा अपनी भाषा खोजने का प्रयत्न करने लगे। यही कारण है रहा कि उनकी बाद की कविताओं में जीवन के प्रति प्रतिबद्धता और अधिक गहराई से देखी जा सकती हैं। वे स्वयं लिखते हैं 'आत्मग्रस्तता के बावजूद शायद उनको साथ लिये लिये मेरा आत्म-संवेदन समाज के व्यापकतर छोर छूने लगा और कविता का कलेवर दीर्घ होता गया।'<sup>6</sup> अतः उनकी प्रारंभिक कविताओं के बारे में कहा जा सकता है कि वह युग-जीवन की समस्याओं से बेखबर नहीं थी। साथ ही उनकी कविताएँ प्रगतिवाद के समकालीन होने पर भी उनमें प्रगतिवादी सामाजिक चेतना का कोई प्रभाव नहीं दिखाई पड़ता। इससे यह कहा जा सकता है कि मुक्तिबोध वादों से परे निजी तौर पर जीवन को परख रहे थे, इसलिए व्यक्तिमन की सामाजिक चेतना इन कविताओं में आसानी से देखी जा सकती है।

डॉ.रामविलास शर्मा मुक्तिबोध के मानसिक संघर्ष का एक कारण उनके मार्क्सवाद के प्रति गहरे आकर्षण तथा उसे पूरी तरह से स्वीकार न कर पाने की विवशता को मानते थे। उनके अनुसार 'मुक्तिबोध के लिए मार्क्सवाद एक ऐसी विचारधारा न था जिसे वह आसानी से स्वीकार कर लेते और असुविधा होने पर फेंक देते। उनके लिए वह जीवन-मरण का प्रश्न था।'<sup>7</sup> इससे मुक्तिबोध की आत्मसंघर्ष को साफ-साफ समझा जा सकता है। अतः कहा जा सकता है कि मुक्तिबोध यदि नई कविता से स्वयं को संबद्ध किया तो उसका यह अर्थ नहीं कि वे मार्क्सवादी के विरोधी शक्तियों का समर्थन कर रहे थे। वे प्रगतिवाद की कमियों को समझने के साथ-साथ वादों से हटकर मानव विरोधी शक्तियों का विरोध कर रहे थे। उनका मानना था कि तत्कालीन कविताओं पर लंदन और वाशिंगटन के शीत युद्ध का प्रभाव है और पश्चिम की परिपक्व मानववादी परंपरा से प्रेरणा न ग्रहण करके उन नये व्याख्याताओं ने उसकी अत्यंत प्रतिक्रियावादी साहित्यिक विचारधारा को अपनाया और फैलाया। अतः इससे स्पष्ट होता है कि वे प्रगतिवाद

की खिलाफत से क्षुब्ध थे और इसीलिए उनमें आत्मसंघर्ष की स्थिति बनी हमेशा बनी रही।

**प्रयोगवाद तथा नयी कविता के संदर्भ में:-**मुक्तिबोध जहाँ प्रारंभ में छायावादी व्यक्ति चेतना से संपन्न कवि थे, वहीं फिर तारसप्तक तक आते-आते उनकी कविताओं में मार्क्सवादी चेतना ने घर कर ली। जैसे-जैसे मुक्तिबोध में दैनिक जीवनानुभवों की आभ्यंतरीकरण की प्रक्रिया सक्रिय हुई और उसे वे मार्क्सवादी दर्शन द्वारा आत्मसात् करने लगे। अब मार्क्सवाद उनकी कविताओं का आधार हो गया जिसके द्वारा मुक्तिबोध ने वर्तमान के सभी सभ्यता के बीच आधुनिक मनुष्यों की समस्याओं का अन्वेषण करने का काम किया। अतः यह कह सकते हैं कि उन्हें अपने विचारों की शक्ति मार्क्सवाद से ही प्राप्त हुई, फिर भी उनकी कविताओं में कथ्य न तो व्यक्तिवादी कला-कर्म की तरह आता है और न ही प्रगतिवादी नारों की तरह। वे अपने आसपास के सामाजिक जीवन को ही अपनी कविता का मूल केंद्र बिंदु बनाते हैं। उन्होंने तत्कालीन लोगों के जीवन की मौलिक समस्याओं को जड़ से जानने की कोशिश की।

मुक्तिबोध की कविताओं का दूसरा दौर सन् 1940 से 1948 तक रहा। उनके इस समय के कविताओं में केवल आत्मग्रस्तता की अनुभूतियाँ ही नहीं थी अपितु तत्कालीन प्रचलित काव्य रुढ़ियों को तोड़ने हुए कविता में नये मुहावरें तलाशने की एक ललक सी दिखायी पड़ती है। उन्होंने इस समय कविताओं में छंद के बंधन को तोड़ते हुए छायावाद के संस्कारों में निहित आत्मवेदना को मुक्त करते हुए दिखाई देते हैं। इसी दौर का उनका काव्य प्रकृति से मानवीय रिश्ता बनाता है। अपने अनुभव की दुनिया में झाँकते हुए वे यह अनुभव करते हैं कि कविता को बाहरी अनुभवों की पृथक करना संभव नहीं है और न ही उचित। उनके इन कविताओं से यह ज्ञात होता है कि उनपर प्रगतिवाद का बेहद प्रभाव पड़ा। अतः यह कथन सही लगता है कि 'अपने अनेक समकालीन कवियों की तुलना में मुक्तिबोध विलंब से प्रगतिवादी दल में शामिल हुए। सन् 1936 से 1942 तक वह अधिकतर छायावादी कविताएँ लिख रहे थे।'<sup>8</sup> किंतु अन्य प्रगतिवादी कवियों की तरह उनका काव्यबोध जैसे नहीं था। मुक्तिबोध प्रयोगवाद एवं तारसप्तक के संदर्भ में लिखते हैं कि 'मेरी वे कविताएँ अपना पथ ढूँढ़ने वाले बेचैन मन की अभिव्यक्ति हैं। उनका सत्य और मूल्य उसी जीवनस्थिति में छिपा हुआ है।'<sup>9</sup> उनकी कविताओं को देखें तो उनमें पहले वर्णनात्मकता मिलती है, फिर कुंठावाद, निराशा और फिर मराठी उपन्यासों से प्रभावित होकर ही वे मार्क्सवाद तक आते हैं। मुक्तिबोध के काव्यों को यदि समग्र रूप से देखा जाए तो उसका महाकाव्यात्मक चरित्र हमें दिखाई देता है। उनकी कल्पना की उदात्तता और विराटता, अनुभव की सघनता, विचारों की संपन्नता और आत्मसंघर्ष निरंतरता ऐसे तत्त्व हैं जो उनके काव्य प्रयत्न के अंग रहे हैं।

मुक्तिबोध की आरंभिक कविताएँ शृंगारिक होते हुए भी शृंगार प्रधान नहीं हैं। वे अपने अनुभवों को सामाजिक संदर्भ में रखकर ही जाँचते-परखते हैं। उनकी दुःख-सुखकविता का कुछ अंश द्रष्टव्य है-

'दुःख में ही सुख कर लो यारो,  
दिल में पत्थर भर लो यारो।  
जलती रहे चिंता सुने में  
हम उसको समझेंगे होली  
जो हमको कमजोर बनाये  
ऐसे सुख को मारो गोली।'<sup>10</sup>

मुक्तिबोध इस समय निज चेतना को विश्व चेतना में रूपांतरित करने की कोशिश कर रहे थे, साथ ही वे इन कविताओं में परंपरा की अलंकारिता को तोड़ते हुए नजर आते हैं। छायावादी काव्य भाषा के संस्कार इन कविताओं में भी

बराबर मौजूद हैं, जबकि हिंदी साहित्य में यह युग प्रयोगवादी काव्य का रहा। 1946 में अज्ञेय के प्रतीक पत्रिका में मुक्तिबोध की प्रसिद्ध कविता मुझे पुकारती हुई पुकार प्रकाशित हुई। इसी से वे प्रयोगवाद प्रवेश करते हैं। इस दौरान वेचार सालों तक प्रगतिशील लेखक संघ के सक्रिय सदस्य के रूप में कार्यरत थे और मार्क्सवाद के नजदीक आये थे। प्रयोगवादी युग में कविताएँ लिखते हुए भी उनकी कविताएँ प्रयोगवादी काव्य से साम्य नहीं रखतीं, फिर भी मुक्तिबोध ने स्वयं को प्रगतिवादी/ प्रयोगवादी/ नई कविता का कवि माना है। वे स्वयं को किसी भी स्थिति से बंधकर नहीं रखें। उन्होने लिखा कि 'मेरी हर विकास स्थिति में मुझे घोर असंतोष रहा है और है। मानसिक द्वंद मेरे व्यक्तित्व में बद्ध-मूल है।' <sup>11</sup> इसी मानसिक संघर्ष और बेचैनी के रहते वे तराशी हुई भाषा में कविता को किस तरह अभिव्यक्त कर पाते। यही कारण है कि उन्होने इस दौर में ऐसी कविताएँ लिखीं जिसमें यथार्थ से मुठभेड़ अपेक्षाकृत स्थूल वर्णनात्मकता के साथ संभव हुई है। नयी कविता से समकालीन कविता तक : मुक्तिबोध की कविताओं का तीसरा दौर सन् 1949से 1956तक चला। उनकी इस दौर की कविताओं में निम्न वर्ग की समस्याओं और विडंबनाओं की यथार्थवादी दुनिया है। इस समय के कविताओं में उन्होंने अपनी दैनिक जीवनानुभवों की हलचलों को प्रकृति से संबद्ध किया है। जिसमें प्रकृति भी दहशत भरी है-मुक्तिबोध के सृजन विकास का यह दौर हिंदी में नई कविता का समय था। 1954 में जब इलाहाबाद से नई कविता का प्रकाशन प्रारंभ हुआ और नई कविता का आंदोलन शुरू हुआ तब मुक्तिबोध ने अन्य अनेक नये कवियों की तरह प्रयोगवाद शब्द छोड़ दिया और नई कविता से स्वयं को सम्बद्ध किया। <sup>12</sup> वे प्रयोगवाद और नई कविता को पृथक् नहीं मानते फिर भी वे नई कविता की उन प्रवृत्तियों का स्पष्ट विरोध करते हैं जो पश्चिम से हमारे साहित्य में आ रही थीं। इसी कारण उन्होंने नई कविता को भी दो वर्गों में बाँट दिया। यह विभाजन उनके मानसिक संघर्ष की ओर संकेत भी करता है।

इस समय तक मुक्तिबोध की कई लंबी कविताएँ प्रकाशित हुईं, जिनमें मुझे पुकारती हुई पुकार (1947में) जो 112 पंक्तियों की प्रतीक पत्रिका में प्रकाशित हुई, वहीं मुझे कदम-कदम पर (1961) जो (60 पंक्तियों) की कविता थी जो लहर पत्रिका में, फिर चौराहे और फिर क्रमशः मुझे नहीं मालूम (142 पंक्तियों) की कविता कल्पना पत्रिका में प्रकाशित हुई इनके साथ ही उनकी लंबी कविताओं की सूची और भी बड़ी है। इनमें उनके वे कविताएँ भी शामिल हैं जो कभी प्रकाशित न हो सकीं, जिनमें मेरे लोग जो (129 पंक्तियों) की कविता है साथ ही मेरे सहचर मित्र (338 पंक्तियों) की कविता है और फिर मैं तुम लोगों से दूर हूँ (38 पंक्तियों) की कविता है। इसके बाद उनकी कल जो हमने चर्चा की थी (1957) कविता जो हंस पत्रिका में स्वतंत्र रूप से प्रकाशित हुई, जिसमें (142 पंक्तियों) थी। फिर एक अंतर्कथा (1959) का प्रकाशन कृतिपत्रिका में हुआ, जो 212 पंक्तियों की एक लंबी कविता है। साथ ही 1960 में एक अरूप शून्य के प्रति कविता कल्पना पत्रिका में प्रकाशित हुई जिसमें 112 पंक्तियाँ हैं। इसी के साथ इसी वर्ष उनकी एक और लंबी कविताओ काव्यात्मन फणिधर कविता वसुधा पत्रिका में प्रकाशित हुआ, जिसमें 291 पंक्तियाँ हैं और अंत में उनकी नक्षत्र खंड (126 पंक्तियों) की तथा चकमक की चिनगारियाँ (425 पंक्तियों) की अप्रकाशित कविता, जब प्रश्नचिह्न बौखला उठे (390 पंक्तियों) की अप्रकाशित कविता, एक स्वप्न कथा (431 पंक्तियों) की कविता, अंतःकरण का आयतन (346 पंक्तियों) की कविता, इस चौड़े-ऊँचे टीले पर (509 पंक्तियों) की अप्रकाशित कविता और चंबल की घाटी में (1964) आदि उल्लेखनीय रही। इसके बाद 1964 में उनकी सबसे लंबी और महत्त्वपूर्ण रचना अंधेरे में, कल्पना पत्रिका में आशंका के द्वीप अंधेरे में शीर्षक से प्रकाशित हुई। इस कविता में आठ खंड, 71 बंध, 41 पृष्ठ और 1291 पंक्तियाँ हैं। इस संग्रह की अधिकतर कविताएँ

उनके जीवन के अंतिम दस वर्षों की हैं, जिस समय वे जीवन के अत्यधिक यातनादायक समय को गुजार रहे थे इन्हीं कठिन अनुभवों को मुक्तिबोध ने अपनी कविताओं में व्यापक आकार दिया।

मुक्तिबोध का दूसरा काव्य-संग्रह 1980 में भूरी-भूरी खाक धूल नाम से प्रकाशित हुआ। अब वे हिंदी के मूलधारा के कवि के रूप में ऊभर रहें थे। इस संदर्भ में अशोक वाजपेयी उनके बीते पिछले 15 वर्षों को मुक्तिबोध युग नाम से नामाकरण किया। 1980 तक आते-आते मुक्तिबोध समकालीन कविता के केंद्रीय कवि के रूप में प्रतिष्ठित हो गये। इस काव्य-संग्रह की सार्थकता थी कि इसने मुक्तिबोध के बारे में बनी गलत भ्रांतियों को ध्वस्त कर दिया। इन कविताओं में उनके समय की भयावहता के खौफनाक वातावरण के साथ-साथ माता, पिता, मित्र आदि की स्मृतियाँ भी शामिल हैं। इनमें अमानवीय स्थितियों का विरोध और कुछ करने की संकल्पना का स्वप्न दोनों ही अभिव्यक्त हुए हैं। अशोक वाजपेयी कहते हैं कि 'जटिलता और ऊहापोह की परतों के नीचे मुक्तिबोध की सरल मानवीयता और गरमजोशी है। जिसे इस दूसरे संग्रह की कविताएँ शायद अधिक सहजता से उजागर करने में समर्थ हैं।' <sup>13</sup> इस संग्रह में उनकी 47 कविताएँ संगृहीत हैं जिनमें कुछ प्रकाशित और अधिकतर अप्रकाशित कविताएँ हैं।

1980 में नेमिचंद्र जैन ने मुक्तिबोध रचनावली के छः भागों का प्रकाशन किया। जिसमें भाग 1 और भाग 2 में उनकी अधूरी और पूरी दोनों तरह की कविताएँ शामिल हैं। भाग 3 में उनकी कहानियों का संकलन है, वहीं भाग 4 में एक साहित्यिक की डायरी के कुछ अंश प्रकाशित है। भाग 5 में उनकी समीक्षा लेखों का संकलन तथा अंतिम भाग 6 में उनके लेखों का संकलन मौजूद है। मुक्तिबोध आरंभ से ही उस आधुनिकतावाद से दूर थे जो रचनाकार को व्यक्तिवादी घेरे में बंद कर देता हो। उनकी सृजन-प्रक्रिया में कल्पना सक्रिय रहती है, किंतु यह कल्पना अनुभूति का ब्यौरा प्रस्तुत करने वाली कल्पना नहीं है बल्कि वह अनुभूति की अभिव्यक्ति है। उनके कविताओं में आगामी दिनोंके संकेत मिलते हैं, जो उन्हें एक महत्त्वपूर्ण कवि के रूप में स्थापित करती हैं। कविता के इस दौर में उनका कई वादों से द्वंद्वात्मक रिश्ता रहा, जिसके बीच उन्होंने अपने अनुभवों को व्यापक रूप में प्रस्तुत किया।

मुक्तिबोध के अंतिम दौर की कविताओं में 1958 से 1964 तक की कविताएँ संकलित हैं। सन् 1960 के बाद का समय उनके जीवन में तीव्र आर्थिक और सामाजिक संघर्ष का काल रहा जिसका प्रमाण हम उनके रचनाओं में आसानी देख सकते हैं। उनकी कविताओं के शिल्प की सबसे बड़ी विशेषता है परस्पर भाव चित्रों का धूप-छाँही मेल जिसे आचार्य शुक्ल ने विरुद्धों का सामजस्य माना। उनकी कविताओं में सर्वत्र अंधेरा, भय, त्रासदी ही नहीं है बल्कि भविष्य के स्वप्न, सूरजमुखी के गुच्छे आदि भी शामिल हैं। केवल पिशाच आकृति के विराट पुरुष ही नहीं, मित्र सहचर भी हैं। भय ही नहीं मानवीय करुणा भी है और आस्था भी। उनकी काव्य-भाषा पर अनगढ़ता का आरोप लगाया जाता है किंतु जीवन की समग्रता को वे जिस शब्द-संपदा से अभिव्यक्त कर लेते हैं, वह क्या असमर्थ भाषा होगी।

मुक्तिबोध ने सबसे पहले कविता के कथ्य को सामाजिक जनजीवन से प्रतिबद्ध किया। उनका कथ्य फैंटसी की जटिल रचना प्रक्रिया से गुजरकर जन-जन तक संप्रेषित हो नहीं पायी और यहीं से समकालीन कविता उनसे पृथक् हो जाती है। किंतु इतना होने पर भी वे पुनः आठवें दशक के प्रतिबद्ध कविताके केंद्रबिंदु बने रहें। अब तक की उनके कविताओं से युवा कवि वर्ग बेहद प्रभावित थे, जिन्हें रचनाकारों में बदलाव के चिह्न नजर आने लगे थे। अब बदले हुए प्रतिमानों के बीच रचनाकारों ने अपने दायित्वों को समझा। वे अन्याय के विरोध में संघर्ष करते हुए खुदको शोषित वर्ग के प्रतिनिधि के रूप में देखने लगे। कविता

में आक्रोश अब केवल मूक दर्शक में नहीं बल्कि सक्रिय हस्तक्षेप के रूप में बदल गया और यहीं से कविता की रचना संवेदना दो भागों में विभक्त हो गई और मुक्तिबोध इस समकालीन कविता के काव्य नायक बन गए।

भाषा और शैली :सातवें दशक के नई कविता में जिन कवियों के स्वरो में बदलाव आया उनमें रघुवीर सहाय,केदारनाथ सिंह,श्रीकांत वर्मा आदि प्रमुख थे और उनकी अभिव्यक्ति में जो नई भंगिमाएँ आयीं वे अज्ञेय के काव्यशास्त्र के निकट नहीं,मुक्तिबोध के निकट जान पड़ती हैलेकिन दूसरी ओर इन सभी कवियों की भाँति मुक्तिबोध में भी वस्तु-जगत् को लेकर उनकी बेचैनी और छटपटाहट देखी जा सकती है। मुक्तिबोध की आवेगमय भाषा ने भले ही कवियों को प्रभावित नहीं कर सकी किंतु उनके शिल्प ने जो ज्ञानात्मक संवेदन वाली बात कहीतथा अपनी शब्द-संपदा को दैनिक जीवन के ठोस संदर्भों से गूँथ दिया वह उल्लेखनीय रहा। इस संदर्भ में विद्वान कहते हैं कि 'हालाँकि मुक्तिबोध का लेखन प्रयोगवादी काव्यधारा से काफी पहले का रहा है,पर समकालीन बोध की पहचान का श्रेय इसी कवि को है उसे भले ही समीक्षक, इतिहासकार, प्रयोगवाद व नई कविता तक ही सीमित मानें,सही अर्थों में मुक्तिबोध ने इस कविता को नई दिशा प्रदान की। इसलिए समकालीन कविताका यह कवि पड़ाव है-शेष कवि किसी-न-किसी रूप में इस कवि से प्रभावित हुए हैं।'<sup>14</sup>

मुक्तिबोध के समकालीन कविता की भाषा आम आदमी केजीवन को अभिव्यक्त करती है। इसमें उनके विचार तथा संघर्ष को आसानी से देखा व समझा जा सकता है। जीवन के अनेक बिंदु,प्रतीक,प्रतिध्वनियाँ इन कविताओंके प्राण हैं। जहाँ पिछले दशक की कविताओं की भाषा अनुभवमहसूस करनेऔर सोचनेके अतिवादी आदि खानों में बँटा हुआ था, वहीं आठवें दशक में यह दोनों तत्त्व मानवीय रूष्मा में घुल-मिल गए हैं। अतः आठवें दशक की भाषा में बनने वाले अनुभव,जिये गए जीवन की साधारणता,सादगी और सहजता को अपने केंद्र में रखता है। इसलिए समकालीन कवि की भाषा में विडंबना का जो स्वरूप देखने को मिलता है वह ऊपर से सामान्य दिखता है, लेकिन वह अनुभव के इकहूपन से उठकर जीवन की जटिल द्वंद्वत्मकता में जाता है।

मुक्तिबोध नेसमकालीन कविता की भाँति नयी कविताके सृजन प्रक्रिया में भी जिस ज्ञानात्मक संवेदन की बात कही है वह कविता में निजी भाव व आत्मपरक संवेदना का विरोध करती है। उनमें समकालीन कविता की सपाटबयानी देखने को मिलता है जो मूलतः ज्ञानात्मक संवेदन पर आधारित था। समकालीन कविता की भाषा-शिल्प में व्यवस्था का विरोध तथाशोषितों के विरोध में व्यंग्यों की भरमार रही है। कवि की चेतना परिवेश के साथ द्वंद्व रूप में संबंध होती है। इस तरह रघुवीर सहाय तथा श्रीकांत वर्मा आदि कवियों ने अपनी-अपनी कविताओं में व्यंग्यात्मक भाषा का प्रयोग करते हैं, जो कवि को भावुक होने से बचाते हुए घटना की भयावहता को सम्मुख रखती है। आठवें दशक के कवियों ने भी सामाजिक विसंगतियों को उभारने के लिए व्यंग्य-शैली का प्रयोग किया है। इस तरह कहा जा सकता है कि समकालीन कवियों को मुक्तिबोध के शिल्प ने काफी प्रभावित किया। मुक्तिबोध के शिल्प का निर्धारण उस अनवरत बेचैनी द्वारा हुआ,जो उनके कथ्य का मूलाधार रही। पर यह बेचैनी कोरी भावुकता का परिणाम न होकर ज्ञानात्मक संवेदन से पुष्ट थी।

अपने अंतिम दौर के कविताओं में मुक्तिबोध ने अनेक परिवर्तन व संशोधन किये। वे जीवन की समग्रता को कविता में आत्मसात् कर लेना चाहते थे। समग्रता को रच सकने की बेचैनी उनमें आसानी से देखी जा सकती है। चंद्रकांत देवताले लिखते हैं 'वे अपने वयस्क चरण की कविताओं में इस समग्रता को आत्मसात् करने के लिए मुक्तिबोध कविता के चिकने इलाके से बाहर गद्य के ऊबड़-खाबड़ पथ पर लहू-लुहान होकर दौड़ते हैं। लेकिन इस दौड़ में वे अपनी

कविता को खोना नहीं चाहते। गद्य की सुविचारित सोद्देश्यता को कविता में लाने के लिए जिस अंतःसंघर्ष की आवश्यकता पड़ती है,मुक्तिबोध उसी अंतःसंघर्ष के लिए अपनी पूरी रचना-यात्रा संपन्न करते हैं।'<sup>15</sup> इस अंतःसंघर्ष को हम उनकी इस दौर की कविताओं में और अधिक व्यग्रता के रूप में देखते हैं। इन कविताओं में शोषितों और पीड़ितों के प्रति गहरी आंतरिक सहानुभूति प्रकट हुई है,समकालीन जीवन के अंतविरोधों,तनाव,आतंक,भय तथा चिंता के वातावरण को भी इन कविताओं में चित्रित किया गया है।

अंधेरे में उनकी महत्वपूर्ण और सुप्रसिद्ध रचना है जिसमें एक मध्यवर्गीय व्यक्ति के माध्यम सेउस वर्ग के तनाव,देश में राजनैतिक आतंक व इस युग की बर्बरता का समग्र चित्र उकेरा गया है। उन्होंने अपने काव्य में केवल निम्न मध्यवर्ग की यथार्थ स्थितियों का चित्रण ही नहीं किया है बल्कि पूंजीवादी साजिशों को अंधेरे में पहचानने की कोशिश भी की। उनकी कविताएँ सामाजिक विषमता के दुष्पक्ष और दुःस्वप्न के बीच मनुष्य की संघर्ष-स्थिति को दर्शाती है। उनकी कविताएँ कल्पना लोक के वायवीय घेरे में चक्कर नहीं लगाती,जीवन के यथार्थ सत्यों की खोज करती है।मुक्तिबोध ने रचना-प्रक्रिया के तीन स्तर व कला के तीन क्षण में माने हैं-पहला क्षण जीवन के तीव्र अनुभव का क्षण और दूसरा अपने अनुभव का और तीसरा अभिव्यक्ति का अर्थात् फैंटसी के शब्दबद्ध होने का क्षण है। ठीक इसी तरह वे जीवन को त्रिकोणात्मक मानते हैं, जिसकी तीन भुजाएँ हैं- एक भुजा बाह्य जगत् है,दूसरी भुजा है हमारा अंतर्जगत और तीसरी भुजा हमारी मानव चेतना है। उनके अनुसार साहित्य मूलतः जीवन-विवेक है और कलाकृति भोगे हुए जीवन की विधायिका। वे अभिव्यक्ति को अभ्यास-साध्य मानते हैं। वे शिल्प के संबंध में फैंटसी को महत्त्व देते हैं। उनके अनुसार कला आभ्यंतर के बाह्यीकरण का ही रूप है। सौंदर्य-शास्त्रीय विश्लेषण उनके लिए सिद्धांत की नहीं जीवन की प्रखर मीमांसा और व्याख्या है। वे स्वयं को आधुनिकतावादी मानते तो थे किंतु वे समकालीन परिवेशसे मानव की सत्ता को विस्मृत नहीं करते हैं और विज्ञान,टेक्नालॉजी,औद्योगिक क्रांति,नये विचारों को मानवीय विकास के रूप में देखते हैं और आधुनिकतावाद का विरोध करते हैं जो पाश्चात्य काव्यानुभूति पर आधारित है। वैज्ञानिक मानवतावाद और यथार्थ जीवन के बारे में सोचते हुए उनकी दृष्टि प्राथमिक आवश्यकताओं पर केंद्रित रही।

मुक्तिबोध ने कभी काव्य में आनंद के लिए चमत्कार की सृष्टि नहीं की। अशोक चक्रधर के शब्दों में समझे तो 'मुक्तिबोध के लिए फैंटसी की कलात्मक सार्थकता है। कविता में यथार्थ की असमापनीयता, सश्लेषता, विसंगति, अंतर्जगत और बाह्य-जगत् सबको एक साथ समेटने के लिए आवश्यक है कि कवि फैंटसी का आसरा ले।'<sup>16</sup> समकालीन कविता और कवियों पर मुक्तिबोध के ज्ञानात्मक संवेदन का गहरा असर हुआ। जिससे रचनाकारों की जीवन-दृष्टि को परिष्कार करने में सहायक तो हुआ है। उनकी फैंटसी के शिल्प को भी कई कवियों ने अपनी रचना-प्रक्रिया का हिस्सा बनाया। उनकी कविताओं में कल्पना हमेशा सक्रिय रही जो समयानुसार बिंबों और प्रतीकों का सृजन करती रही। वे मानते थे कि गहन शब्द-अर्थ,विचार,स्मृति और संवेदनाओं को अभिव्यक्ति बिंब द्वारा की जा सकती है। साथ ही उनकी प्रतीकों की दुनिया काफी फैली हुई है। वे प्रतीक शैली के कवि हैं। भाषा के संबंध में भी वे जनभाषा की अपेक्षा भवानुकूल शब्द-शैली के पक्ष में बात करते हैं। वह शब्दों में वास करने वाले अर्थ बिंबों व ध्वनियों की तुलना अपने भाव-दृश्यों से करते हैं और इस नेत्रमयी तुलना में वह और सचेत हो जाते हैं कि वह किस प्रकार के चित्रों तथा ध्वनियों का कौन-सा प्रभाव उत्पन्न करना चाहता है। समकालीन कविता वस्तुतः मानवीय अंतर्संबंधों,चीजों और समूची व्यवस्था के संवेदनहीन हो जाने की त्रासदी है और यह व्यवस्था मनुष्य को ईधन की तरह इस्तेमाल कर रही है। समकालीन

कविता इसी व्यवस्था का विरोध करती है। मुक्तिबोध की भाषामें जटिलता, दुर्बोधता, अनगढ़ता और खुरदुरेपन के होते हुए भी वह समकालीन कविता की शिल्प-चेतना को प्रभावित करती है क्योंकि सातवें दशक में रचनाकार के भौतिक परिवेश में जिस प्रकार की तनावपूर्ण परिस्थितियां थीं, भाषा के अभिजात्य को अधिक दूर तक ढोना कठिन था। अपने समय की पहचान और समय के भीतर ही कविता को तलाशना उनकी कविताओं की विशेषता है।

**निष्कर्ष:-**मुक्तिबोध आधुनिक हिंदी कविता को समृद्ध करने वाले एक सशक्त कवि थे। उन्होंने छोटी कविताओं के साथ-साथ लंबी कविताएँ भी लिखीं, जिनमें अनेकघटनाएँ, स्थितियाँ, दृश्य एवं स्वप्न आदि के दर्शन होते हैं। छायवाद से लेकर प्रगतिवाद और फिर प्रयोगवाद से होकर नयी कविता व समकालीन कविता तक मुक्तिबोध की भूमिका उल्लेखनीय रही। उन्होंने अपनी कविताओं में मध्यमवर्गीय त्रासदी, युगीन परिवेश और आगामी स्वप्नों को अभिव्यक्त करने के लिए जिस पैटर्न का निर्माण किया वह अपने आप में अद्भुत है। उन्होंने फैंटेसी, प्रतीक, बिंब तथा आत्मकथन, विश्लेषण को अपनाते हुए भी उनसे भिन्न है और साथ ही उन्होंने भाषा में व्यंजना के स्थान पर लक्षणा का अधिक उपयोग किया। मुक्तिबोध का रचना-शिल्प मूलतः फैंटेसी पर आधारित है, किंतु उनका फैंटेसी और कुछ नहीं बल्कि अपने दैनिक जीवन में प्राप्त अनुभव का ही दुनिया है, इसलिए वे इसे अनुभव की कन्या भी कहते हैं और साथ ही उसे एक झीना परदा मानते हैं जिसमें जीवन के तथ्य झांक उठते हैं। फैंटेसी का ताना-बाना कल्पना-बिंबों में प्रकट होने वाली विविध क्रिया-प्रतिक्रियाओं का परिणाम है। उनकी कविताओं में स्वप्न कथाएँ भी यथार्थोन्मुखी हैं जो यथार्थ के पर्त दर पर्त खोलती जाती हैं। वे मानते हैं कि फैंटेसी का अपना एक ढाँचा है किंतु वह जीवन के तथ्यों से अनुस्यूत होता है। उनकी कविताओं में युगबोध और यथार्थ दोनों का समन्वय है। अपने समकालीन यथार्थ को उजागर करने में वे फैंटेसी के विविध तरीकों का इस्तेमाल करते हैं। मुक्तिबोध की कविता ही नहीं उनके जीवन और विचारों ने भी साठोत्तरी और विशेष रूप से आठवें दशक की पीढ़ी को बेहद गहरे और आत्मीय ढंग से प्रभावित किया है। उनमें निजता के साथ-साथ उसमें सामाजिकता का ताप घुल-मिल गया। आत्मा के सामाजिक अंतःकरण में संस्कारित होने जैसी प्रक्रिया उनकी रचनाओं में देखी जा सकती है, इस सबका श्रेय मुक्तिबोध को जाता है, जिससे उनकी प्रासंगिकता को आसानी से समझा जा सकता है।

**संदर्भ सूची:-**

1. मुक्तिबोध, गजानन माधव. 'चांद का मुँह टेढ़ा है', भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, 1985, श्रीकांत वर्मा (भूमिका से)
2. संपा. जैन, नैमिचंद्र. मुक्तिबोध रचनावली भाग-2, राजकमल प्रकाशन, 1980, पृ.330
3. संपा. जैन, नैमिचंद्र. मुक्तिबोध रचनावली भाग-1, राजकमल प्रकाशन, 1950, पृ.15
4. संपा. जैन, नैमिचंद्र. मुक्तिबोध रचनावली भाग-5, राजकमल प्रकाशन, 1982, पृ.24
5. देवताले, डॉ. चंद्रकांत. मुक्तिबोध के चिंतन और काव्य का मूल्यांकन, (अप्रकाशित)- पृ.83
6. संपा. अज्ञेय. तारसप्तक (दूसरा संस्करण) / भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, 1943, मुक्तिबोध का वक्तव्य, पृ.6
7. संपा. शर्मा, डॉ. रामविलास. नयी कविता और अस्तित्ववाद, राजकमल प्रकाशन, 2003 पृ.154
8. संपा. शर्मा, डॉ. रामविलास. नयी कविता और अस्तित्ववाद, राजकमल

प्रकाशन, 2003, पृ.153

9. संपा. अज्ञेय. तारसप्तक (दूसरा संस्करण) / भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, 1943, मुक्तिबोध का वक्तव्य, पृ.7
10. संपा. जैन, नैमिचंद्र. मुक्तिबोध रचनावली भाग-1, राजकमल प्रकाशन, 1950, पृ.57
11. संपा. शर्मा, डॉ. रामविलास. नयी कविता और अस्तित्ववाद, राजकमल प्रकाशन, 2003, पृ.153
12. संपा. शर्मा, डॉ. रामविलास. नयी कविता और अस्तित्ववाद, राजकमल प्रकाशन, 2003, पृ.154
13. मुक्तिबोध, गजानन माधव. भूरी-भूरी खाक धूल, राजकमल प्रकाशन, 1980, पृ.2
14. जैन, डॉ. संजय. समकालीन कविता के आंदोलन, राजकमल प्रकाशन, 2004, पृ.7
15. देवताले, डॉ. चंद्रकांत. मुक्तिबोध के चिंतन और काव्य का मूल्यांकन, (अप्रकाशित)- पृ.177
16. डॉ. अशोक, चक्रधर. मुक्तिबोध की काव्य-प्रक्रिया, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, 1975 पृ.89

# गढ़वाल हिमालय की लोक कथाओं का विवेचन

डॉ. डी. एस. भण्डारी

विभागाध्यक्ष, हिन्दी, बालगंगा महाविद्यालय (केमर), टिहरी गढ़वाल

सारांश:-लोक साहित्य की विविध विधाओं में लोक कथाओं का सबसे महत्वपूर्ण स्थान माना जाता है। लोक कथाओं की उत्पत्ति अत्यधिक प्राचीन मानी जाती है। इनकी सीमाएं दुनिया के विस्तार के साथ-साथ बढ़ती रही हैं। इनकी लोकसत्ता सर्वत्र विराजमान देखी जा सकती हैं। सभ्यता और संस्कृति लोक कथाओं के माध्यम से विस्तार पाया है। सभ्यता और संस्कृति लोक कथाओं के माध्यम से शब्दायमान होती हैं। इतिहास की सुगंध इन लोक कथाओं के माध्यम से ही फैलती है। धरती से गगन तक इनका क्षेत्र विस्तीर्ण है। इन्सान की पीढ़ियां इन लोक कथाओं को कहने सुनने और अपने अनुभव जोड़ने में व्यतीत हो जाता है। लोक कथाओं के लिए कुछ भी बर्जनीय या त्याज्य नहीं है। यह सब कुछ ग्रहण और स्वीकार करती हैं। आज बौद्धिक, तार्किक वर्ग ने भले ही ग्रामीण, नगरीय, शिक्षित, अशिक्षित, गरीब, अमीर, सुन्दर, असुन्दर आदि भेद करके स्वयं को सभ्यता के निर्मल होने का दंश पाला है लेकिन लोक कथाएं इन तथ्यों से अछूती रही हैं। प्रस्तुत शोध पत्र में इन्हीं तथ्यों की विवेचना की जा रही है।

लोक कथाओं के उद्गम स्रोत पर चिंतन करते हुए डॉ० सत्येन्द्र कहते हैं कि धर्म गाथाओं और लोक कथाओं के अध्ययन से विदित होता है कि इनका मूल बहुत प्राचीन है और ये सम्भवतः उस समय की धुंधली रूपरेखा का युग था जबकि विविध राष्ट्रों और देशों में विभाजित आर्यजन विभाजन से पूर्व शान्तिपूर्वक निजी एक स्थान पर रहते थे। लोक साहित्य के कुछ विद्वान इनको ऋग्वेद से भी पुरातन मानते हैं। डॉ० शंकर लाल यादव कहते हैं कि कहानियों की उद्भावना की आदि भूमि भारत को माना गया है। कहानी का मौलिक रूप सृष्टि के आरम्भ से ही देश में पाया जाता है। सभी देश की वृद्धाओं ने मनोविनोद के लिए कहानियां कही हैं। साहित्यिक कहानी लिखने का श्रेय भारत को है। यहां इस साहित्यिक अभिव्यक्ति की परम्परा एक सदूर अतीत से विद्यमान है। लोक साहित्य के एक अन्य पुरोधा डॉ० मोहन लाल बाबुलकर कहते हैं कि वैदिक साहित्य कथाओं से भरा पड़ा है। वेदों की एक-एक ऋचाओं में ऋषि पुनः शेष का आख्यान अपाला आत्रेयी के नारी चरित्र और संवाद सूक्त में पात्रों का कथोपकथन की प्राचीन परम्पराओं के द्योतक हैं। इन्हीं कथाओं में च्यवन, भार्गव तथा सुकन्या मानवी की कथा मिलती है।<sup>१</sup>

लोक कथाओं के जन्म की कहानी मनुष्य की जीवन यात्रा के साथ ही प्रारम्भ हुई और हजारों वर्षों के उसके सतत संघर्षशील पुरुषार्थ के उतार चढ़ाव, उत्कर्ष-अपकर्ष, यश अपयश परक अनुभूति की सहचरी और साक्षी रही है। जो कथा वस्तु तथा उसकी कलात्मक कथा प्रणाली एक साहित्यिक सौन्दर्य प्राप्त कर लेती है। लोककथा विश्व व्याप्त है इसमें लोक जीवन

अनेकरूपों में प्रकट होता चला आ रहा है। मानव के सुख दुख, रीति रिवाज, आस्थाएं एवं विश्वास इन लोक कथाओं में अभिव्यक्त होते रहते हैं। लोक कथा मौखिक रूप में ही प्राप्त होती है।<sup>२</sup>

लोक कथाओं के मौखिक रूप में प्राप्त होने के ही कारण इनमें देश, काल और परिस्थिति के अनुसार रूपान्तरण होता रहता है। लोक कथाओं को समय के साथ-साथ चलने में कोई कष्ट नहीं होता है, यही कारण है कि इनका अस्तित्व आज भी बना हुआ है। मानव के सुख दुख, रीति रिवाज, धार्मिक विश्वास, पूजा उपासना आदि कहानी में सम्मिलित रहते हैं। मन के आयास को हटाने के लिए कहानी मानव समाज का प्राचीन रसायन है। डॉ० विद्या चौहान कहते हैं कि लोकभाव के माध्यम से सामान्य लोक जीवन में प्रचलित विश्वास, आस्था और परम्परा पर आधारित कथाएं लोक कथा के अन्तर्गत आती हैं, इससे मानव का पर्याप्त आमोद प्रमोद होता है और आये दिन की कथाएं लोककथा के अन्तर्गत आती हैं।<sup>३</sup>

डॉ० कृष्णदेव उपाध्याय कहते हैं कि लोक साहित्य के क्षेत्र में लोक कथाओं का एक विशिष्ट स्थान है। इन कथाओं के द्वारा सर्व साधारण जनता के मन का जितना अनुरंजन होता है उतना अन्य निजी साधक के हाथ नहीं होता। भारतवर्ष लोक कथाओं की भूमि है, यहां की प्राचीन कथाओं ने समस्त संसार के कथा साहित्य को प्रभावित किया है।<sup>४</sup>

लोक वाङ्मय का मूलाधार लोकमानस हैं। यही लोकानुभूमि की आधार शिला है। सम्पूर्ण लोकाभिव्यक्ति का मूल स्रोत भी लोकमानस ही है। लोकमानस ही लोक मानसिकता का सृजन करता है, इसी कारण उत्सुकता भय परा प्राकृतिक सूक्तियां देवी अथवा आसुरी आत्माओं का अस्तित्व लोककथा को प्रभावशाली व सरल बना देता है। लोककथा का अपना पृथक रूप होता है। लोक कहानी का आरम्भ तो भिन्न अमूल्य होती ही है लेकिन उसमें आगे बढ़ने की शैली अलग-अलग होती है। कहानी का एक रूप ऐसा होता है जिसमें एक आरम्भिक कथा के प्रारम्भ होने तथा बाद में कुछ व्यक्तियों द्वारा अपनी कहानी जोड़ दी जाती है। लोक कहानी के अध्ययन में कथारूप का महत्वपूर्ण स्थान रहता है। कथारूपों के विभिन्न स्वरूपों में कभी कोई कहानी ऐसी भी होती है जिसमें एक कहानी के प्रारम्भ होने के बाद दूसरी तीसरी निकल आती हैं। लोक कहानी के पात्र युगों और क्षेत्रों के अनुसार सहज रूप से बदल जाते हैं। लोक कहानी के निर्माणकारी तन्तुओं में कथा तंतु का महत्वपूर्ण स्थान है। इन्हें अभिप्राय भी कहा जाता है। किसी लोक कहानी में कहानी तत्व में क्रिया प्रतिक्रिया मूलक परम विशिष्ट रूप से योजित की जाती है इसे अभिप्राय कहा जाता है। डॉ० सत्येन्द्र के अनुसार वृत्त विषयक कथातंतु कभी-कभी बहुत भाव चित्र ही होते हैं जो परम्परा से प्राप्त कहानियों

में लगातार काम में आते हैं। ये अद्भुत प्राणी हो सकते हैं। दैवी लोक जड़ प्रदान असाधारण शक्ति भी इसमें सम्मिलित हो सकती है। लोक कथाओं की सृजन भूमि में कथा मानकों का विशिष्ट स्थान होता है। प्रत्येक लोक कहानी का प्रयोजन तो होता ही है। लोक कथा जब सृजित होती है तब उसकी उपादेयता या प्रयोजनीयता का अपना एक आधार भी होता है। वह आयु वर्ग देश काल पात्र या घटना केन्द्रित होते हुए भी किसी न किसी प्रयोजन से अवश्य जुड़ी होती है। कोई भी कथा निष्प्रयोजन तो हो ही नहीं सकती। लोक का मूल उद्देश्य लोकानुरूपक एवं लोक कल्याण होता है। लोक कथा के निर्माण में वातावरण की प्रमुख भूमिका रहती है।

लोक कथाओं का वर्गीकरण विभिन्न आधारों पर किया जाता है। विषय वस्तु की दृष्टि से या उद्देश्य के आधार पर भी लोक कथाओं का वर्गीकरण किया जा सकता है। स्वभाव से तात्पर्य लोक कथाओं का लौकिक अथवा अलौकिक होना से समझा जा सकता है। डॉ० सत्येन्द्र स्थूल दृष्टि से कहानी को निम्न भागों में बांटते हैं। (1) गाथाएं (2) पशु पक्षी सम्बन्धी (3) बुझौवल सम्बन्धी (4) विक्रम की कहानियां (5) निरीक्षण सम्बन्धी (6) साधु वीरों की कहानियां (7) कारण निर्देशन कहानियां (8) बाल कहानियां

लोक कथाओं का क्षेत्र इतना व्यापक और विस्तृत है जितना मानव जगत का कर्मक्षेत्र और संसार। जीवन और समाज का कोई भी पक्ष अथवा सत्य असत्य लोककथा की विवेकी दृष्टि से अदृश्य नहीं होता। लोक कथाओं का वर्गीकरण विषम वस्तु और शिल्प सौष्ठव के आधार पर भी किया जा सकता है।

लोक कथाओं में सामाजिक, सांस्कृतिक, आध्यात्मिक तथा दार्शनिक जीवन की अत्यन्त ही सुन्दर व कलात्मक अभिव्यंजना का अकृत्रिम सौन्दर्य देखने को मिलता है। यह ग्रामीण संस्कृति का बृहद कलात्मक कोष है, अंचल का समग्र वैश्विक ही लोक कथाओं की पहचान है। लोक कथा की सबसे पहली प्राणवान विशेषता है वक्ता और श्रोता का अभूतपूर्व तादात्म्य का होना। संगीत में जो स्थान लय और संगीत का होता है वही स्थान लोक कथाओं में वाचन और कथन में स्वीकृति सूचक शब्दों का होता है।

लोक कथाओं के विराट फलक पर मनुष्य की आधारभूत मनोवृत्तियों की सुन्दर स्वाभाविक तथा प्रभावशाली अभिवंदना सुदृढ़ में ही अंकित होती है। लोक कथाओं के श्रृंगार प्रेममय, भय, विस्मय, आरंभ निजता काम क्रोध, उत्साह, वैराग्य सुख-दुख इत्यादि का हृदयस्पर्शी चित्रण होता है।

सत्यनिष्ठ नायक, अपूर्व सौन्दर्यपूर्ति नायिका जीवन की अनेक क्रीडाओं को प्रदर्शित करते हुए लोक कथा में दिखाई देते हैं। लोक कथाओं में श्रृंगार भी संकलित होता है। इन कथाओं के दाम्पत्य जीवन की रमणीयता विनाता की ईर्ष्या तथा वात्सल्य का अमृत भी प्रवाहित होता मिल पायेगा।

लोक कथाओं की दुनिया में सामाजिक सम्बन्धों का अत्यन्त ही मनमोहन व सजीव चित्रण मिलता है। पति पत्नी का हास परिहास, मां की ममता विमाता की कुरता, भाई बहिन का निश्छल प्रेम, भाभी की ननद के प्रति ईर्ष्या, कृतघ्न सन्तान त्यागी सेवक मूर्ख पति विवेकी मित्र का विवरण मिलता है। लोक कथाओं में लोक जीवन का चित्रण होता है। समाज के विभिन्न जातीय संगठनों की अपनी अपनी मौलिक निजता होती है। लोक कथाओं की सृष्टि में मानव के पुरुषार्थ के मूल में आशा, भाग्य और कर्म की तीन धारारें एक साथ प्रवाहित होती हैं। लोक कथाओं के नायकों के जीवन में नैराश्य नहीं है और न ही अपने उत्तर दायित्वों की सघनता से भावना भी नहीं है। लोक कथाओं

की दुनिया नियतिवाद में विश्वास रखती है।

लोक कथाओं का शिल्प संगठन भी विलक्षण होता है। यह किसी संस्कृत काव्य शास्त्र के रचित लक्षण ग्रंथों से नियमों की अपेक्षा नहीं करता, बल्कि सहज भाव से भावभिव्यक्ति करता हुआ अग्रसर होता है। लोक कथा का शैली तत्व निर्भर करता है। साहित्य समाज का दर्पण है उतना ही सत्य सिद्ध होता है। लोक कथा के क्षेत्र में जितना कि अन्य किसी क्षेत्र में।

**निष्कर्ष:-**लोक कथाओं ने युगों से पीढ़ी दर पीढ़ी मौखिक रूप से जल वर्षा करने वाली बदली की तरह आनन्द बरसाया और सांसारिक क्षेत्र में त्रिताप संतप्त जन मन को अपूर्व शान्ति प्रदान की। लोक कथाएं उस विशाल वट वृक्ष की भांति हैं जिसकी जड़ें धरती के गर्भ में और शाखाओं का विस्तार धरती पर फैलता है। व्यावहारिक जीवन का अच्छा-बुरा शुभ-अशुभ आरम्भ-निराशा, हर्ष-विषाद इसके लिए खाद पानी का काम करते हैं। यह परम्परा जीवित है परन्तु प्रयोगधर्मी दिखाई देती है। यह पुरातन है परन्तु नित्य नवीनता इसमें दिखाई देती है। नीरसता, क्लिष्टता, जटिलता, दुरुहता इनमें नहीं दिखाई देती वरन सरल, सरस और मर्यादित दिखाई देती है। वर्षों वर्षों के अनुभव से यह पूर्ण दिखाई देती है। मानव ने अपनी सभ्यता की नींव से जब आगे बढ़ना आरम्भ किया तब से लेकर और वर्तमान समय तक का कालक्रम सब कुछ इन लोक कथाओं में दिखाई देता है। यही कारण है कि सभ्यता और संस्कृति के वाहक के रूप में इनको माना जाता है।

**संदर्भ सूची :-**

1. डॉ० सत्येन्द्र, बृज लोक साहित्य का अध्ययन पृ० 14
2. डॉ० शंकर लाल यादव, हरियाणा प्रदेश का लोक साहित्य पृ० 339
3. मोहन लाल बाबुलकर, गढ़वाली लोकसाहित्य का विवेचन पृ० 195
4. डॉ० कुन्दन लाल उप्रेती, लोक साहित्य के प्रतिमान पृ० 116
5. डॉ० वासुदेवशरण अग्रवाल, आजकल, लोककथा कंश मई 1954
6. डॉ० विद्या चौहान, लोकगीतों की सांस्कृतिक चेतना, पृ० 651
7. डॉ० कृष्णदेव उपाध्याय, लोक संस्कृति की रूपरेखा, पृ० 293
8. डॉ० सत्येन्द्र, लोक साहित्य विज्ञान, पृ० 216
9. डॉ० सत्येन्द्र, लोक साहित्य विज्ञान पृ० 275

## साहित्य में छत्तीसगढ़ी

राज श्री भारद्वाज

डॉ. आर. के. वर्मा

1. शोधार्थी, हिन्दी, सत्यनारायण अग्रवाल शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, कोहका, नेवरा, रायपुर, छग.

1. सहायक प्राध्यापक, हिन्दी, सत्यनारायण अग्रवाल शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, कोहका, नेवरा, रायपुर, छग.

पूर्वी हिंदी के रूप में छत्तीसगढ़ी भाषा आती है। हिंदी भाषा में समृद्ध साहित्य के समान अन्य प्रादेशिक भाषाओं में साहित्य सृजन होते रहे हैं। छत्तीसगढ़ी साहित्य का प्राचीन काल से आज तक परिवर्तित रूप में अपनी उपस्थिति दर्ज कराती रही है। प्रारंभिक रचनाएं प्रेम और वीरता प्रधान थी जो पौराणिक और धार्मिक ग्रंथों पर आधारित होती थी। पांडवानी के विशिष्ट पात्रों और फूलबासन सीता और लक्ष्मण की गाथा पर आधारित कविता है। पांडवों की कथा में छत्तीसगढ़ी व्रत हरतालिका या तीजा का वर्णन है। फुलकुंवर, देवी गाथा, ढोला मारू और नगेसर कइना प्रचलित लघु कथाएं हैं। फुलकुंवर की वीरता का वर्णन है। धर्मदास की रचनाएं आत्मानुभूति, ईश्वरीय विरह, परमतत्त्व से साक्षात्कार नैतिक उपदेशों से संबंधित है। 'स्व. डॉ. नरेन्द्र देव वर्मा' ने सहस्र वर्षों की छत्तीसगढ़ी साहित्यिक परंपरा को विभिन्न युगों में अग्रांकित आधार पर विभाजित किया है-

1. गाथा युग ( सन् 1000 से 1500 ई. तक)
2. भक्ति युग ( सन् 1500 ई. से 1900 ई. तक)
3. आधुनिक युग ( सन् 1900 ई. से )

डॉ. वर्मा ने उपर्युक्त काल निर्धारण के परिप्रेक्ष्य में छत्तीसगढ़ी लोकगीतों को आधार बनाया है। गाथायुग में उन्होंने जहां प्रेमप्रधान वीरोचित छत्तीसगढ़ी लोक गाथाओं को समादृत किया है, वहीं मध्ययुग की वीरगाथाओं में छत्तीसगढ़ी लोकगाथा फुलकुंवर देवीगाथा, नगेसर कइना, ढोला मारू, लोरिक चंदा और रायसिंह का पंवार आदि ऐतिहासिक लोकगाथाओं का समाहार किया है। धार्मिक और सांस्कृतिक गीत परंपरा में कबीरदास के प्रिय शिष्य धर्मदास एवं गुरु घासीदास के पंथी गीतों को उद्धृत किया है। आधुनिक युग के अंतर्गत छत्तीसगढ़ी शिष्ट साहित्य का इतिहास मानुसार विद्यागत अध्ययन के साथ स्वर्गीय वर्मा द्वारा प्रथमतः प्रस्तुत किया जाना विशिष्ट कहा जा सकता है। छत्तीसगढ़ी की प्रारंभिक रचनाएं आंचलिक लोकगाथाओं पर आधारित आध्यात्मिकता, श्रृंगारिकता और भावाभिव्यक्ति की सरलता समाहित थी।

धर्मदास की रचनाएं लिपिबद्ध रूप में मिलती है। कुछ शिलालेखों एवं लोक गाथाओं के रूप में केवला रानी, रेवा रानी, अहिमन रानी एवं बांसगीत प्राचीन काल से पाई जाती है। धार्मिक आख्यान के रूप में रामकथा, महाभारत के प्रसंग लोकगाथाओं के रूप में मिलती है। ढोला- मारू, आल्हा - ऊदल की गाथा, भरथरी अंचलों में विशेष रूप से लोकप्रिय है। कबीर की साखियों का प्रयोग छत्तीसगढ़ी भाषा में बहुतायत हुआ। संत धर्मदास, संत घासीदास की रचनाएं उपदेशात्मक एवं दार्शनिकता पर आधारित जीवन की

सीख देती है। 'डॉ. विनय कुमार पाठक प्रकाशन एवं काल के आधार पर उपर्युक्त दो कवियों के पूर्व प्रथम रचनाकार को स्थापित करने का एकदम नया सूत्र ढूंढते हैं, तदानुसार उन्होंने नृसिंहदास वैष्णव कृत 'शिवायन' (1904) को छत्तीसगढ़ी की सर्वप्रथम रचना स्वीकार किया है। ग्राम्य जीवन एवं लोक लालित्य- संस्कार के माध्यम से छत्तीसगढ़ी कविता को जीवंत करने वाले बाबू प्यारेलाल गुप्त छत्तीसगढ़ी के स्तंभ-सर्जक है। इस युग में ही छत्तीसगढ़ी साहित्य को मंच व प्रकाशन देने वाले युग प्रवर्तक कवि पंडित द्वारिका प्रसाद तिवारी 'विप्र' का योगदान अविस्मरणीय है। 'कूछुकाही' (1935) 'सुराजगीत' (1957) 'राम अरु कंवट संवाद' तथा 'फागुन गीत' विप्र जी के प्रमुख काव्य संग्रह है। विप्र जी की एक विशिष्ट रचना 'धमनीहाट' कोमल कमनीय श्रृंगार की उस अस्पृशित आत्मीयता को अभिव्यक्त करती है, जिससे छत्तीसगढ़ी काव्य नई दिशा पर प्रस्थित होता है-

तोला देखे रहेव गा, तोला देखे रहेव रे,  
धमनी के हाट मा बोईर तरी रे,  
लेकर-धकर आए जोही, आंखी ल मटकाये,  
कइसे जादू करे मोला, सुक्खा म रिझाये।<sup>2</sup>

पंडित सुंदरलाल शर्मा की रचना दानलीला कृष्ण के जीवन चरित पर आधारित प्रमुख रचना है। कृष्ण की लीलाओं और भक्ति के माध्यम से छत्तीसगढ़ की ग्रामीण परिवेश और संस्कृति को अभिव्यक्त करती है। देश भक्त, समाज सुधारक साहित्यकार डॉ. सुंदरलाल शर्मा छत्तीसगढ़ी साहित्य के भारतेंदु की उपमा दी जाती है। 'छत्तीसगढ़ी प्रबंध काव्यों का प्रणयन छत्तीसगढ़ी भाषा की अभिव्यक्ति कौशल और सार्थकता की सक्षम सूचना है। वस्तुतः छत्तीसगढ़ी साहित्य के प्रारंभिक काल से ही छत्तीसगढ़ी में प्रबंध काव्य लेखन की परंपरा उपलब्ध है। छत्तीसगढ़ी मुक्तक काव्य की तुलना में प्रबंध काव्य लेखन अल्प ही हुआ है। डॉ. साधना सिंह लिखती हैं- छत्तीसगढ़ी प्रबंध काव्यों की शुरुआत बीसवीं शताब्दी के प्रारंभिक दशकों में हो गई थी प्रबंध काव्य की इस परंपरा का विकास स्वतंत्रता के बाद ही हुआ, लेकिन मुक्तक काव्य के रचियता जिस तरह प्रचुर मात्रा में अग्रसित हुए, उसकी तुलना में प्रबंध काव्यों की ओर कवि प्रवृत्त नहीं हुए इसके बावजूद तीन महाकाव्यों के साथ अनेक खंड काव्यों का सृजन छत्तीसगढ़ी काव्य को समृद्धि प्रदान करने के लिए पर्याप्त है। राजिम निवासी पंडित सुंदरलाल शर्मा प्रणीत प्रथम खंडकाव्य 'दानलीला' के तृतीय संस्करण सन् 1912 की प्रति प्राप्त हुई है। दोहे-चौपाई में भगवान श्री कृष्ण प्रणयदान का अलौकिक चित्रण छत्तीसगढ़ी काव्य-भाषा की सर्वोत्तम प्रस्तुति 'दानलीला' की विशिष्टता है। इस कृति की

तात्कालीन छत्तीसगढ़ी समाज में अपार लोकप्रियता एवं प्रथम प्रणेता छत्तीसगढ़ी कवि के रूप में पंडित सुंदरलाल शर्मा का योगदान अत्यंत महत्वपूर्ण है।<sup>3</sup>

छत्तीसगढ़ी साहित्यकारों में कुंज बिहारी चौबे की रचनाएं प्रेम, राष्ट्रीय भावनाओं और सामाजिकता पर आधारित है। 'कुंज बिहारी चौबे का कृतित्व सर्वाधिक विलक्षण और द्वितीय है। 'अजी अंग्रेजी तै हमला बनाये कंगला' में जहां अंग्रेजों के प्रति ग्राम्य आक्रोश की अभिव्यक्ति हुई है, वहां 'चल मोर भइया बियासी के नागर' में समूचा ग्राम जीवन स्पष्ट हो गया है-

पहिरे बर दू बीता के पागी जी,  
पीये ला चोंगी धरे ला आगी जी  
खाये ला बासी पिये ला पेज पसिया  
करे बर दिन रात खेत मा तपसिया,  
साधू जोगी ले बड़के दरजा हे हमर।  
चल मोर भइया बियासी के नागर।

इसी प्रकार, 'तैहर टग डाले हमला रे गोरा' में अंग्रेजों की शोषण-नीति का उद्घाटन किया गया है और 'गांधी गोरा' में महात्मा गांधी के अवतरण की दिव्यता और रचनात्मक कार्यक्रमों के चित्रण के साथ उनके अहिंसात्मक सत्याग्रह का गुणगान किया गया है। राजनीतिक हलचलों के आधार पर लिखी जाने वाली कृतियों में 'छत्तीसगढ़ी सुराज' का अपना विशेष स्थान है। इस पुस्तक की प्रायः सभी रचनाएं प्रचलित राजनीतिक मतवादों का परिदर्शन कराते हुए महात्मा गांधी की नीति की वरीयता सिद्ध करती है। 'गिरिवर दास वैष्णव की छत्तीसगढ़ी सुराज समाजवादी दृष्टिकोण पर आधारित है। कोदूराम दलित की हास्य व्यंग्य प्रधान रचनाएं, द्वारिका प्रसाद विप्र की किसान जीवन पर केन्द्रित-'धन-धन रे मोर किसान' एवं 'तोला देखे रेहें' श्रृंगार प्रधान रचना है। पंडित श्यामलाल चतुर्वेदी की परा भर लाई, राम वनवास, बेटी के विदा समकालीन परिस्थितियों का चित्रण है। श्यामलाल चतुर्वेदी की सतवतिन सुकवारा नारी जीवन की समस्याओं और संघर्ष को रेखांकित करती है। ग्रामीण नारी की सरलता, सहजता और संस्कृति की छाप सुकवारा के रूप में दिखाई देती है। केयूर भूषण की आंसू म फिले अचरा भारतीय नारी की सहनशीलता, त्याग, समर्पण, साहस, प्रेम और पतिव्रता नारी के रूप अपने पति के प्रति संपूर्ण रूप से समर्पित है। ससीप्रभा के माध्यम से एक आदर्श पत्नी और शशिकांत के प्रति भाई बहन के अटूट और पवित्र संबंधों की अभिव्यक्ति हुई है। 'को जनी भारतीय नारी ए' पर पुरुष ल भाई मान सकथे, बाप मान सकथे, फेर तन नई देए सकय। भगवान तैं भारतीय नारी ल कोन माटी म गढ़े हस? सोन म गढ़े हस का? जस पिठथे, जस पिठथे, जल-जस जरथे, तस चमकथे।<sup>5</sup> नारी जीवन और सामाजिक समस्याओं पर केन्द्रित रचनाओं में विनय कुमार पाठक की सीता के दुख नामक खंडकाव्य और कपिलनाथ कश्यप की सीता के अग्नि-परीच्छा सीता की व्यथा और नारी समस्या पर आधारित है। नारायण लाल परमार ने गद्य और पद्य दोनों विधाओं में लिखा। हनुमंत नायडू की छत्तीसगढ़ी कविता सामाजिक विषमता और विविधता पर आधारित है। जीवन यदु की कविता ग्राम्य जीवन और किसान के श्रम और संघर्ष की भावात्मक अभिव्यक्त है-

'आसो अइसन बरस, रे बादर !  
कुछ तो करजा छूटे रे।  
मूंड के बोझा कुछ तो उतरे,  
गर के फांदा टूटे रे।

बाढ़ी खाके हमन बढ़ागेन,  
रोंठ रहिन, दुन रोंठियागें।  
जे मनखे मन पोठ रहिन, वो -  
दुन ल जादा पोठियागें।  
आसो अइसन बरस रे बादर !  
घर - कुरिया झन फूटे रे।  
मूंड के बोझा कुछ तो उतरे,  
गर के फांदा टूटे रे।<sup>6</sup>

विनय कुमार पाठक की छत्तीसगढ़ी लोक कथा, छत्तीसगढ़ी साहित्य और साहित्यकार, एक रुख एकेच शाखा (जीवनी), अकादसी अऊ अनचिन्हार (काव्य) सामाजिक, किसान जीवन, सामाजिक विद्वरुपताओं और विषमताओं पर आधारित है। मुकुंद कौशल ने संगीत और गजल के रूप में छत्तीसगढ़ी साहित्य विधा को परिष्कृत किया। भिनसार छत्तीसगढ़ी गजल काव्य संग्रह है। प्रयोगवादी गीतकार के रूप में जाने जाते हैं। सरल, सहज भाषा मुहावरों और जनभाषा में छत्तीसगढ़ी गजल विधा को छत्तीसगढ़ी साहित्य में लाने का प्रसंशनीय कार्य किया। भगवती लाल सेन की रचनाएं जनगीतों पर आधारित है। डॉ. सत्यभामा आडिल की सऊत कथा, गोठ, काव्य - क्रांर की दुपहरी, काला सुरज सामाजिक रचनाएं हैं। सीख-सीख के गोठ बात-बात मे सीख पर आधारित ग्रामीण उक्तियों के माध्यम शिक्षात्मक अभिव्यक्ति है। डॉ. परदेशी राम वर्मा की हमला तय झन भरमा जी, बिरसपत के बिरसपत, डोरी झालर, पकड़, मैं बइला नोहंव सामाजिक समस्याओं पर आधारित परिवर्तनकारी रचनाएं हैं। कपिलनाथ कश्यप कवि, अनुवादक, आत्मकथा लेखक, कहानी, एकांकी सभी विधाओं में रचनाएं लिखी। हीरा कुमार खंडकाव्य, व्यास चरित का छत्तीसगढ़ी अनुवाद, अधियारी रात एकांकी, नवा बिहान, पूजा के फूल, गुंरावट बिहा, डहर के फूल ( एकांकी संग्रह), निबंध निसैनी निबंध संग्रह है। श्री राम कथा, श्री कृष्ण कथा, एवं श्री महाभारत कथा प्रबंध काव्यों पर आधारित ऐतिहासिक एवं पौराणिक रचनाएं हैं। जिनमें छत्तीसगढ़ी संस्कृति, परंपरा, रीति - रीवाजों की झलक प्रस्तुत की गई है। मुकुंदधर पांडेय ने मेघदूत का छत्तीसगढ़ी में अनुवाद किया। विमल कुमार पाठक की गंवई के गीत, हरि ठाकुर की सुरता के चंदन दानेश्वर शर्मा की मंडई प्रमुख छत्तीसगढ़ी भाषा की अभिव्यक्ति है। लखनलाल गुप्त की चंदा अमरित बरसाइस, सरग ले डोला आइस, आत्मकथा सुरता के सोनकिरण छत्तीसगढ़ी साहित्य में सुंदर अभिव्यक्ति है। सोनपान के माध्यम से पारंपरिक त्योहार पर आधारित भरत-मिलाप प्रसंग आधारित आत्मीयता और मित्रता को परिभाषित करती है। छत्तीसगढ़ में मित्रता के प्रतीक के रूप में सोनपान बांटने की प्रथा एक -दूसरे के प्रति आत्मीयता को प्रकट करती है।

'प्रामाणिक रूप से छत्तीसगढ़ी गद्य की शुरुआत 1890 में प्रकाशित हीरालाल काव्योपाध्याय के छत्तीसगढ़ी बोली के व्याकरण से मानी जा सकती हैं। श्री हीरालाल ने इस ग्रंथ में छत्तीसगढ़ी गद्य साहित्य के इतिहास के विश्लेषण के साथ-साथ प्रथमतः उसके व्याकरण को भी प्रस्तुत किया है। छत्तीसगढ़ी कहानी एवं नाटक का समावेश इस कृति की विशेषता है। इस दृष्टि से हीरालाल काव्योपाध्याय को छत्तीसगढ़ी गद्य साहित्य के प्रवर्तक के रूप में प्रतिष्ठित करना उचित ही होगा। प्राचीनता की दृष्टि से छत्तीसगढ़ी गद्य के साक्ष्य दंतेवाड़ा के शिलालेख (1703) और आरंग अभिलेख (1724) में सुरक्षित हैं सन् 1890 में पंडित हीरालाल काव्योपाध्याय प्रणीत 'छत्तीसगढ़ी व्याकरण' में इनकी कहानियां संकलित है। सन् 1905 में लोचन प्रसाद पाण्डेय कृति

‘कालिकाल’ एवं हिन्दी मास्टर शीर्षक नाटक का प्रकाशन भी ऐतिहासिक घटना है। पंडित शुक्लाल पांडेय की ‘गीयां’ (1920) में छत्तीसगढ़ी एकांकी संकलित हैं। पंडित बंशीधर शर्मा लिखित ‘हिरू के कहिनी’ (1928) एक प्रलंब कथा है। पंडित सीताराम मिश्र की कहानी ‘सुरही गईया’ सन् 1928 में ही ‘विकास’ नामक पत्रिका में प्रकाशित हुई। स्वातंत्र्योत्तर छत्तीसगढ़ी गद्य लेखन विस्तृत एवं व्यापक होता है।<sup>7</sup> स्वातंत्र्योत्तर छत्तीसगढ़ी रचनाएं प्रयोगवाद, नई कविता काल से संबंधित नये विधाओं में रचनाएं लिखी गई एवं सौंदर्य, शिल्प विधान में भी परिवर्तन हुआ। ‘डॉ. विनय कुमार पाठक कृति ‘अकादसी’ की छत्तीसगढ़ी कविताएं मौलिक सांस्कृतिक उपमानों एवं प्रतीकों से ओतप्रोत है। उन्होंने अपनी कविताओं में छत्तीसगढ़ी परिवेश को प्रतीक व उपमान मानकर मात्र उन्हें स्पर्श ही नहीं किया, अपितु उन्हें जीवंत भी बनाया है। यह उनकी छत्तीसगढ़ी आंखों का कमाल और कविता की सुंदर भावधारा का समन्वयन है। अग्रांकित कविता में प्रेम की सुमधुर कल्पना बारात की तरह सुसज्जित और पाणिग्रहण के पुनीत व शसक्त ग्रंथि में ग्रथित है-

बरात कस संवर हमर भया  
भांवर के गांठ में जुरे रहय  
मन के मंगरोहन मुसकियात  
अंतस के चऊंक ह पुरे रहय।<sup>8</sup>

छत्तीसगढ़ी साहित्य जीवनी, संस्मरण, व्यंग्य आदि विधाओं में लिखी गई है। छत्तीसगढ़ी शब्दकोश भी विकसित हुए हैं। भारत की अन्य भाषाओं के समान छत्तीसगढ़ी भाषा साहित्य में रचनाएं लिखी गई समय के अनुसार परिवर्तित होती हुई अपनी उपस्थिति और लोकप्रियता बनाने में संघर्षरत है।

संदर्भ सूची:-

1. छत्तीसगढ़ी भाषा, साहित्य व संस्कृति के विकास में डॉ. विनय पाठक का योगदान - डॉ. मनीष कुमार दीवान, पृष्ठ - 23
2. वही, पृष्ठ- 27-28
3. वही, पृष्ठ- 31
4. छत्तीसगढ़ी भाषा और साहित्य - डॉ. सत्यभामा आड़लि, पृष्ठ - 9-10
5. वही, पृष्ठ- 184
6. वही, पृष्ठ- 161
7. छत्तीसगढ़ी भाषा, साहित्य व संस्कृति के विकास में डॉ. विनय पाठक का योगदान - डॉ. मनीष कुमार दीवान, पृष्ठ - 37
8. वही, पृष्ठ- 33-34

# जीवनमूल्यों के परिप्रेक्ष्य में श्रीविवेकानन्दविजयम् महानाटक का समीक्षात्मक अध्ययन

धोलू राम मीना  
डॉ. अल्पना शर्मा

1. शोधार्थी, वनस्थली विद्यापीठ, टोंक, राजस्थान

1. सह आचार्य, संस्कृत, दर्शन एवं वैदिक अध्ययन विभाग, वनस्थली विद्यापीठ, टोंक, राजस्थान

किसी भी भाषा साहित्य का केंद्रबिंदु समाज होता है तथा समाज का केंद्र मानव ही होता है। लौकिक संस्कृत काव्य में 'नाट्य' एक महत्वपूर्ण विधा है जिसके अंतर्गत मानव और उसके जीवन से सम्बंधित विभिन्न पक्षों का वर्णन होता है, जो मूल्यों द्वारा निर्देशित होते हैं। अतः भाषा साहित्य का महत्वपूर्ण उद्देश्य है कि मूल्यों की खोज करके उनकी राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक और मानवतावादी व्याख्या करना। आज के समय में द्रुतगति के साथ मूल्यों का ह्रास हो रहा है और दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति यह है कि हम भारतवासी शिक्षा प्राप्त करने हेतु विदेशों में जाते हैं तथा अपनी संस्कृति और हमारे पूर्वजों के आदर्शों को भूल से गए हैं, जो एक सोचने का विषय है जबकि प्राचीनकाल में तो अखिल विश्व के लोग चारित्रिक एवं नैतिक शिक्षा प्राप्त करने के लिए हमारे भारतवर्ष में आया करते थे जिसका वर्णन मनुस्मृति में इस प्रकार प्राप्त होता है -

एतद्देश प्रसूतस्य सकासादग्रजन्मनः।

स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरन् पृथिव्यां सर्वमानवाः॥

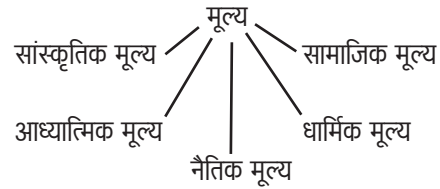
(मनुस्मृति 2./20)

अतः आज हमारी सबसे महत्वपूर्ण आवश्यकता यह है कि हमें भारतीय शाश्वत जीवन मूल्यों को अपने जीवन में कार्यान्वित करना चाहिए। श्रीविवेकानन्दविजयम् महानाटक में वर्णकर जी द्वारा चित्रित स्वामी विवेकानन्द जी निश्चित रूप से जीवन मूल्यों एवं आदर्शों के प्रतीक हैं। अतः इस महानाटक में वर्णित जीवनोपयोगी मूल्य मानव के चारित्रिक एवं नैतिक विकास में लाभदायक सिद्ध हो सकते हैं।

**जीवन मूल्य का अर्थ, परिभाषा एवं वर्गीकरण:-** 'मूल्य' अंग्रेजीभाषा के VALUE शब्द का हिंदी पर्याय है, जो यूनानी शब्द 'एक्सिसयस' से बना है जिसका अर्थ होता है मूल्य या कीमत। संस्कृत में मूल्य शब्द मूल धातु में यत् प्रत्यय जोड़ने से बना है जिसका अर्थ है- मोल लेने योग्य कीमत, मोलया लागत। व्यवहार के अर्थ में अगर देखा जाये तो मूल्य वस्तु की उस क्षमता को व्यक्त करता है जो मनुष्य की आवश्यकताओं और इच्छाओं को संतुष्टि प्रदान करती है। डॉ. उमाकांत के अनुसार- 'मूल्य आधुनिक संदर्भों में उपयोगिता, विनिमयिता, सामाजिक हित या सुख समानार्थक अधिगृहीत किया जाता है।' महादेवी वर्मा- 'वास्तव में थोड़े से सिद्धांत जो मनुष्य को मनुष्य बनाते हैं, हम उन्हें ही जीवन मूल्य कहते हैं।'।

उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट है कि जो कोई भी वस्तु व्यक्ति के मन को शांति दे, उसकी प्रेरणा बने और अपने आप में सार्थक महत्व रखती हो, वह

मूल्यवान् है। सभी प्रकार के मूल्य मानव के जीवन से सम्बन्ध रखते हैं इसलिए मूल्यों को मानव जीवन से अलग रखकर नहीं देखा जा सकता है। भारतीय चिंतकों व साहित्यकारों ने व्यवस्थित जीवन यापन हेतु चतुर्वर्ग (धर्म-अर्थ-काम-मोक्ष) की कल्पना की है जो व्यक्ति की आन्तरिकतथा बाह्य आवश्यकताओं की पूर्ति कर सके। मानव जीवन से जुड़े हुए मूल्यों का निम्न प्रकार से वर्गीकरण किया जा सकता है-



श्रीविवेकानन्दविजयम् महानाटक में निहित प्रमुख जीवनमूल्य:-

श्रीधर भास्कर वर्णकर द्वारा विरचित 'श्रीविवेकानन्दविजयम्' नाट्य जगत् का उत्कृष्ट महानाटक है। दस अंकों में विभक्त इस महानाटक में स्वामी विवेकानन्द के उदात्त चरित्र का वर्णन है जो भारतीय समाज में ही नहीं बल्कि पाश्चात्य समाज में भी विलक्षण है। उदात्त नायक का लक्षण दशरूपक में इस प्रकार है-

महासत्त्वोऽतिगम्भीरः क्षमावानविकल्थनः।

स्थिरो निगूढाहंकारो धीरोदात्तो दृढ़व्रतः॥

(दशरूपक 2/4)

वर्णकर जी ने इस महानाटक में मानवोपयोगी मूल्यों का उत्कृष्टता के साथ समावेश किया है उन्होंने अखिल विश्व को यहाँ की संस्कृति, समाज, धर्म, साहित्य और नीति को विभिन्न प्रसंगों, अवांतर कथाओं एवं संवादों के द्वारा प्रस्तुत किया है और बताया है कि भारतीय संस्कृति के समान कोई संस्कृति नहीं है जिसमें विश्व कल्याण की भावना उत्कृष्ट रूप से विद्यमान हो। इस महानाटक में वर्णकर जी ने जीवनोपयोगी सभी मूल्यों का समावेश किया है जिनमें से प्रमुख निम्नानुसार हैं-

1. सामाजिक मूल्य- मानव की निजी धारणाएं अथवा निजी जीवन मूल्य उसे युग में समाज की संकल्प शक्ति से जोड़ते हैं, वैयक्तिक जीवन मूल्य ही विस्तृत स्तर पर सामाजिक मूल्य बन जाते हैं। महानाटक में स्त्रियों का सम्मान, गुरुजनों का आदर एवं आज्ञापालन, अस्पृश्यता का विरोध, समाज में व्याप्त कुरूपतियों का विरोध, असामाजिक तत्त्वों को दूर करना, प्रेम तथा 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की भावना का संचार, साथ ही आर्थिक विषमता आदि के वर्णन

से सामाजिक मूल्यों को उत्कृष्टता के साथ प्रस्तुत किया है।

प्रथम अंक में विलियम, रहमान और वामाचरण अपनी कुत्सित भावना एवं दुराचरण द्वारा शेफालिका नामक विधवा को पीड़ित करते हैं, तब विवेकानन्द उसकी रक्षा करते हैं और कहते हैं- 'मातृवत् पराङ्गना'। गुरुदेव रामकृष्ण परमहंस भी अपनी पत्नी शारदा देवी के प्रति उचित आचरण एवं आदर भाव रखते हैं, इसके साथ ही विश्व धर्म सम्मलेन में जाते समय स्वामी जी विदेशी महिला के प्रति आदर भाव रखते हैं और उनकी तुलना वहां की कोलम्बिया देवी के साथ करते हैं। नाटक के अंत में मार्गरेट नोबल नामक महिला को अपनी धर्म कन्या के रूप में स्वीकार करके उन्होंने यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता' की भावना का साक्षात्कार करवाया है। यहाँ वर्णित देवीप्रसाद एवं मलवाह अस्पृश्य एवं हेय समझे जाने पर स्वामी जी ने उनका उद्धार किया एवं अस्पृश्यता निवारण का सन्देश दिया है तथा बताया है कि प्रत्येक दरिद्र एवं दीन दुःखी को नारायण मानकर सेवा करनी चाहिए और समाज में व्याप्त कुरुरितियाँ यथा-बाल विवाह, बेमेल विवाह, बहुपत्नी विवाह, विधवा केशकर्तन, बहुसंतति प्रथा आदि के वर्णन से इनके दुष्प्रभाव का वर्णन है। इसके साथ ही गुरु रामकृष्ण परमहंस के प्रति श्रद्धा के भाव की सुस्पष्ट अभिव्यक्ति अधोलिखितश्लोक में दृष्ट्य है-

वाणी मौनं भजति हि मनश्चलं पङ्कभावं  
बुद्धिर्दुस्मिन् भवति हतधीः प्रातिभं चक्षुरन्धम्।  
अप्रामाण्यं दधत इतरण्याप्तवाक्यानि यत्र  
तत् साकारं गुरुचरणयोर्ब्रह्म सचिन्तयामि॥

(श्रीविवेकानन्दविजयम्-5/2)

2. धार्मिक मूल्य- धर्म अविवेक पर अंकुश लगाने वाला चरम मूल्य है। यह जीवन को आस्था प्रदान करने वाला, मानसिक शांति एवं जीवनगत सुरुचि प्रदान करने वाला है। यथा महाभारत में-

धारणाद्धर्म इत्याहु-धर्मो धारयते प्रजाः।  
यत् स्याद् धारणसंयुक्तः स धर्म इति निश्चयः॥

(महाभारत कर्ण पर्व-69/58 )

अर्थात् 'धारण करना' ही धर्म है और धर्म प्रजा को धारण करता है। धर्म शब्द के अर्थ हैं-सत्कर्म, पुण्य, सदाचार, प्रकृति नियम आदि। महानाटक में चित्रित स्वामी विवेकानन्द प्रारंभिक जीवन काल में ईश्वर विषयक तत्त्वों एवं आस्तिकता में इतना विश्वास नहीं रखते थे किन्तु करुणामय हृदय वाले थे लेकिन कुछ समय बाद वे विभिन्न संवादों के माध्यम से गुरुदेव रामकृष्ण परमहंस के बारे में सुनते हैं और 'शीघ्रमेव द्रक्ष्यामि श्री रामकृष्ण परमहंसम्' ऐसा दृढ़ निश्चय करके उनसे मिलते हैं और उनके साथ ईश्वर विषयक शंकाओं का समाधान करते हैं एवं पूर्ण रूप से आस्तिक बन जाते हैं, बाद में गुरुदेव की प्रेरणा से भारत के कल्याण के लिए आध्यात्मिक जगत् में प्रवेश कर जाते हैं। यहां पर चित्रित विवेकानंद जी हिंदू धर्म में दीक्षित होते हुए भी सभी धर्मों का आदर करते हैं जैसा कि हम हिंदू धर्म के पुरोहित एवं मौलवी जी के साथ उनके संवाद में देखते हैं एवं विश्व धर्म सम्मेलन में अपने भाषण में यथा-

'बान्धवाः! यो हि परब्रह्मं हिन्दूनाम्, अहुरमज्जा पारसीकानां, बुद्धो बौद्धानां, जिहोवा यहूदीनां, अल्ला मुसलमानानां, यश्च स्वर्गस्थः पिता ख्रैस्तानां, स परमेश्वरो अस्य विश्वधर्मप्रतिष्ठापनकार्यस्य संसिद्धयर्थं सर्वेभ्यो भवद्भ्यः प्रभूतं सामर्थ्यं प्रददातु इति प्रार्थयामहे' (श्रीविवेकानन्दविजयम् नवमः अंकः)  
स्पष्ट है कि उनका सभी धर्मों के प्रति सम्मान का भाव था एवं अपना जन्म हिंदू

धर्म में होने पर भी गर्व था। उन्होंने हिंदू धर्म के प्रतिनिधि के रूप में धर्म सम्मेलन में विदेशियों की शंकाओं का समाधान विभिन्न उदाहरण द्वारा किया। यथा-

एकं सद विप्रा बहुधा वदन्ति।

न जायते म्रियते वा कदाचित्।

संस्कार साक्षात्करणात् पूर्वजातिज्ञानम्।

सर्वधर्मसमादरत्वं हि खलु हिन्दूधर्मस्य असाधारणं लक्षणम्।

(श्रीविवेकानन्दविजयम् नवमः अंकः)

इस प्रकार संपूर्ण संसार में सनातन संस्कृति एवं हिंदू धर्म का परचम लहराते हैं एवं अंत में अपने भाषण में विश्व कल्याण की कामना करते हैं- साहाय्यं न तु संघर्षः, स्वीकृतिर्न तिरस्कृतिः। समता शान्तिरेवास्तु, विग्रहो न कदाचन॥

(श्रीविवेकानन्दविजयम् नवमः अंकः)

स्पष्ट है कि स्वामी जी ने धार्मिक सहिष्णुता का सुंदर उदाहरण प्रस्तुत किया है एवं सम्पूर्ण जगत् को बताया है कि अपने धर्म के उद्धार एवं उत्कर्ष के लिए प्रयासरत रहना चाहिए एवं अन्य धर्म के प्रति भी समादर भाव रखना चाहिए।

3. नैतिक मूल्य- मूल्य का सीधा संबंध नीति शास्त्र या नैतिकता से है। यश देव शल्य के अनुसार 'नीति की न्यूनतम परिभाषा कर्तव्य व अकर्तव्य का क्षेत्र है।' महानाटक में चित्रित विवेकानंदजी प्रथम अंक से ही हमारे सम्मुख आदर्श रूप में विराजमान हैं। रहमान, विलियम व वामाचरण द्वारा पीड़ित शेफालिका नामक विधवा की रक्षा करना एवं 'मातृवत् पराङ्गना' की भावना को धारण करने हेतु प्रेरित करना, देवी प्रसाद एवं मलवाह जैसे हेय समझे जाने वाले पात्रों का उद्धार करके 'दुःखार्ता भ्रातरःसर्वैः' जैसी भावना रखना, प्रथम अंक में साथियों द्वारा प्रशंसा किए जाने पर एवं नाटक के अंत में विभिन्न प्रकार के स्वागतों से खिन्न होकर कहते हैं- 'बान्धवाः! किं नाम मया अलौकिकं कृतं, येन ईदृशोकाण्डजयोद्धोषः सर्वैः समारब्धः?'

(श्रीविवेकानन्दविजयम् प्रथमः अङ्कः)

'सखे राखाल! तारक! गोपाल! योगीन्द्र! न तथा परिश्रान्तोऽस्मि विश्व पर्यटनेन व्याख्यानसत्रेण वा, यथाअभिन्दनहारणां भारेण, मिथ्यास्तुति श्रवणेन च।' (श्रीविवेकानन्दविजयम् दशमः अङ्कः)

अतः स्पष्ट है कि महान लोग स्वयं की प्रशंसा नहीं करते हैं और न सुनना पसंद करते हैं। इसके साथ ही अभिमान से रहित भी होते हैं। राज दरबार में नृतकी के द्वारा नृत्य किए जाने पर स्वामी जी नृत्यशाला में नहीं पहुंचते हैं एवं कहते हैं- 'अनुचितं सन्यासिना गीतनृत्यादि रसास्वादनम्।'

(श्रीविवेकानन्दविजयम् षष्ठः अंकः)

इसके साथ ही महानाटक के द्वितीय अंक में 'करुणा' नामक नैतिक मूल्य की भी अभिव्यक्ति हुई है जब नरेन्द्र अंधे एवं लंगड़े देवीप्रसाद को उठाकर अपने वस्त्र को फाड़कर उसके मस्तक पर हुए घाव पर पट्टी बांधते हैं।

4. आध्यात्मिक मूल्य- आध्यात्मिक मूल्य से तात्पर्य मानव के उन अंतरंग अभिवृत्तियों से है जो मन, आत्मा और परमात्मा से संबंधित होती हैं। भारतीय संस्कृति में मानव के लिए पुरुषार्थचतुष्टय( धर्म- अर्थ- काम -मोक्ष) में से मोक्ष को चरम मूल्य के रूप में स्वीकार किया गया है। मोक्ष का आशय 'जीवन के सुख और दुःख से मुक्ति मिलने से है' महानाटक में चित्रित विवेकानंदजी गुरुदेव रामकृष्ण परमहंस का सानिध्य प्राप्त करने के उपरांत उनके अन्तेवासी बन जाते हैं और आध्यात्मिक जगत् में प्रवेश कर जाते हैं।

गुरुदेव के स्वर्गलोक गमन पश्चात् उनकी आज्ञा पालन हेतु भारतवर्ष का भ्रमण करते हैं। पांचवें अंक में ध्यान अवस्था में गुरुदेव की विभिन्न श्लोकों द्वारा आराधना करते हैं यथा-

जडवादजडीभूते लोकेऽस्मिन् येन दीपितम्।

दिव्याध्यात्मिकं तेजो रामकृष्णं स्मरामि तम्।। (श्रीविवेकानन्दविजयम् 5/1) अर्थात् जड़वाद(भौतिकतावाद) से जड़ीभूत (मूढ़) हुए इस संसार में जिसने दिव्य आध्यात्मिक तेज को प्रदीप्त किया, उस गुरुदेव रामकृष्ण को स्मरण कर रहा हूँ और चार्वाक आदि जड़वादी दर्शनों के बीच संपूर्ण विश्व में आध्यात्मिकता का दीपक प्रज्वलित करते हैं। 'धर्म विजय' नामक नवम अंक में विश्व धर्म सम्मेलन में हिंदू धर्म के प्रतिनिधि के रूप में अपने भाषण से संपूर्ण जगत में आध्यात्मिकता का संचार करते हैं, इसके कुछ उद्धरण यहां प्रस्तुत है- 'रुचीनां वैचित्यादृजुकुटिलनानापथजुषाम्। देहान्तः स्थितोऽपि देहाद्यतीतः। सच्चिदानन्दमयः स्वयम्भूः आत्मा अहमस्मि। मोक्षः निःश्रेयसम् अमृतत्वम्। अहेतुक- भक्तियोगेन निष्कामकर्मयोगेन वा विशुद्धसत्त्वो जीवः भगवत्कृपापात्रं भवति।' (श्रीविवेकानन्दविजयम् नवमः अंकः)

अर्थात् अकारण भक्तियोग से अथवा निष्काम कर्मयोग से, विशुद्ध सत्त्वगुण वाला जीव ईश्वर की कृपा का पात्र होता है। इस प्रकार से स्पष्ट होता है कि इस महा नाटक में आध्यात्मिक मूल्यों का भी उत्कृष्टता के साथ वर्णन है।

5. सांस्कृतिक मूल्य-संस्कृति का क्षेत्र अत्यंत विस्तृत होता है उसमें मानव के बाह्य, आंतरिक, नैतिक, बौद्धिक, सामूहिक तथा सामाजिक जीवन का समावेश होता है। सांस्कृतिक मूल्य हमारे वे आदर्श होते हैं जिनके आधार पर हम जीते हैं, यह मूल्य हमारे समाज परिवार एवं देश को एकजुट रखते हैं।

इस नाटक में हम देखते हैं कि हमारी संस्कृति में कल्याण के लिए व्रत, उपवास तथा पारणा आदि किए जाते रहे हैं जैसा कि इसके प्रथम अंक में नटी अपने पति के कल्याण के लिए विभिन्न अवसरों पर भिन्न-भिन्न व्रत, उपवास आदि करती है। माता भी अपनी संतानों को बचपन से ही अच्छे संस्कारों से संस्कारित करती है जैसा कि विवेकानंद कहते हैं- 'निखिला अपि महिला मातृवद् माननीया इति बाल्याद् एव जनन्या शिक्षितोऽस्मि।' (श्रीविवेकानन्दविजयम् प्रथमः अङ्कः)

दीन दुःखी की रक्षा करना, गुरु भक्ति एवं आज्ञा पालन, बड़ों का आदर करना, अवतारवाद, अपने धर्म से प्रेम एवं अन्य धर्मों का आदर यहां की संस्कृति का अंग हैं। नाटक में वर्णित यहां की सात नगरियां भी मोक्षदायिनी हैं, यहां की संस्कृति में सावित्री जैसी पतिव्रता नारियां हैं जिन्होंने यमराज को भी जीत लिया था तथा भगवान भी बैकुण्ठ छोड़कर यहाँ भक्तों की कुटियाँ में निवास करते हैं। यथा- 'यमराजविजेत्री सावित्री पतिसहचरी दिव्यवपुषा।' (श्रीविवेकानन्दविजयम् 7/32) 'स हित्वा वैकुण्ठं वसति भगवान् विष्णुरनिशम्।' (श्रीविवेकानन्दविजयम् 7/33)

गुरु की आज्ञा पालन हेतु विंध्याचल पर्वत आज भी झुका हुआ है-

'स विन्ध्याद्रिर्नम्रः स्वगुरुचरणे त्वत्कटिगतः।'

(श्रीविवेकानन्दविजयम् 7/48)

भारतीय अपनी मातृभूमि से बहुत प्रेम करते हैं और उसके अमर इतिहास को कभी नहीं भूलते हैं। स्वामी विवेकानन्द श्रीपादशिला नामक सप्तम अंक में भारत माता की वंदना करते हैं, पुनर्जन्म के सिद्धांत में विश्वास करते हैं तथा आत्मा को नित्य एवं देह को अनित्य मानते हैं। यहां के निवासी नर को नारायण मानकर सेवा करते हैं। यथा- 'यत्र जीवः शिव इति, नरो नारायण इति।' (श्रीविवेकानन्दविजयम् नवमः अंकः)

स्पष्ट है कि महानाटक में भारतीय संस्कृति के उत्कृष्ट मूल्यों का सुंदर रूप से चित्रण किया गया है।

उपसंहार:- इस महानाटक में सभी जीवन उपयोगी मूल्यों को श्रेष्ठतम रूप में वर्णित किया है। महानाटक का मुख्य सन्देश भी यह है कि दृढ़ निश्चय करने वाला व्यक्ति जीवन में कभी भी असफल नहीं होता है। नाम या गांव से बढ़कर उत्तम स्थान मानव के व्यक्तित्व का होता है और जिस पर गुरुदेव कि कृपा होती है ऐसे महान व्यक्ति के लिए एक स्थान निवास नहीं होता है अपितु संपूर्ण विश्व उसका निवास स्थान होता है। यथा-

गुरुदेवकृपाच्छत्रं, यस्य मूर्ध्नि विराजते।

स्वग्रामोभुवनं तस्य, स्वदेशो भुवनत्रयम्।।

(श्रीविवेकानन्दविजयम्- 8/1)

इसके साथ ही सप्तम अंक में स्वामी विवेकानन्द भारत भूमि की वंदना करते हुए अनेकानेक जीवनमूल्यों का उल्लेख करते हैं। यथा-

तवौदार्यं धुर्यं, शिविदधिचि कर्णादिचरिते

हरिश्चन्द्रे धर्मं, दशरथसुते सत्यवचनम्।

ध्रुवं प्रह्लादे वा भगवति मनस्वित्वमतुलम्

अखण्डं भ्राजन्ते ह्यगणितगुणा एवमिव ते।।

(श्रीविवेकानन्दविजयम् 7/28)

अर्थात् हे भगवती (भारती)! राजा शिवि, महर्षि दधीचि, (दानवीर) कर्ण आदि के चरित्रों में तुम्हारी अग्रणी उदारता, हरिश्चन्द्र में धर्म तथा दशरथपुत्र में सत्यवचन, ध्रुव में अथवा प्रह्लाद में अपार मनस्विता, निश्चय ही इस प्रकार के तुम्हारे अनगिनत गुण अखण्ड रूप से जगमगा रहे हैं।

सन्दर्भ सूची:-

1. दुबलिश, डॉ अरुण, साठोत्तर हिंदी तथा बांग्ला काव्य में मूल्य बोध, लोकवाणी संस्थान, दिल्ली 2010
2. धनंजय, दशरूपक, डॉ. राम जी उपाध्याय, भारतीय विद्या संस्थान, वाराणसी 2000
3. डॉ. मूलचंद, श्रीविवेकानन्दविजयम् का नाट्य शास्त्रीय अध्ययन, हंसा प्रकाशन, जयपुर 2016
4. सिंह, अमित रानी, रामचरितमानस में जीवन मूल्य, तिरुमल तिरुपति देवस्थानम्, तिरुपति 1962
5. सिंहमार, बलराज, मानव मूल्य और उपन्यास, कामा पब्लिशर्स, दिल्ली 2002
6. शर्मा, गिरिधर गोपाल, मनुस्मृति, चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान, दिल्ली 2002
7. शास्त्री, स्वामी हरिदास, श्रीमद्भगवद्गीता, दिशा भारती, वाराणसी 2017
8. वर्णेकर, डॉ. श्रीधर भास्कर, श्रीविवेकानन्दविजयम्, विवेकानंद रॉक मेमोरियल समिति, चेन्नई (तमिलनाडु)
9. वर्णेकर, डॉ. श्रीधर भास्कर, श्रीविवेकानन्दविजयम्, आचार्य भवानीशंकर शर्मा व विक्रमजीत, हंसा प्रकाशन, जयपुर 2017

## रोगविचारस्य प्रसङ्गे ग्रहाणां परिचयः

गिरीश राजौरिया

शोधार्थी, महर्षि पाणिनि संस्कृत एवं वैदिक विश्वविद्यालय, उज्जैन, मप्र.

ज्योतिषशास्त्रे रोगाणां विचारणये योगाः उक्ताः सन्ति, तेषु त्रितत्त्व?नि प्रधानानिसन्ति-1-ग्रहा,2-राशयः एवं 3- भावाः। अतो ज्योतिषशास्त्रस्य दृष्टिणा रोगाणां विस्तारेण विवेचनस्य पूर्वोक्तानां ग्रहराशिभावानां विचार आवश्यकमस्ति।

ग्रहाः

ज्योतिषशास्त्रे शुभाशुभफलसूचकाः नवग्रहाः मन्यन्ते, यथा 1-सूर्यः, 2-चन्द्रः, 3-भौमः, 4-बुधः, 5-गुरुः, 6-शुक्रः, 7-शनेश्वरः, 8-राहुः एवं 9-केतुश्च। इत्तेषु ग्रहेषु राहुकेतुएतौ उभौ छायाग्रहोवर्तते। अन्येषां ग्रहाणां सदृशं सौरमण्डले अनयोः ज्योतिषिण्डं (प्रकाशमानं बिम्बरूपं) नैव दृश्यते। शेषाः सप्तग्रहाणां ज्योतिषिण्डानि सौरमण्डले स्वस्वकक्षासु भ्रमन्तो दृश्यन्ते। यद्यपि ज्योतिषशास्त्रस्य सिद्धान्तग्रन्थेषु राहुकेतु ग्रहश्रेण्यां नैव गण्यते तथापि फलितशास्त्रे एतेषां महत्त्वं स्वीकार्य एतान्सर्वैः ग्रहै सह सम्मिलितौ कृतवन्तौ।

आधुनिककाले पाश्चात्यज्योतिर्विदः सौरमण्डले हर्षलनेपच्यूनप्लेटोनामकत्रयाणां ग्रहाणाम् अन्वेषणं कृतमस्ति। पाश्चात्यज्योतिषग्रन्थेषु एतेषां ग्रहाणां प्रभावस्य उल्लेखोऽपि क्रियते, परन्तु अधुना एतेषां प्रभावस्य सम्यग्विश्लेषणं नैव अभवत्। तथा भारतीयज्योतिषग्रन्थेषु उक्तनवीनाविष्कृतग्रहाणां प्रभावस्यापि उल्लेखो नैव प्रवर्तते।

को ग्रहः कस्य तत्त्वस्य प्रतिनिधित्वं करोति? तस्य प्रभावेन जातकस्य आकारः, प्रकारः तथा वर्णः कथं भविष्यति? स शरीरस्य केषाम्-केषाम् अङ्गानि प्रभावितः करोति? तथा च स केषाम्-केषा रोगानाम् उत्पत्तिः कर्तुं शक्नोति? एतेषां विषयाणां विचारो ज्योतिषग्रन्थेषु विस्तारपूर्वकं कृतमस्ति, यद् इत्थं प्रकारेण प्रवर्तते-

सूर्यः-

अयम् अग्नितत्त्वात्मकं तथा मध्यमाकारयुक्तः शुष्कग्रहोवर्तते। अयं मनुष्याणां (पुरुषाणां दक्षिणे स्त्रियश्च वामे) नेत्रावस्थिसिरहृदयप्राणशक्तिमेदा-रक्तपितानि प्रभावितः करोति। अस्य बलत्वेन अस्थितयः सबला भवन्ति तथा शरीरः स्वस्थो भवति। तथा च अस्य निर्बल-अशुभत्वं-रोगकारकत्वक्षय-पित्त-प्रकोप-नेत्ररोग-अस्थिरोग-शिरोरोग-हृदयरोग-उष्णवात-ज्वर-मूर्च्छा-रक्तस्राव-चर्मरोग-मृगी-शूलादिकं भवति।

चन्द्रमा-

अयं जलतत्त्वं तथा दीर्घाकारयुक्तजलीयो ग्रहो भवति। अयं व्यक्तेः (पुरुषस्य वामे, स्त्रियो दक्षिणे) नेत्रे, स्तने, वक्षःस्थलं, फुस्फुसं, मनः, मस्तिष्कम्, उदरं, मूत्राशयं, रक्तम्, रसम्, धातुम्, शारीरिकपुष्टिकफादिकं प्रभावितः करोति। अस्य बलत्वे शरीरे रक्तसञ्चारः सम्यग्भवति, आरोग्यवृद्धिर्भवति तथा मनोबलम् उन्नतं भवति। अस्य निर्बलत्वे अशुभत्वे

रोगकारकत्वे वा सति कफरोगः, मूत्रविकारः, जलोदररोगः, मुखरोगः, नासिकारोगः, पाण्डुरोगः, क्षयरोगः, मन्दाग्निः, अतिसारः, स्त्रीसंसर्गजन्यरोगाः, प्रदरः, अपस्मारः, वातश्लेष्मा एवं मानसिकरोगा भवन्ति।

भौमः-

अयम् अग्नितत्त्ववान् तथा सूक्ष्माकारयुक्तः शुष्कग्रहोवर्तते। अयं शरीरे कपोलं, कर्णौ, स्नायुम्, जननेन्द्रियान्, मज्जाम्, पुट्टानां पुष्टताम्, शारीरिकशक्तिम्, दाहं, शोथं, धैर्यम् एवं पित्तं प्रभावितः करोति। अस्य बलत्वेन व्यक्तेः शरीरेऽस्थयः अस्थयः सबला भवन्ति, प्रतिरोधशक्तेः वर्द्धनं भवति तथा साहसधैर्ययोः वृद्धिर्भवति। अयं निर्बलत्वेन, अशुभत्वेन अथवा रोगकारकग्रहेण सह युतिना सह भवेत् तदा रक्तविकारः, रक्तचापः, कण्डुकम्, सूजनं, घातः, रक्तस्रावं, कुष्ठम्, ज्वरः, वातपित्तविकारः, महामारीजन्यरोगः, दुर्घटनाजन्यरोगाः, गुप्तरोगाः, अग्निदाहः, मुष्कवृद्धिः तथा ते जनाः यस्मिन् शल्यक्रियाः आवश्यकी भवन्ति।

बुधः-

अयं पृथ्वीतत्त्वयुक्तः तथा सामान्याकारयुतो जलीयग्रहोवर्तते। शरीरे अयं जीह्वा, वाणी, स्वरचक्रम्, श्वसननली, अग्रिममस्तिष्कः, फुफ्फुसम्, मज्जातन्तुः, केशम्, मुखम्, हस्तौ एवं त्रिधात्वादिकं प्रभावितः करोति। अस्य बलत्वे सति बालकस्य मस्तिष्कपूर्णं विकसितं भवति, तस्य व्यक्तित्वम् आकर्षकं तथा प्रतिपादनशैली मोहकपूर्णा भवति। अस्य निर्बलत्वे अशुभत्वे रोगकारकत्वे वा सति मूर्च्छा, हिस्टीरिया, मानसिकरोगाः, निस्तब्धता, न्यूमेनिया, विषमज्वरः, त्रिदोषज्वरः, टाइफाइड, पाण्डुरोगः, सङ्ग्रहणी, शूलम्, मन्दाग्निः, गण्डविकारः, वाणीविकारः, उदरविकारः, कण्ठरोगः, नासिकारोग एवं स्नायुसम्बन्धीरोगा भवन्ति।

गुरुः-

अयम् आकाशतत्त्वयुतः (मतान्तरेण वायुतत्त्वयुतः) तथा मध्यमाकारयुतो (मतान्तरेण ह्रस्वाकारयुतो) जलीयो ग्रहो भवति। शरीरे अयं चर्बीवीर्योदरयुक्त-रक्तधमनीत्रिदोषकफादिकं प्रभावितः करोति। अस्य बलत्वे सति शरीरः पुष्टो भवति, विचारशक्तिः सम्यग्भवतीति अनेन मनसि शान्तिः एवं मनोयोगो भवति। अस्य निर्बलत्वे अशुभत्वे रोगकारकत्वे वा सति उदरविकारः, मज्जादोषः, यकृतरोगाः, पाण्डुरोगः, स्थूलता, दन्तरोगाः, वायुविकारः, मूर्च्छा, मस्तिष्कविकारः, ज्वरः, कर्णरोगाः, उच्चस्थानात्पतनम् एवं मानसिकरोगाः उत्पन्ना भवन्ति।

शुक्रः-

अयं जलतत्त्वं तथा मध्यमाकारयुतो (मतान्तरेण ह्रस्वाकारयुतो) जलीयो ग्रहोवर्तते। शरीरे अयं जननेन्द्रियाः, शुक्राणुः,

नेत्रम्, कपोलः, चिबुकम्, स्वरः, रसाः, गर्भाशय एवं संवेगशक्तिः प्रभावितः करोति। अस्य बलत्वे सति शरीरः सुविकसितो भवति, मनुष्यस्य कामशक्तिः बलवान् भवति तथा वीर्यः पुष्टीभवति। अस्य निर्बलत्वे अशुभत्वे रोगकारकत्वे वा सति मूत्रविकारः, वीर्यविकारः, गुप्तरोगः, स्त्रीसंसर्गजन्यरोगाः, मादकद्रव्यानां सेवनेन उत्पन्नविकाराः, विषजन्यरोगाः, उपदंशम्, प्रमेहः, मधुमेहः, प्रदरः, कफवायुविकारः एवं पाण्डुरोगा भवन्ति।

**शनैश्चरः-**

अयं वायुतत्त्वं तथा दीर्घाकारयुतः शुष्कग्रहो भवति। अयं शरीरे अस्थियोगाः, पादौ, जानुद्वयम्, वातसंस्थानम्, स्नायुसंस्थानम्, मज्जा तथा वातादिकं प्रभावितं करोति। अस्य बलत्वे सति स्नायुमण्डलं पुष्टं तथा शरीरः सुदृढीभवति। अस्य निर्बलत्वे अशुभत्वे रोगकारकत्वे वा सति वायुविकारः, स्नायुविकारः, अस्थियोगेषु पीडा, वातरोगः, सन्धिवातः, पक्षाघातः, मूढत्वम्, दन्तपीडा, अपचनम्, कासः, श्वासः, अङ्गभङ्गं तथा असन्तोषः अथवा निराशाजन्यमानसिकरोगा भवन्ति। अयम् अपराधवृत्तितः आत्महत्यां यावत् सर्वेषु उपद्रव्येषु कर्तुं समर्थो मन्यते।

**राहुः-**

अयं वायुतत्त्वात्मकं तथा मध्यमाकारयुतो ग्रहो वर्तते। अयं शरीरे मस्तिष्कः, रक्तः, त्वक् एवं वातादिकं प्रभावितः करोति। अस्य बलत्वे सति शरीरे सजगतायाः स्वस्थतायाः एवं चैतन्यतायाः विकासो भवति। तथा अस्य निर्बलत्वे अशुभत्वे रोगकारकत्वे वा सति निर्बल शीतला, कृमिजन्यरोगाः, मृगीरोगः, सर्पदंशम्, पशुभिः घातः, कुष्ठरोग एवं विषव्रणादिकम् असाध्यरोगा उपजायन्ते।

**केतुः-**

अयं वायुतत्त्वात्मकं तथा सूक्ष्माकारयुतो ग्रहो भवति। अयं शरीरे वातरोगः, रक्तविकारः तथा चर्मरोगो विशेषरूपेण प्रभावितः करोति। अस्य बलत्वे सति शरीरे श्रमशक्तिः, सङ्घर्षशक्तिः, प्रतिरोधशक्तिः एवं सक्रियतैव विद्यन्ते। तथा अस्य निर्बलत्वे अशुभत्वे रोगकारकत्वे वा सति शरीरे आलस्यम्, अकर्मण्यता, शरीरेघातः, चर्मरोगः, जटिलरोगः एवं एलर्जीत्यादिकं रोगा भवन्ति।

**संदर्भ सूची :-**

1. फलदीपिका न्मोतीलाल बनारसी दास, दिल्ली, सन् 1975, अ014 श्लो02-9।
2. जायावत् परिजातः पूर्वोद्धृत, अ0 2 श्लो 75-81।
3. गदावलीः आचार्य चक्रधर जोशी, श्री लक्ष्मीधर विद्या मंदिर, देवप्रयाग, सन् 1958, अ0 1 श्लो 6-14

## ‘अलख आजादी की’ नाटक में राष्ट्रीय चेतना

प्रा. रामहरि काकडे

सहायक प्राध्यापक, हिन्दी विभाग, महिला महाविद्यालय, गेवराई, जिला-बीड, महाराष्ट्र

राष्ट्रीय चेतना की संकल्पना :- चेतना का अर्थ है - सजगता। किसी राष्ट्र में बसने वाले जन मानस कि उस आंतरिक भावना को राष्ट्रीय चेतना कहते हैं, जिसमें राष्ट्र के प्रति एक विशेष प्रकार की एकात्मकता होती है। चेतना का विकास सामाजिक वातावरण के संपर्क से होता है। राष्ट्रीय चेतना से व्यापक अर्थ का बोध होता है जिसमें राष्ट्र की अस्मिता की रक्षा, राष्ट्र का गौरव-गान, राष्ट्र का परिवेश, राष्ट्र का उन्मेष और राष्ट्र के प्रति उस देश के नागरिकों की समग्र सोच और अनुभूति समाहित होती है। राष्ट्रीय चेतना के विषय में डॉ. बी. आर. अम्बेडकर के विचार हैं, 'श्रेणीगत चेतना की एक अनुभूति है, जो एक और दो उन व्यक्तियों को जिनमें यह इतनी प्रगाढ़ होती है कि आर्थिक संघर्ष अथवा समाजगत उच्च-नीच के कारण उत्पन्न होने वाले भेदभावों को दबाकर उन्हें एक सूत्र में बांधे रखती है और दूसरी और उनको ऐसे लोगों से पृथक करती है जो उसे श्रेणी के नहीं है।'

भारत में राष्ट्रीय चेतना का विकास :- राष्ट्रीय चेतना शब्द से ही समझ में आता है कि, यह राष्ट्र से संबंधित संकल्पना है, और राष्ट्र की संकल्पना आधुनिक युग से संबंधित है। यद्यपि प्राचीन एवं मध्यकालीन भारत के इतिहास में राष्ट्रीयता की भावना दिखाई देती है। प्राचीन एवं मध्यकालीन भारत में भारतीय भूभाग पर अलग-अलग राजाओं का राज्य था और वे अपने एक राज्य के प्रति ही जिम्मेदार थे। एक राष्ट्र के रूप में भारत का निर्माण आधुनिक युग में ही हुआ है। अंग्रेजों ने यहां के एक-एक राजाओं को पराजित कर उसकी भू-भाग पर अपना अंमल स्थापित किया। इस प्रकार संपूर्ण भारत पर प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से अंग्रेजों का अंमल स्थापित हुआ। भारत में अंग्रेजी राजव्यवस्था एवं शिक्षा पद्धति के कारण एक और भारतीय लोग पाश्चात्य शिक्षा ग्रहण करने लगे वहीं दूसरी ओर मुद्रण व्यवस्था, यातायात साधनों में बढ़ोत्तरी, देश में समान कानून एवं न्याय व्यवस्था के कारण अंग्रेजों की लूटपाट नीति से भी परिचित हो गये। भारत के बुद्धिजीवियों द्वारा भारतीयों को अंग्रेजों की लूट नीति का परिचय कराने पर समग्र भारत में भारतीयों के प्रति राष्ट्रीय चेतना का विकास हुआ। फलस्वरूप संपूर्ण भारत में राष्ट्रीय चेतना का व्यापक प्रचार-प्रसार होकर अंग्रेजी सत्ता के विरोध में आंदोलन प्रारंभ हुए। 'अंगरेजों ने समूचे देश में एक शासन स्थापित किया, जिससे पूरे देश के लोग एक राजा की प्रजा हुए और पूरे देश को समान यातना का अनुभव हुआ। अपने-अपने में बैठे हुए लोगों को यह प्रतीत हुआ कि वह सब मिलकर एक है, वे चाहे किसी जाति या धर्म के हो, अंगरेजों के गुलाम हैं। और फिर जब अंगरेजी शासन के विरुद्ध मुक्ति का अभियान आरंभ हुआ तो मुक्ति की चेतना किसी धर्म या प्रदेश में सीमित न रहकर पूरे देश में व्याप्त हुई।'<sup>2</sup>

हिंदी नाटक साहित्य में राष्ट्रीय चेतना :- आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने अपनी पुस्तक 'साहित्य का इतिहास' में कहा है कि 'प्रत्येक देश का साहित्य वहाँ की जनता की चित्तवृत्ति का संचित प्रतिबिंब होता है।' हिंदी साहित्य में भी जनता की इस चित्तवृत्ति का प्रतिबिंब चित्रित होना स्वाभाविक है। साहित्य की अन्य विधाओं के समान नाटक विधा में भी राष्ट्रीय चेतना से युक्त नाटकों का सृजन होने लगा।

भारतीय स्वतंत्रता संग्राम से ही अंग्रेजों की गुलामी के कारण साहित्य में राष्ट्रीय चेतना का चित्रण दिखाई देता है। भारतेंदु के 'नीलदेवी', 'भारत दुर्दशा', 'अंधेर नगरी', जयशंकर प्रसाद के 'स्कंदगुप्त', 'चंद्रगुप्त', 'धृवस्वामिनी' आदि नाटकों में ऐतिहासिक घटनाओं के आधार पर राष्ट्रीय चेतना का चित्रण किया है तो किसी में काल्पनिक घटनाओं एवं पात्रों को आधार बनाकर तत्कालीन समय आवश्यक शौर्य, साहस एवं त्याग की भावना का चित्रण किया है। ज्ञानदेव अग्निहोत्री का 'नेफा की एक शाम' में भारत - चीन युद्ध के प्रसंग के आधार पर राष्ट्रीय चेतना का चित्रण किया है। 'वतन की आबरू' नाटक में भारत-पाकिस्तान युद्ध को आधार बनाकर राष्ट्रीय चेतना का चित्रण किया गया है। उनका एक और नाटक 'माटी जागी रे' में भी राष्ट्रीय चेतना का चित्रण किया है। शिवप्रसाद सिंह का नाटक 'घाटियां गूंजती हैं' भारत-चीन युद्ध को आधार बनाकर लिखा गया नाटक है। सुशील कुमार सिंह का 'अलख आजादी की', प्रताप सहगल का 'रंग बसंती', असगर वजाहत का 'गोडसे एट गांधी.कॉम' आदि नाटकों में ऐतिहासिक पात्रों एवं घटनाओं को आधार बनाकर राष्ट्रीय चेतना का चित्रण किया गया है। डॉ. रामकुमार वर्मा का नाटक 'जय बांगला', लक्ष्मीकांत का नाटक 'सीमांत के बादल' आदि नाटकों का मुख्य आधार राष्ट्रीय चेतना ही है।

अलख आजादी की नाटक में राष्ट्रीय चेतना :- नाटककार को प्रस्तुत नाटक लेखन की प्रेरणा श्री सुंदरलाल की पुस्तक 'भारत में अंग्रेजी राज' के पहले भाग को पढ़कर मिली। सत्ताईस दृश्यों में विभाजित इस नाटक में 17वीं 18 वीं सदी के ब्रिटिश भारत की ऐतिहासिक घटनाओं के आधार पर राष्ट्रीय चेतना का चित्रण किया है। नाटक का प्रारंभ ही विदेशियों के भारत आगमन से होता है। जो ब्रिटिश 'ईस्ट इंडिया कंपनी' के माध्यम से व्यापार करने के बहाने से भारत में आए थे।

'विदेशी 1 : (मुस्कुराकर) हमको नहीं पहचानता? वी आर मल्टीनेशनल कंपनीज। विदेशी 2 : इंडिया में बिजनेस करने आया है।

विदेशी 3 : अच्छा स्कोप है इधर।

विदेशी 4 : लखनऊ का रेवडी, आगरा का पेठा, बनारस का बर्फी, बीकानेर का भुजिया-पापड़... साब बनाएगा।'<sup>3</sup>

इस प्रकार अंग्रेज, डच, पुर्तगाली व्यापार बहाने भारत में आए। पुर्तगाल का वास्कोडिगामा 22 मई 1498 को कालीकट में पहुंचा और उसने वहां के राजा जमोरिन से राज्य में निवास और व्यापार की इजाजत ली। सन 1608 में पहला अंग्रेज जहाज सूत के बंदरगाह पर पहुंचा। तत्कालीन मुगल सम्राट जहांगीर ने अंग्रेजों को व्यापार करने, कोठियां बनाने और मुगल दरबार में 'एलची' रखने की इजाजत दी। भारत में व्यापार करने की होल में अंग्रेजों ने डच और पुर्तगाली पर विजय पाकर सन 1600 में ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी की स्थापना की जिसका उद्देश्य था भारत से अधिक से अधिक माल कम कीमत पर खरीद कर यूरोपीय राष्ट्रों में अधिक कीमत पर बेचकर मुनाफा कमाना। इस उद्देश्य की सफलता के

लिए उन्होंने बाजार में मनमानी करना शुरू की तब स्थानीय लोगों द्वारा बादशाह के पास शिकायत करने पर अंग्रेजों ने औरंगजेब के कदमों में गिरकर माफी मांगी। उसी अंग्रेजों ने औरंगजेब की मृत्यु के पश्चात सन 1757 ई. में बंगाल के नवाब सिराजुद्दौला का प्लासी के युद्ध में पराजित कर भारत में अंग्रेज साम्राज्य की नींव मजबूत कर दी। अंग्रेजों की शोषण एवं दमनकारी नीतियों के कारण सन 1857 का प्रथम स्वतंत्रता संग्राम प्रारंभ हुआ। यह प्रयास भले ही असफल हुआ है किंतु इसके कारण संपूर्ण देश में एकता की भावना निर्माण हुई। 'लेखिका- सन 1857 का स्वाधीनता संग्राम असफल हो गया तो इसका कारण यह था कि अभी भारत में राष्ट्रियता की भावना का पूरी तरह से विकास नहीं हुआ था। इसलिए बहुत से राजाओं, नवाबों तथा रियासतों ने क्रांतिकारियों का साथ नहीं दिया।... सिंधिया और अन्य मराठे राव राजे... कश्मीर के राजा गुलाब सिंह... पंजाब की रियासतें... नेपाल के राणा जंग बहादुर... हैदराबाद का निजाम आदि अनेक राजे-रजवाड़े अंग्रेजों के ही सहायक रहे।... दक्षिण भारत लगभग शांत रहा।'<sup>4</sup>

प्रथम स्वतंत्रता संग्राम की असफलताओं के कारण भारतीयों को अपनी पूर्ण नीतियों पर पुनर्विचार करना आवश्यक था। 1857 का स्वतंत्रता संग्राम असफल होने के विभिन्न कारणों में से एक महत्वपूर्ण कारण यह था कि, भारतीयों में एकता का अभाव था। जब कोई देशी रियासत अंग्रेजों के खिलाफ युद्ध करती तब अन्य रियासतें अंग्रेजों का ही साथ देती या तटस्थ रहती थी। इस कारण अंग्रेजों ने एक-एक करके सभी देशी राजाओं को पराजित किया। सन 1857 के स्वतंत्रता संग्राम के असफलता के बाद भारतीयों द्वारा आत्ममंथन प्रारंभ हुआ। जिसमें भारतीय स्वतंत्रता के लिए लड़ने के लिए तीन पद्धतियों का सहारा लिया गया। जिसमें पहले समूह के द्वारा समाज-सुधार का मार्ग अपनाकर भारतीय समाज में प्रबोधन का मार्ग अपनाया गया। इसके अंतर्गत लेखन, भाषण कर भारतीयों को अंग्रेज सरकार की शोषणकारी नीतियों की जानकारी देकर अंग्रेज सरकार के विरोध में संगठित करने का कार्य किया गया। 'युवक 1: आप लोग अपने ही जैसे लोग तैयार करिए... गांव-गांव, शहर-शहर जाइए... संगठन खड़ा करिए... जैसे कि कलकत्ता में हम लोगों की इंडियन एसोसिएशन या फिर पूना की सार्वजनिक सभा... (उठ खड़ा होता है) अच्छे मित्रों... तो फिर वंदे मातरम्। सभी : (खड़े होकर) वंदे मातरम्।'<sup>5</sup>

दूसरे समूह के अंतर्गत 'इंडियन नेशनल कांग्रेस' का कार्य शुरू किया गया। जो अंग्रेजों के साथ रहकर व्यवस्था में परिवर्तन करना और सरकारी पदों पर अधिक से अधिक भारतीयों को नियुक्त करना। तीसरे समूह के रूप में सशस्त्र आंदोलन करने वाले क्रांतिकारी आंदोलक आते हैं। जो यह मानते थे कि, यह मुट्ठी भर अंग्रेज भारतीयों के डर और आपसी फूट के आधार पर राज करते आए हैं। अगर हम हाथ में शस्त्र ले तो अंग्रेजों को तुरंत देश छोड़कर भागना पड़ेगा। इसलिए भगतसिंह, सुखदेव और राजगुरु जैसे क्रांतिकारियों ने हाथों शस्त्र लिए। जब साइमन कमीशन के विरोध में नारे लगाते हुए लाला लाजपत राय पर स्कॉट द्वारा लाठीचार्ज किया जाता है। इसमें लाला लाजपतराय की मृत्यु होती है। इस मृत्यु का बदला लेने के लिए क्रांतिकारियों द्वारा किए गए हमले में सैंडर्स की हत्या की जाती है। देशवासियों का ध्यान आकर्षित करने और अंग्रेजों दमन नीति को उजागर करने के लिए भगत सिंह एवं उनके साथी केंद्रीय असेंबली में बड़ फेंकते हैं। परिणामस्वरूप देशभर में क्रांतिकारियों की गिरफ्तारियां होती हैं। सन 1915 ई. में महात्मा गांधी दक्षिण अफ्रीका से भारत आए। भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में महात्मा गांधी का आगमन एक महत्वपूर्ण घटना थी। उन्होंने दक्षिण अफ्रीका में प्रयोग किया अहिंसा और सत्याग्रह नामक शस्त्र भारत को दिया। उन्होंने असहयोग आन्दोलन कर अंग्रेज सत्ता अंग्रेज सत्ता की जड़ें हिला दी। नमक सत्याग्रह, 1942 का भारत छोड़ो आंदोलन आदि आंदोलन कर अंग्रेजी सत्ता के विरोध में भारतीयों में जागरूकता निर्माण करने का कार्य किया। अशिक्षित, निहत्थे भारतीयों को अहिंसा एवं सत्याग्रह नामक शस्त्र दिये। सन 1942 का भारत छोड़ो आंदोलन से

भारतीय स्वतंत्रता अधिक नजदीक आ गई। अंग्रेज द्वितीय विश्व युद्ध में मग्न थी तो भारत वर्ष स्वतंत्रता के लिए संघर्षरत था। 'महायुद्ध की परिस्थितियों से लाभ उठाने के उद्देश्य से सुभाषचंद्र बोस जेल से भाग निकले और वेश बदलकर अफगानिस्तान के रास्ते जर्मनी और फिर जापान चले गए। उन्होंने आजाद हिंद फौज का गठन किया।... अंतरिम सरकार बनाई। अन्य देशों से भी सहायता ली और देश को आजाद कराने के प्रयत्नों में जुट गए।'<sup>6</sup> यद्यपि द्वितीय विश्व युद्ध मित्र राष्ट्र जीत गए। लेकिन बदलते परिवेश के कारण अंग्रेज पहचान गए कि, अब भारत पर अधिक समय तक राज नहीं किया जा सकता। इसलिए 22 मार्च सन् 1947 को सत्ता का हस्तांतरण करने के लिए लार्ड माउंटबेटन भारत आए और 15 अगस्त सन् 1947 भारत आजाद हुआ। इस प्रकार करोड़ों भारतीयों की शहादत के बाद भारत को स्वतंत्रता प्राप्त हुई।

नाटक के अंतिम सताईस वें दृश्य में नाटककार विदूषक के माध्यम से वह समस्या का चित्रण करता है जो समस्या 17वीं सदी ईस्ट इंडिया कंपनी के माध्यम से आई थी। अर्थात् आज भले ही भारत स्वतंत्र हुआ है लेकिन भारत में आई हुई बहुराष्ट्रीय कंपनियां भारत के हर क्षेत्र में अपने पांव पसार रही हैं। भारत में आज भी अशिक्षा, धर्म एवं जाति के नाम पर भेदभाव की भावना है। भ्रष्टाचार, भाई-भतीजावाद एवं गुंडाराज है।

सभी: नमो नमः विदूषक: इंजीनियर - ठेकेदार  
सभी: नमो नमः विदूषक: गुंडा-माफिया...  
सभी: नमो नमः विदूषक: घपला-घोटाला  
सभी: नमो नमः विदूषक: हवाला-बवाला...  
सभी: नमो नमः विदूषक: ट्रांसफर-पोस्टिंग...  
सभी: नमो नमः विदूषक: भाई जी चारा...'<sup>7</sup>

निष्कर्ष:-यह नाटक भारत पर अंग्रेज राज की स्थापना से वर्तमान समय तक का इतिहास हमारे सामने प्रस्तुत करता है। स्वतंत्रता संग्राम का गौरवशाली इतिहास उजागर करने के साथ ही उन कारणों का भी विमोचन करता है कि, जिस कारण भारत पर पहले ईस्ट इंडिया कंपनी और बाद में अंग्रेजी राज की स्थापना हुई। इसके साथ वर्तमान समय में आकर इतिहास को दोहराते हुए प्रतिपादन करता है कि, आज भी भारत में वही स्थितियां हैं जब 17वीं शती में थी। आज भी भारत में आपसी मतभेद, अशिक्षा, अंधश्रद्धा, जात-पात का भेदभाव, धर्मांधता है। आज भी 'ईस्ट इंडिया कंपनी' के समान बहुराष्ट्रीय कंपनियां भारत में आई हैं। इसलिए इन बहुराष्ट्रीय कंपनियों के मूल चरित्रों को याद रखना चाहिए।

सन्दर्भ सूची :-

1. डॉ. बी.आर. अम्बेडकर थॉट्स ऑन पाकिस्तान पृ. क्र. 25
2. नगेंद्र-हिंदी साहित्य का इतिहास - पृ. क्र. 618
3. सुशील कुमार सिंह- अलख आजादी की पृ. क्र. 23
4. वहीं पृ. क्र. 49-50
5. वहीं पृ. क्र. 54
6. वहीं पृ. क्र. 83
7. वहीं पृ. क्र. 87

# आवास समस्या - निजी व सरकारी क्षेत्रों का योगदान

पल्लवी पाण्डेय

डॉ. विनय कुमार गुप्ता

1. शोधार्थी, उपाधि स्नातकोत्तर महाविद्यालय, पीलीभीत

1. शोध निर्देशक एवं विभागाध्यक्ष, वाणिज्य विभाग, उपाधि स्नातकोत्तर महाविद्यालय, पीलीभीत

सारांश:- व्यक्ति की अति महत्वपूर्ण आवश्यकताओं में आवास की आवश्यकता को भी शामिल किया जाता है प्रत्येक व्यक्ति को एक छत की आवश्यकता महसूस होती है वह किसी न किसी रूप में अपने रहने के लिए आवास की व्यवस्था करता रहा है। सरकार द्वारा आवास समस्या के समाधान हेतु न केवल सार्वजनिक क्षेत्र में प्रयास किये गये हैं वरन् निजी क्षेत्र में भी इस समस्या के समाधान में सार्थक प्रयास हुए हैं। सरकार एवं योजना आयोग ने भारत में गृह वित्त के आयोजन हेतु एक महत्वपूर्ण भूमिका प्रदान की है। भारतीय रिजर्व बैंक ने सभी बैंकों को अपनी बढ़ती हुयी जमाओं के 1-1/2 प्रतिशत तक की धनराशि आवासों के निर्माण हेतु वित्त प्रदान करने के लिए सुनिश्चित की है। आवास समस्या के समाधान हेतु सरकार द्वारा कई महत्वपूर्ण कदम उठाये गये हैं एवं कई योजनाओं का संचालन भी किया गया है। इन्दिरा आवास योजना, महामाया आवास योजना मुख्यमंत्री आवास योजना एवं प्रधानमंत्री आवास योजना इसका प्रत्यक्ष प्रमाण है। आवास समस्या के निराकरण में निजी एवं सरकारी क्षेत्रों का विशेष योगदान रहा है। वित्तीय संस्थाओं एवं एजेंसियों, बिल्डर्स गृह निर्माण एजेंसियों, आवास, समितियों की भूमिका भी निजी क्षेत्र द्वारा आवास समस्या के निराकरण में प्रभावकारी सिद्ध हुयी है। दूसरी तरफ सरकारी क्षेत्रों के माध्यम से भी आवासीय समस्या के समाधान में किये गये प्रयास सार्थक सिद्ध हुये हैं। निष्कर्षतः निजी क्षेत्र के नियोक्ता, उद्योगपति व ऋणदाता, लाभ रहित निवेश करना पसन्द नहीं करते हैं। बड़े-बड़े उद्योगपति आवास उपलब्ध कराना एक कल्याणकारी योजना समझते हैं।

व्यक्ति की अति महत्वपूर्ण आवश्यकताओं में आवास की आवश्यकता को भी शामिल किया जाता है प्रत्येक व्यक्ति को एक छत की आवश्यकता महसूस होती है वह किसी न किसी रूप में अपने रहने के लिए आवास की व्यवस्था करता रहा है। आज के इस वैज्ञानिक युग में नई-नई खोजों और अविशकारों ने मनुष्य के जीवन स्तर में आमूलचूल परिवर्तन कर दिया है। मनुष्य की आवश्यकताओं में अत्याधिक वृद्धि हुई, शिक्षा का प्रचार प्रसार एवं जीवन स्तर में गुणात्मक रूप से परिवर्तन हुए हैं। अतः प्रत्येक व्यक्ति न केवल साधारण आवास चाहता है बल्कि बेहतर ढंग से अपने लिए आवास की व्यवस्था करना चाहता है। गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन करने वाले व्यक्तियों के लिए अपना निजी स्थाई आवास एक स्वप्न बनकर रह गया है। अतः वह अपने आवास की व्यवस्था करने हेतु सरकार पर आश्रित हो गये हैं एवं सरकार की किसी न किसी योजना के अन्तर्गत या सरकारी नीति के अनुसार स्वयं के लिए आवास प्राप्त करने की इच्छा रखते हैं।

सरकार द्वारा आवास समस्या के समाधान हेतु न केवल सार्वजनिक क्षेत्र में प्रयास किये गये हैं वरन् निजी क्षेत्र में भी इस समस्या के समाधान में सार्थक प्रयास हुए हैं। निजी क्षेत्र से आशय ऐसे क्षेत्र से है जो व्यक्तिगत तौर पर अथवा निजी तौर पर आवासों के निर्माण हेतु ऋणों के रूप में सहायता देते हैं एवं संसाधन भी उपलब्ध कराते हैं। निजी क्षेत्र में ऐसी एजेंसियाँ तथा भवन निर्माणकर्ता भी शामिल हैं जो आवासों का निर्माण कर उनको किरस्तों में भुगतान करने की सुविधा प्रदान करके सहायता करते हैं साथ ही निजी क्षेत्र के बैंक, वित्तीय संस्थाएँ, फाईनेन्स कम्पनियाँ, चिट फण्ड कम्पनियाँ तथा साहूकार महाजन आदि भी शामिल हैं जो आवास समस्या के समाधान में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं। विगत 25-30 वर्षों में बहुत सी गृह निर्माण एजेंसियाँ भी सक्रिय हुई हैं।

यदि आवास समस्या के समाधान में निजी क्षेत्र की भूमिका पर ध्यान देते हैं तो यह ज्ञात होता है कि राष्ट्रीयकृत बैंकों के साथ साथ निजी क्षेत्रों की बैंक जैसे - एच.डी.एफसी. बैंक, आई.सी.आई. बैंक, एक्सिस बैंक, महेन्द्रा कोटक बैंक, आदि भी विगत 15 वर्षों से आवास ऋण प्रदान करने में सक्रिय रहे हैं।

निजी क्षेत्र की भूमिका:-आवास समस्या के समाधान हेतु भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा एक राष्ट्रीय आवास वित्त निगम की स्थापना की गई जो कि पूर्ण स्वामित्व संस्था के रूप में स्थापित किया गया। सरकार एवं योजना आयोग ने भारत में गृह वित्त के आयोजन हेतु एक महत्वपूर्ण भूमिका प्रदान की है। भारतीय रिजर्व बैंक ने सभी बैंकों को अपनी बढ़ती हुयी जमाओं के 1-1/2 प्रतिशत तक की धनराशि आवासों के निर्माण हेतु वित्त प्रदान करने के लिए सुनिश्चित की है। एक व्यापक दृष्टिकोण से देखे तो आवासों की मांग एवं गृह वित्त की मांग हमेशा बढ़ती गई है। आवास निर्माण हेतु ऋण प्रदान करने वाली एजेंसियों में जीवन बीमा गृह वित्त लिमिटेड भी शामिल है। वाणिज्यिक बैंक एवं गृह वित्त का भी आवास समस्या के समाधान में योगदान है विशिष्ट वित्तीय संस्थाएँ भी केवल गृह वित्त एवं आवासों के निर्माण हेतु स्थापित की गयी हैं। वर्तमान में भी आवासों के निर्माण हेतु प्रदान किये जाने वाले वित्त के क्षेत्र में अग्रिम है।

एच0डी0एफ0सी0 एवं गृह वित्त की स्थापना वर्ष 1977 में आवासों के निर्माण हेतु दीर्घकालीन ऋण प्रदान करने के लिए की गई थी। इस बैंक की ब्याज नीति परिवर्तनशील है ये नीति ऋणों की राशि पर निर्भर करती है न कि ऋण लेने वाले की आय पर। वर्तमान में यह गृह वित्त के क्षेत्र का सबसे बड़ा हिस्सा है।

निजी क्षेत्र के अन्तर्गत विल्डर्स एवं गृह निर्माण एजेंसियों मुख्य रूप से शामिल है। शहरी क्षेत्रों में आवास की समस्या को हल करने में सहायक है परन्तु ग्रामीण क्षेत्रों में इन एजेंसियों की भूमिका न के बराबर रही है।

**सरकारी क्षेत्रों की भूमिका:-**आवास समस्या के समाधान हेतु सरकार द्वारा कई महत्वपूर्ण कदम उठाये गये हे एवं कई योजनाओं का संचालन भी किया गया है। इन्दिरा आवास योजना, महामाया आवास योजना मुख्यमंत्री आवास योजना एवं प्रधानमंत्री आवास योजना इसका प्रत्यक्ष प्रमाण है। इसके साथ ही राष्ट्रीय आवास नीति एवं आवास एवं विकास परिषद् ग्रामीण आवास परिषद्, ग्रामीण निर्बल वर्ग आवासीय योजना भी शामिल है। आवासों की कमी को देखते हुए सरकार द्वारा आवास एवं विकास परिषद् का गठन किया गया। इस नीति के तहत सरकार द्वारा भवन निर्माण करके व्यक्तियों को सहायता प्रदान की जाती है।

ग्रामीण आवास परिषद् नीति के माध्यम से लाभार्थियों को आवासों के निर्माण हेतु धनराशि उपलब्ध करायी जाती है। सबके लिए आवास कार्यक्रम के अन्तर्गत मांग एवं ऋय क्षमता अनुसार आवासीय सुविधा उपलब्ध कराने का प्रयास किया जा रहा है। हुडको के द्वारा भी शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्रों में आवास निर्माण हेतु वित्त प्रदान किया जाता है।

सहकारी आवास समितियों की भूमिका भी अधिक महत्वपूर्ण है। सहकारी आवास समितियों द्वारा कम लागत के आवासों का निर्माण कर ग्रामवासियों की आवास सम्बन्धी आवश्यकताओं को पूर्ण किया गया है। इसके साथ ही रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया ने वाणिज्यिक बैंकों को आवासों के निर्माण हेतु सामान्य ब्याज दर पर बड़ी राशियों के ऋण प्रदान करने की अनुमति प्रदान की है। वर्ष 1970 में रिजर्व बैंक ने व्यापारिक बैंकों को अपनी बढ़ती हुई निरपेक्ष राशियों का 1/2 प्रतिशत सीधे आवास क्षेत्र में वित्तीय सहायता प्रदान करने के लिए प्रेरित किया है। इन्दिरा आवास योजना जो कि वर्तमान समय में प्रधानमंत्री आवास योजना के नाम से संचालित है आवास समस्या के निराकरण हेतु आवंटित धनराशि में भी वृद्धि की गई है। ग्रामीण आवास एवं सहयोग निवास योजना के अन्तर्गत भी बैंक द्वारा दी जाने वाली सहायता राशि में भी वृद्धि की गई है जिससे ग्रामीण क्षेत्रों में आवास समस्या में सुधार हुआ है।

उपरोक्त अध्ययन से स्पष्ट है कि आवास समस्या के निराकरण में निजी एवं सरकारी क्षेत्रों का विशेष योगदान रहा है। समय-समय पर निजी क्षेत्र द्वारा समस्या के समाधान हेतु ग्रामवासियों के लिए आवास निर्माण एवं वित्त प्रदान करने जैसी सुविधाओं को प्रदान किया गया है। वित्तीय संस्थाओं एवं एजेंसियों, बिल्डर्स गृह निर्माण एजेंसियों, आवास, समितियों की भूमिका भी निजी क्षेत्र द्वारा आवास समस्या के निराकरण में प्रभावकारी सिद्ध हुयी है। दूसरी तरफ सरकारी क्षेत्रों के माध्यम से भी आवासीय समस्या के समाधान में किये गये प्रयास सार्थक सिद्ध हुये हैं। सहकारी संस्थाओं एवं सहकारी आवास समितियों, बैंकों ने भी आवासों के निर्माण पर ध्यान केन्द्रित किया एवं सरकार द्वारा भी योजनाओं के माध्यम से ठोस कदम उठाये गये है। अतः यह कहा जा सकता है कि निजी व सरकारी क्षेत्रों ने आवास समस्या के समाधान में प्रभावशाली भूमिका निभाई इसके साथ ही आवासहीन व्यक्तियों को स्वयं भी जागृत होना होगा एवं स्वयं भी प्रयास करने होंगे तभी इस समस्या का हल सम्भव हो सकता है। निजी क्षेत्र में कार्यरत बड़ी कम्पनियों अपने कर्मचारियों के लिए किरायाभत्ता तथा बड़े उद्योगपति अपने कर्मचारियों को आवासीय सुविधा उपलब्ध कराते है। जहाँ तक जनपद-पीलीभीत में

आवासीय सुविधा हेतु निजी क्षेत्र के योगदान का प्रश्न है वहाँ जनपद में कार्यरत सहकारी व निजी क्षेत्र की चीनी मिलों द्वारा अपने कर्मचारियों को आवासीय सुविधा उपलब्ध करायी गई है जो प्रमुख रूप से अधिकारी व कार्यालयीय कर्मचारियों के लिए न्यूनतम किराये पर उपलब्ध कराये गये है जो कर्मचारियों की संख्या के अनुपात में बहुत कम है।

उपरोक्त अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि निजी क्षेत्र के नियोक्ता, उद्योगपति व ऋणदाता, लाभ रहित निवेश करना पसन्द नहीं करते हैं। बड़े-बड़े उद्योगपति आवास उपलब्ध कराना एक कल्याणकारी योजना समझते है। वर्तमान में प्रजातान्त्रिक देशों में सरकार की मुख्य भूमिका कल्याणकारी राज्य की स्थापना करना भी है। अतः वह अपने निवासियों की आवासीय समस्या के समाधान में निरन्तर प्रयत्नशील है।

**सन्दर्भ सूची:-**

**पुस्तकें:-**

1. भट्टाचार्या, एस.एन., रुरल डेवलपमेण्ट इन इण्डिया एण्ड अदर डेवलपिंग कन्ट्रीज, एस.चन्द कम्पनी, नई दिल्ली (1997)
2. अरोड़ा, आ.सी., इन्ट्रीगैटेड रुरल डेवलपमेण्ट, एस. चाँद एण्ड कम्पनी, नई दिल्ली (1998)
3. देसाई, बी0, हाउसिंग प्रॉब्लम एण्ड सोशल चेंज, बोरा पब्लिकेशन, मुम्बई (2000)
4. कुमार, एम.एच., हाउसिंग प्रॉब्लम इन इण्डिया, दीप एण्ड दीप पब्लिशर्स, नई दिल्ली (2000)

**समाचार पत्र:-**

1. इकौनॉमिक टाइम्स
2. इण्डियन एक्सप्रेस
3. हिन्दुस्तान टाइम्स
4. दैनिक अमर उजाला
5. दैनिक जागरण।

## यशपाल की कहानियों में वर्गीय यथार्थ का चित्रण

मनोज कुमार

डॉ. वंदना

1. शोधार्थी, शासकीय महिला डिग्री महाविद्यालय, बदायूँ, उप्र.
2. शोध निर्देशक, शासकीय महिला डिग्री महाविद्यालय, बदायूँ, उप्र.

**भूमिका:-** यशपाल अपने कहानियों के माध्यम से समाज के विभिन्न वर्गों के भिन्न-उच्यभिन्न पहलुओं का चित्रण करते हुये? वर्ग कि समस्या को समाज के निर्माण में धन, आय, व्यावसायिक स्तर, समुदायिक शक्ति, दल की विशिष्टता, पारिवारिक पृष्ठभूमि, वेश परम्परा, उपभोग का स्वर आदि के आधार पर जिन वर्गों का निर्माण किया है। उसमें उच्च वर्ग, मध्यवर्ग, निम्न वर्ग इन सभी का चित्रण यशपाल ने लगभग अपने प्रत्येक कहानीयों में प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से दिखाने का प्रयास किया है। उन्होंने अपनी सभी कहानियों में मध्यम वर्ग की विसंगतियाँ, खोखलेपन, विखराव, पारिवारिक टूटन, झूठे अहं, आडम्बर पूर्ण, कृत्रिम जीवन और समाज को केन्द्र का विषय रखा है।

**1. समाजिक वर्ग :-** समाजिक वर्ग का अभिप्राय समाज में समान स्थिति वाले लोगों से हैं यह स्थिति विभिन्न कारकों जैसे-धन, कार्य, आय, शिक्षा, परिवार, नस्ल और जाति द्वारा निर्धारित की जाती है। भारत में सामाजिक वर्ग को मुख्यतः दो भागों में देखा जा सकता है, पहला ग्रामीण स्तर पर जिसमें जमीनदार, कृषक, मजदूर आदि आते हैं, वहीं द्वितीय स्तर पर शहर, जिसमें पूँजीपति वर्ग, व्यापारी वर्ग और श्रमिक वर्ग को शामिल किया गया है। प्रसिद्ध पाश्चात्य समाज शास्त्री मैकडवर तथा पेज 'वर्ग' की परिभाषा देते हुए कहा है- 'किसी वर्ग का अर्थ ऐसी श्रेणी अथवा प्रकार से है, जिसके अन्तर्गत व्यक्ति अथवा व्यक्ति समूह आते हैं।' अतः स्पष्ट है कि व्यक्ति ने जब मानव समुदाय की संकल्पना की होगी तो उसके मस्तिष्क में विभिन्न वर्गों का स्वरूप भी स्वतंत्र रूप से जागृत हुआ होगा। दूसरे शब्दों में इन वर्गों को सामाजिक श्रृंखला का विशिष्ट रूप कहा जा सकता है।

गिन्सवर्ग इसके सम्बन्ध में कहते हैं- 'वर्ग की संकल्पना दलों के सामाजिक भेद पर आधारित होती है' अपनी ही बात को और स्पष्ट करते हुए वे कहते हैं कि- 'एक वर्ग के अन्तर्गत ऐसे सदस्य होते हैं जो एक ही वंश से उत्पन्न हो एक से धन्धों में लगे हो, जो धन की दृष्टि से समान स्तर रखते हो और जिनके जीवन-उच्यनिर्वाह का ढंग भी एक सा हो। ऐसे सभी सदस्यों के विचार भावनायें, प्रवृत्तियाँ और व्यवहार समान होते हैं।' अतः स्पष्ट है कि वर्ग या श्रेणी किसी समाज का आवश्यक एवं महत्वपूर्ण अंग होता है। इसके साथ मनुष्य की वंश-परम्परा, शिक्षा, आय, रहन-सहन का स्तर तथा व्यक्ति की प्रतिभा भी उसे उत्कृष्ट वर्ग का व्यक्ति बनाने में सहायक होती है। यशपाल ने अपनी कहानियों में उच्च वर्ग, मध्यम वर्ग और निम्न वर्गों के पात्रों को स्थान दिया है।

**उच्च वर्ग:-** नवीन काल में वर्ग की भावना को एक विशिष्ट सामाजिक प्रक्रिया का स्वरूप देने का उत्कृष्ट महान चिंतक एवं विचारक कार्ल मार्क्स को हैं मार्क्स के अनुसार आदिम समाज में वर्ग भावना या श्रेणी में भेद नहीं था, क्योंकि खेत में उत्पादन इतना कम होता था कि मानव अपनी आवश्यकताओं

की ही पूर्ति कर पाते थे, उसमें से कुछ बचा पाना असम्भव बात थी। धीरे-धीरे उत्पादन में वृद्धि होने के साथ-साथ उच्च वर्ग के मन-मस्तिष्क में सम्पत्ति इकट्ठा करने की योजना सूझी और इसी प्रकार वैयक्तिक सम्पत्ति की भावना को समाज में बढ़ावा मिला। जैसे-उच्य जैसे लोगों में सम्पत्ति जमा करने की भावना बढ़ती गई। वैसे ही वर्गों की भावना भी समाज में बढ़ती गई। यहाँ तक व्यक्तिगत सम्पत्ति की सुरक्षा के लिए व्यक्तिगत संघर्ष भी होने लगे और इस प्रकार से समूहगत हितों की सुरक्षा के लिए आपस में ही वर्ग संघर्ष प्रारम्भ हुआ। मार्क्स ने न केवल वर्ग-संघर्ष की भावना को एक वैज्ञानिक स्वरूप प्रदान किया, बल्कि समाज के भिन्न-भिन्न वर्गों का नामकरण करते हुए मानव समाज को तीन वर्गों की संकल्पना की। पहले वर्ग को बुर्जुआ या शोषक वर्ग कहा है तथा दूसरे को पोलेटेरियट या शोषित वर्ग की संज्ञा दी तथा शोषक और शोषित वर्ग के आपसी संघर्ष से ही कालान्तर में एक तीसरे वर्ग का जन्म हुआ, जिसे मार्क्स ने 'मध्यम वर्ग' कहा।

**यशपाल की कहानियों में उच्च वर्गीय यथार्थ:-** यशपाल ने अपने कहानियों में उच्च वर्ग के ऐश्वर्य, शोषण सामन्तवादी प्रवृत्ति, पूँजीपतियों, महाजनों तथा सरकारी अफसरों के जीवन के भिन्न-भिन्न पक्षों का यथार्थ चित्रण कर अपनी तीक्ष्ण दृष्टि का परिचय दिया है। उन्होंने अपने कहानी संग्रह 'वो दुनिया' के माध्यम से महाजनों की सूद खोरी पर करारा व्यंग्य किया है। इसमें कहानी का नायक किराये के लिए तथा सूद पर लिए गए पैसो का सूद लेने के लिए आने वाले लाला के आने से पहले ही घर से बाहर चल देता है और उसी वक्त पूँजीवाद के विषय में सोचता हुआ कहता है- 'उच्य' मैं देखता हूँ, लाल और लाला की विरादरी के देसी-विदेसी लोग अपने संचित परिश्रम यानि पूँजी के जोर पर दूसरों के उपार्जित परिश्रम को मुनाफे के रूप में छीन कर जमा करते जाते हैं। इस संचित परिश्रम को वे न तो मेहनत से कमाई करने वालों को खर्च करने देते हैं न रूपकों दूसरों के हाथ में जा उनकी आवश्यकता पूरी करें। माया पर बैठे सांप की भांति वे निष्काम भाव से या निष्प्रयोजन रूप या पूँजी बटोरते जाते हैं। सम्पत्ति द्वारा समाज पर शासन करने के लिए। यही पूँजीवाद है' यशपाल अपनी कुछ कहानियों में उच्च वर्ग द्वारा किए जा रहे भ्रष्टाचार का वर्णन करते हैं, जो कि प्रत्यक्ष रूप में शोषण का कारण भी हैं उनकी कहानी संग्रह- 'उच्य' 'जन-गण, मन अधिनायक है तथा '420' कहानियाँ भी इसी वर्ग से सम्बन्धित हैं। जिसमें नेताओं के चाल-चलन में राजनीतिक की झलक देखी जा सकती हैं- '420' में आजादी के बाद भारतीयों अफसरों के ही देशवासियों के प्रति अभद्र व्यवहार को दिखाया गया है। राशन पर भी सामान न मिलने पर कहानी का नायक अभद्र व्यवहार को दिखाया गया है। राशन पर भी सामान न मिलने पर कहानी का नायक जब टी. आर. ओ (अफसर) को फेन करता है तो

इसका फ़्रेम नं0 420 सुन सोचता है अन्य पात्र द्वारा उसे सलाह दी जाती है कि-  
“जब हैं ही 420 तो शिकायत क्या करोगे। वह खुद ही कह रहे हैं 420 है तो  
फ़िर क्या? उन्होंने ते अपना नम्बर ही 420 रख लिया है।”

माक्सवादी विचारधारा से प्रकाशित यशपाल ने अपनी कहानियों में  
उच्च वर्ग यानि शोषक वर्ग के हर संभव पहलू को समाज के सामने यथार्थ रूप  
में लाने का प्रयास किया है। उनकी कहानी “शहशाह का न्याय” इसी वर्ग के  
प्रतिनिधि रियासती राजा के उस रूप को चित्रित करती है। जिसमें भोगी और  
विलासी राजा स्वयं अपने राज्य के बारे में कुछ भी नहीं जानता। उसके  
अधिकारियों में काजी और दरोगा जनता को परेशान कर स्वयं अपना हुकम  
चलाते हैं। स्वतंत्रता से पूर्व भारत में उच्च वर्ग के एक अन्य पात्र जगीरी मल  
“चोर बाजारी के दाम” के नायक है। चोर बाजारी पर व्यंग्य करते हुए लेखक  
कहता है कि-“ग्राहको की बेबसी जगीरी मल की दुकान के केश बाक्स में  
सिमट कर लकड़ मण्डी के सुन्दर से मकान का रूप लिए जा रही थी।” परन्तु  
देश का बँटवारा हो जाने पर स्वयं उसका बेटा को इस चोर बाजारी से दवा न  
मिलने पर मृत्यु को प्राप्त कर लेता है। अतः कहा जा सकता है, कि यशपाल का  
उच्च वर्ग वास्तव में वही है, जो माक्सवादी विचारधारा में शोषक वर्ग है।

**मध्यम वर्ग:**-मध्य वर्ग विशेषतः बुद्धि प्रधान वर्ग माना गया है और  
सामाजिक क्रान्ति के प्रायः समस्त विचारों का सृजन मध्यम वर्ग में होता है।  
इस वर्ग की कुछ ऐसी सामान्य विशेषताएँ हैं जिसमें यह वर्ग समाज के अन्य  
वर्गों से अलग हो जाता है। “मध्यम वर्ग में आत्म निर्भरता तथा जीवन और  
परिस्थितियों के साथ संघर्ष करने की अद्भुत क्षमता होती है। आत्म निर्भरता के  
साथ ही इसमें नेतृत्व करने की पर्याप्त क्षमता भी होती है।” प्रगतिशील लेखक  
यशपाल स्वयं भी मध्य वर्गीय थे और स्वयं उन्होंने मध्य वर्ग को बुद्धिजीवियों का  
वर्ग कहा है तथा उनका श्रम मुख्यतः कलम चलाना ही रहा है, जैसा की उनके  
शब्दों से स्पष्ट होता है कि-“तर्क और सिद्धान्त रूप से मध्यम श्रेणी जैसे किसी  
स्तर का बने रहना संभव नहीं.....परन्तु जीवन की अवस्था के दृष्टिकोण से  
एक ऐसा स्तर समाज के बुद्धिजीवी लोगो का है जो पैदावार के साधनों से हीन  
है। परन्तु उनका श्रम बुद्धि का या कलम चलाने का है हथौड़ा या हंसिया चलाने  
का नहीं।” मध्यम वर्ग पर स्वयं यशपाल ने कलम चलाने का श्रम किया है और  
अपनी उस लेखनी द्वारा लगभग सभी पक्षों को चित्रित करने का प्रयास किया।  
यशपाल की कहानियों में मध्य वर्गीय यथार्थ-मध्यम वर्ग के विभिन्न पहलुओं पर  
विचार करते हुए यशपाल ने अपनी कहानियों के माध्यम से समाज की  
विसंगतियों का बड़ा तीखा अहसास जगाने का प्रयास किया है। चूँकि मध्यवर्गीय  
समाज भी विसंगतियों में जीता है।

वह आर्थिक दृष्टि से खोखला है, किन्तु वह अनेक प्रकार के  
अभिजात्यजन्य दिखावा और झूठी मर्यादाओं से ग्रस्त रहता है। वह खुलकर  
अपनी वास्तविक अस्तित्व से लड़ने के स्थान पर उसे पर्दा डालता रहता है।  
लेकिन एक दिन जब वह जर्जर अवस्था में चला जाता है, तो अपनी सुरक्षा की  
भरपूर कोशिश के बावजूद नग्न चित्र समाज के सामने आ जाती है। तब नंगी  
वास्तविकता का आकरिमिक उभार, पीड़ा और लज्जा की बेबसी और आक्रोश  
का ऐसा संक्रान्त प्रभाव पैदा करता है, कि पाठक स्तब्ध रह जाता है। “फूलों  
का कुर्ता” कहानी में लेखक ने मध्य वर्ग की विसंगतियों का बड़े कलात्मक -  
ढंग से चित्रण किया है-“उचय” फूलों का कुर्ता” कहानी में पाँच साल की लड़की  
फूलों अपने सात साल के पति सतू को देखकर कुर्ते को उठाकर मुंह ढक लेती  
है। इस लज्जावश जो उसे व्यवस्था ने दी हैं। यशपाल कहते हैं-“हम फूलों के  
कुर्ते के आंचल में शरण पाने का प्रयत्न कर उधड़ने चले जा रहे हैं” हमारा मध्य  
वर्ग अपने को ढकने के प्रयास में नंगा होता चला जाता है। वह मानवीय नैतिक

मूल्यों एवं मान्यताओं को बड़ी निर्भरता से उद्धाटित किया है।

“धर्मयुद्ध” कहानी में भी मध्य वर्ग के पात्र ‘वलर्क’ के लाल का  
चित्रण किया गया है, जो आर्थिक रूप से सम्पन्न न होने पर भी झूठे टाट-वाट  
में स्वयं को बड़ा आदमी प्रदर्शित करता है। घर में अपने मित्र उसकी पत्नी तथा  
साली को निमंत्रण देता है। परन्तु माँ द्वारा मेहमानों को बुरा-भला कहने पर स्वयं  
मरण व्रत धारण कर लेता है और अपना सिर दिवार से चोटिल कर लेता है। घर  
के सभी सदस्यों द्वारा मनाने पर रात एक बजे पुनः मि0 माथुर को उसकी पत्नी  
तथा साली सहित बुलाकर घर के सदस्यों द्वारा उसमें क्षमायाचना मगवाई जाती  
है। यशपाल ने कहानी के अंत में इस मध्यवर्गीय पात्र पर व्यंग्य करते हुए लिखा  
है-“मि0 माथुर द्वारा आगामी संघ्या को ही उनके यहाँ डिनर और कॉकलेट  
पाटी का बुलावा स्वीकार कर लिया तो लाल ने एक बाह मिसेज माथुर के कन्धे  
पर रखी और दुसरी बाह माथुर की साली के कन्धों पर। इस प्रकार लाल फर्श  
से उठे और आमरण अनसन को छोड़कर धर्म युद्ध में घायल परन्तु विजयी  
महारथी की भाँति लड़खड़ाते हुए डिनर की टेबल पर जा बैठे।”

मध्यम वर्ग के जीवन का एक अन्य पहलू-“पर्दा” कहानी के  
माध्यम से बताने का प्रयास किये हैं-चौधरी पीरबक्श चुंगी के महकमें में तथा  
उसके दोनों बेटे सरकारी महकमों में नौकर है। उसमें अगली पीढ़ी का एक  
युवक तेल की मिल में मुंशीगिरी के 20/रूपये वेतन पाता है। घर में बच्चों की  
संख्या बढ़ने के साथ-साथ भूख भी बढ़ती जा रही है। घर में आबरू के रूप  
में मुख्य द्वार पर पर्दा है। मुहल्ले में सफेद पोशी बरकरार हैं, परन्तु गुजारा बहुत  
मुश्किल से चलता है। चौधरी जी एक पटान से कर्जा ब्याज पर लिये थे। परन्तु  
उस कर्ज को ससमय पर लौटा न पाने के कारण पटान घर पर आकर गुरसे में  
गालियाँ दी और वह घर का पर्दा गिरा दिया-“सहसा पर्दा हट जाने से औरत  
ऐसे सिकुड़ गई जैसे उनके शरीर की वस्त्र खींच लिया गया हो। वह पर्दा ही तो  
था जो घर की औरतों के शरीर का वस्त्र था। उनके शरीर पर बचे चीथड़े उनके  
एक-उचयतिहाई अंग ढकने में भी असमर्थ थे।”

मध्य वर्ग के झूठे परिस्थितियों का परिचायक है। चौधरी पीरबक्श  
ने दुबारा अब उस गिरे हुए पर्दे को लगाने की थोड़ी सी हिम्मत न थी। शायद  
अब उसकी जरूरत भी न रह गई। क्योंकि परदा जिस भावना का आलम्ब था।  
वह मर चुकी थी। यशपाल ने अपने कहानियों के माध्यम से समाज में यह बताने  
का प्रयास किया है कि झूठी शान तथा अहं के मुखौटे की बड़ी कुरता से नाचने  
का प्रयास किया है। मध्यम वर्ग का प्रत्येक पहलू यशपाल के कहानियों में देखने  
को मिलता है। जैसा की डा0 रामविलास शर्मा का कथन है कि-“यशपाल जी  
मुख्यतः मध्य वर्ग के चितरे हैं।”

**निम्न वर्ग:**-यह समाज का वह हिस्सा है, जो अपनी जीविकोपार्जन  
श्रम से करता है और जीवन भर श्रम करने के लिए बाध्य होता है। क्योंकि “श्रम  
नहीं तो भोजन नहीं” वाली कहावत इस वर्ग पर पूर्ण रूप से लागू होती है।  
भोजन करने के लिए श्रम बेचने के कारण ही इस वर्ग का सबसे अधिक शोषण  
किया जाता है। इस वर्ग के अन्तर्गत किसान, मजदूर, छोटे दुकानदार आदि आते  
हैं। किसी भी प्रकार की क्रान्ति का नाद घोष करने के लिए यह वर्ग आधारशिला  
का कार्य करता है। इसमें आर्थिक क्रान्ति विशेष रूप से उल्लेखनीय है। सर्वहारा  
वर्ग की विशेषता तथा उद्देश्य को स्पष्ट करते हुए माक्स ने घोषित किया था कि-  
“सर्वहारा वर्ग पूंजीवाद से जन्म लेकर उसी की कब्र तलासता है और उसको  
धराशायी करने के लिए सत्त प्रयत्नशील रहता है। सामाजिक क्रान्ति इसी वर्ग के  
बल पर है, क्योंकि उनका ऐसा कोई भी स्वार्थ नहीं है, जो उन्हें इस क्रान्ति से  
अलग कर सके। सर्वहारा की क्रान्ति की सबसे बड़ी विशेषता होगी समाज का  
वर्गीय भावना से मुक्त करके उसके अन्दर साम्यवाद का प्रसार करना। सर्वहारा

की क्रान्ति के पूर्व भी अनेक क्रान्तियाँ हो चुकी हैं, किन्तु ये क्रान्तियाँ एक शोषक वर्ग के द्वारा, दूसरे शोषक वर्ग के विरुद्ध सम्पन्न हुई हैं, और यही कारण है कि शोषण की प्रक्रिया समाज में निरन्तर प्रवाहमान है। सामन्तवादी युग में शोषक सामन्त था और पूंजीवादी युग में शोषक पूंजीपति है, परन्तु मजदूरों के द्वारा अब जो क्रान्ति होगी। उसमें शोषक वर्ग के साथ शोषण की प्रक्रिया की जन्मदात्री अतिरिक्त मूल्य वाली व्यवस्था को समाप्त कर देना ही इसका तात्कालिक उद्देश्य है। यशपाल के कहानियों में निम्नवर्गीय यथार्थ-चूँकि यशपाल मार्क्सवादी दृष्टिकोण से प्रभावित रहे हैं इसलिए उनकी इस वर्ग विशेष के प्रति रुचि एवं लगाव होना नैसर्गिक है। उनके विभिन्न कहानियों में निम्न वर्गगत पहलुओं तथा विभिन्न दृष्टिकोण को देखा जा सकता है। 'अभिशाप्त' कहानी के समूह शीर्षक में लेखक ने इस वर्ग के आर्थिक पक्ष को उजागर किया है। कहानी में तीन बच्चों वाले परिवार की आर्थिक स्थिति का चित्रण किया गया है चूँकि दिन भर मजदूरी करने के उपरान्त घर में दो समय का भोजन भी नसीब नहीं होता है। उस परिवार में जब एक बच्चे का हिस्सा का भोजन किसी दूसरे बच्चे को माँ द्वारा खिला देने पर उसके दूसरे भाई द्वारा अपने ही भाई का गला घोट दिया जाता है। जिससे उसके हिस्से का भी भोजन प्राप्त हो सके। मजदूर वर्ग की आर्थिक प्रकरण को लेखक ने एक अन्य कहानी 'हवाखोर' में एक ऐसे पात्र के माध्यम से प्रदर्शित किया है, जो दिन भर पहाड़ी क्षेत्र में यात्रियों को घोड़े पर घुमता है। एक दिन लेखक के घूमने से मना करने पर वह उदास हो जाता है और अपनी आर्थिक समस्याओं का वर्णन लेखक के शब्दों में प्रसंग लेखक से कहता है-

“हुजुर हवा खाने नहीं जायेगा?”

“आज तुम खुद ही हवा खाओ।”

“अरे साहब, हम गरीब लोग क्या हवा खायेगा।”

क्योंकि! नारायण ने पूछा तुम्हें हवा खाना अच्छा नहीं लगता?.....

....निराशा के स्वर में गोविन्द ने उत्तर दिया.....“हमकों तो खाने को अनाज ही नहीं मिलता, हम लोग हवा क्या खायेगा।

अतः यशपाल ने अपनी कहानियों में निम्न वर्ग के सन्दर्भ में अपना दृष्टिकोण का परिचय दिया है वह निम्न वर्ग के विभिन्न पहलुओं को उद्घाटित ही नहीं करते अपितु उन्हें रेखांकित भी करते हैं। श्रमजीवी वर्ग हर समय अपनी जीवन की मूलभूत आवश्यकताओं शोषण इच्छाओं का दमन करके उच्च वर्ग की इच्छाओं को परिपूर्ण करना ही इस वर्ग के जीवन की नियति है। चूँकि इस बात से भी इन्कार नहीं किया जा सकता कि वर्गीय चेतना और सामूहिक क्रान्ति के लिए यह वर्ग नीचे के पत्थर की तरह काम करता है। यशपाल ने अपनी कहानियों के माध्यम से समाज के विभिन्न तथ्यों पर दृष्टिपात ही नहीं किया अपितु उन्हें अलौकिक भी किया।

**उद्देश्य:-**यशपाल के कहानियों में मुख्यतः विभिन्न वर्गों की समस्या का चित्रण। यशपाल के कहानियों में मार्क्सवाद से प्रभावित होने के बावजूद उनकी रचनाओं में सर्वहारा के जीवन के स्थान पर मध्यवर्ग के जीवन का व्यापक चित्रण है। यशपाल के कहानियों में निम्न वर्ग, मध्यम वर्ग, उच्च वर्ग की विभिन्न असमान्यताओं को चित्रण।

**निष्कर्ष:-**यशपाल ने अपने कहानियों का वर्णन सबसे पहले सामाजिक वर्ग में उच्च वर्गीय यथार्थ का चित्रण किया है। उन्होंने उच्च वर्ग का चित्रण करते हुए कहा है कि उच्च वर्ग वास्तव में वही है जो मार्क्सवादी विचारधारा में शोषक वर्ग है। वह इस समाज को कुत्सित तथा अभिशापित करने वाले वर्ग के रूप में ही चित्रित किया है। यशपाल ने मध्यम वर्ग के आर्थिक संघर्ष हो या आत्मिक संघर्ष व्यक्तिगत दुःख हो या समष्टिगत पीड़ा, वाह्यचारों की विवेचना हो, आडम्बरों की आलोचना, सामाजिक विसंगतियों हो या पारिवारिक तनाव,

आर्थिक दृष्टिकोण से सम्पन्न होने की इच्छा हो या भौतिक सुख-सुविधाओं की लालसा, कृत्रिम जीवन जीने की अभिशाप हो, संघर्षपूर्ण जीवन होने का श्राप यानि मध्यवर्ग का प्रत्येक पहलु यशपाल की कहानियों में दृष्टिगत होता है। निम्न वर्ग के प्रति यशपाल का दृष्टिकोण है कि श्रमजीवी वर्ग जो अपने जीवन को बनाए रखने के लिए निरन्तर भ्रमरत रहता है। इस वर्ग को उच्च वर्ग के द्वारा किए जाने वाले शोषण से अवगत होते हुए भी यह वर्ग निरन्तर शोषित होने के लिए बाध्य है। अपनी इच्छाओं का दमन करके उच्च वर्ग के जीवन की नियति है। यशपाल समाज के विभिन्न पहलुओं में निम्न वर्ग, मध्यम वर्ग और उच्च वर्ग के आपसी संघर्षों का चित्रण किये है।

**सन्दर्भ सूची:-**

1. इनसाइक्लोपीडिया ऑफ़द सोसल साइन्सेस, भाग तीन तथा चार , पृ0-531
2. इनसाइक्लोपीडिया ऑफ़द सोसल साइन्सेस, भाग तीन तथा चार , पृ0-536
3. शिवकुमार मिश्र, 'मार्क्सवादी साहित्य चिंतक' पृ0- 67
4. यशपाल, 'वो दुनिया' लखनऊ विप्लव कार्यलय, 1962
5. यशपाल, 'धर्म युद्ध' लखनऊ विप्लव कार्यलय, 1961 पृ0-67
6. यशपाल 'तुमने क्यों कहा था मैं सुन्दर हूँ, इलाहाबाद, लोक भारती प्रकाशन लिमिटेड पृ0-125
7. धीरेन्द वर्मा सम्पादक 'हिन्दी साहित्य कोश, बनारस ,ज्ञानमण्डल लिमिटेड 2015
8. यशपाल 'फूलों का कुर्ता' पृ0-12
9. यशपाल, 'धर्म युद्ध' लखनऊ विप्लव कार्यलय, 1961 पृ0-20
10. यशपाल 'पर्दा', इलाहाबाद, लोक भारती प्रकाशन लिमिटेड, 1983 पृ0-66
11. यशपाल, 'अभिशाप्त' पृ0-150

## भक्तिकालीन कवियों का ज्योतिष ज्ञान हिमानी पारीक

सहायक आचार्य, हिन्दी, श्रीमती माडीबाई मिर्धा राजकीय कन्या महाविद्यालय, नागौर, राजस्थान

भारतीय संस्कृति का आधार वेदों को माना गया है। वेदों को समझने में सहायता करने वाले शास्त्र वेदांग कहे जाते हैं तथा इन वेदांगों में ज्योतिष शास्त्र को सर्वोच्च वरीयता दी गई है। ज्योतिष शास्त्र की उपयोगिता निर्विवाद है। हमारे कर्म चाहे वह सचित कर्म हो, प्रारब्ध हो अथवा क्रियमाण कर्म तथा उनके फल व फल प्राप्ति के समय के बारे में जानकारी प्रदान करने वाला यह महान ज्योतिष शास्त्र मानव जीवन की जटिल पहलियों को सुलझाने व सही पथ दिखाने में बहुत उपयोगी है। किसी व्यक्ति के जन्म के समय से लेकर उसके वर्तमान समय तक ग्रहों की आकाशीय स्थितियों का विवेचन करने वाला यह शास्त्र तिथि, वार, नक्षत्र, योग, युति, प्रतियुति आदि सभी पक्षों पर विचार कर फलाफल प्रस्तुत करता है। ज्योतिष शास्त्र की इसी उपयोगिता एवं बहुआयामी महत्व के कारण ही कई भक्तिकालीन कवियों ने अपने काव्य में अपनी ज्योतिष संबंधी रूचि व ज्ञान को प्रकट किया है।

हिन्दी साहित्य के भक्तिकालीन कवियों में कई ऐसे कवि हुए हैं जिन्हें ज्योतिष का गहरा ज्ञान था। उनका यह ज्योतिष ज्ञान उनके काव्य में कभी सायास तो कभी अनायास परिलक्षित हुआ है। ऐसे कवियों में तुलसीदास, सूरदास, मलिक मोहम्मद जायसी, रहीम का नाम अग्रगण्य है। इन्होंने अपनी काव्य कृतियों में वर्णित घटनाओं को और अधिक रोचक एवं विश्वसनीय बनाने के लिए ज्योतिष ज्ञान का बहुत सुन्दर उपयोग किया है।

मलिक मोहम्मद जायसी:-सूफ़ी काव्यधारा के महत्वपूर्ण कवि मलिक मोहम्मद जायसी को अनेक विद्याओं के बारे में जानकारी थी यह उनकी रचनाओं से स्वतः सिद्ध होता है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने लिखा कि, "पद्मावत में ज्योतिष, हठयोग, कामशास्त्र और रसायन की बातें भी सामने आई हैं। हमारी समझ से ज्योतिष को छोड़कर और बातों की जानकारी उन्हें सत्संग द्वारा प्राप्त हुई थी न कि ग्रन्थों के अध्ययन द्वारा।" आचार्य शुक्ल के इस कथन से पता चलता है कि जायसी ने ज्योतिषीय ग्रन्थों का अध्ययन किया था। आचार्य शुक्ल के ही शब्दों में "ज्योतिष का परिज्ञान जायसी को अच्छा प्रतीत होता है। रत्नसेन के सिंहलद्वीप से प्रस्थान करने के पहले उन्होंने जो यात्रा विचार लिखा है वह बहुत विस्तृत भी है और ग्रन्थों के अनुकूल भी। इस प्रसंग की उनकी बहुत सी चौपाइयों तो सर्वसाधारण की जवान पर है।"<sup>2</sup> जैसे -

"सोम सनीचर पुरुष न चालू। मंगर बुद्ध उत्तर दिसि कालू।।"

जायसी की रचना पद्मावत में ही नागमती वियोग खण्ड में बारहमासा वर्णन के दौरान प्रकृति में होने वाले विभिन्न परिवर्तनों का संबंध नक्षत्रों से स्थापित कर, इन परिवर्तनों का नायिका के मन पर क्या प्रभाव पड़ रहा है इसका बहुत सुन्दर और मार्मिक वर्णन किया है। नागमती वियोग खण्ड

में आषाढ़ वर्णन में जासयी लिखते हैं-

"पुष्य नखत सिर ऊपर आवा। हौं बिनु नाह, मँदिर को छावा?  
आर्द्रा लाग लागि भुईं लेई। मोहि बिनु पिउ को आदर देई।"<sup>3</sup>

यहाँ जायसी पुष्य नक्षत्र एवं आर्द्रा नक्षत्र के प्रभाव एवं लोकजीवन व नायिका के मन से इन नक्षत्रों के सम्बन्ध को बड़ी सहजता से उद्घाटित करते हैं। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल जायसी के एक अन्य ग्रन्थ अखरावट की चर्चा करते हुए कहते हैं कि, "पिण्ड और ब्रह्मांड की एकता का प्रतिपादन करते हुए अखरावट में जायसी ने शरीर में ही जो ग्रहों की नीचे ऊपर स्थिति लिखी है वह सूर्यसिद्धान्त आदि ज्योतिष ग्रन्थों के ठीक अनुकूल है।"<sup>4</sup>

उक्त उदाहरणों एवं वक्तव्यों से जायसी के ज्योतिष ज्ञान के बारे में कोई शंका शेष नहीं रह जाती है।

सूरदास:-भगवान श्री कृष्ण के भक्त महाकवि सूरदास जी भी ज्योतिष ज्ञान से अनभिज्ञ नहीं थे। सूरदास जी ने भी भगवान कृष्ण के जन्म समय के दौरान आकाशीय ग्रहों की स्थिति का वर्णन अपने एक पद में किया है जिसे पढ़कर सूरदास जी के अद्भुत ज्योतिष ज्ञान की झलक मिल जाती है। इस सम्बन्ध में पं. लज्जाराम जी मेहता का एक लेख गीताप्रेस गोरखपुर द्वारा प्रकाशित कल्याण ज्योतिषतत्वांक में है वे कहते हैं कि, "एक पद्य मेरे मित्र मुखिया मन्नालाल जी ने 'चौरासी वैष्णव की वार्ता' से निकालकर मुझे बतलाया है। यह पद्य महात्मा सूरदास जी का है।"<sup>5</sup> इस तरह है-

"नन्दजू मेरे मन आनन्द भयो, मैं सुनि मधुराते आयो,  
लगन सोधि ज्योतिष को गिनी करि, चाहत तुम्हहि सुनायो।

सम्बत्सर 'ईश्वर' को भादो, नाम जु कृष्ण धरयो है,  
रोहिणि, बुध, आठे अँधियारी 'हर्षन' जो परयो है।

वृष है लगन, उच्च के 'उदुपति', तन को अति सुखकारी,  
दल चतुरंग चलै संग इनके, है रसिक बिहारी।

चौथी रासि सिंह के दिनमनि, महिमण्डल को जीतै,  
करिहै नाम कंस मातुल को, निहचै कछु दिन बीतै।

पंचम बुध कन्या के सोभित, पुत्र बढ़ैगो सोई,  
छठएँ सुक्र तुला के सनितु, सत्रु बचै नहिं कोई।

नीच-ऊँच जुबती बहु भोगै, सप्तम राहु परयो है,  
केतु मूरति में स्याम बरन, चोरी में चित धरयो है।

भाग्य भवन में मकर महीसुत, अति ऐश्वर्य बढ़ैगो,  
द्विज, गुरुजन को भक्त होइकै, कामिनि चित हँरैगो।"<sup>6</sup>

लज्जाराम जी आगे कहते हैं कि, "इसमें सूरदास जी ने ग्रहों का फलादेश भी स्पष्ट कर दिया है। इस फलादेश का कोई अंश ऐसा नहीं जो

श्रीकृष्ण चन्द्र के चरित्र से मेल न खाता हो। सच पूछे तो उनके वृहत चरित्र को ज्योतिष के ब्याज से एक ही पद मे देकर सूर ने सागर को गागर में भर दिया है।”

इस उदाहरण से स्पष्ट है कि सूरदास जी भी ज्योतिष का अद्भुत ज्ञान रखते थे तथा श्रीकृष्ण जन्म के समय की ग्रह स्थिति का वर्णन करते हुए इतनी सुन्दरता से चरित्रोद्घाटन करने व अपनी बात को ज्योतिषीय प्रमाणों से पुष्ट करने मे समर्थ थे।

तुलसीदास:-गोस्वामी तुलसीदास जी के ज्योतिष संबंधी गम्भीर ज्ञान की जानकारी तो सभी को है, फिर भी रामचरितमानस के कुछ पदों का यहाँ उल्लेख आवश्यक है। मानस के प्रारम्भ में ही दुष्टों के बारे में बताते हुए तुलसीदासजी लिखते हैं-

“हरि हर जस राकेस राहु से। पर अकाज भट सहसबाहु से।।”<sup>8</sup>

अर्थात् खल व्यक्ति, भगवान विष्णु एवं भगवान शिव के यशरूपी पूर्णिमा के चंद्र के लिए राहु के समान है अर्थात् जहाँ प्रभु के यश का वर्णन होता है खल व्यक्ति उसमें बाधा देते हैं। आगे लिखते हैं -

“उदय केतु सम हित सब ही के। कुंभकरन सम सोवत नीके।।”<sup>9</sup>

अर्थात् दुष्ट व्यक्तियों की बढ़ती सभी के हित का नाश करने के लिए केतु के समान है। यहाँ गोस्वामीजी ने दुष्टों का स्वभाव बताने के लिए ज्योतिषीय ग्रहों राहु व केतु का प्रयोग किया है। मानस में ही आगे संगति के प्रभाव को बताते हुए तुलसीदासजी लिखते हैं-

“ग्रह भेषज जल पवन पट पाइ कुजोग सुजोग।

होहिं कुबस्तु सुबस्तु जग लखहिं सुलच्छन लोग।।”<sup>10</sup>

अर्थात् ग्रह, औषधि, जल और वस्त्र, ये सब भी कुसंग और सुसंग पाकर संसार में बुरे और भले पदार्थ हो जाते हैं। यहाँ अपनी बात को समझाने के लिए तुलसीदासजी ने ग्रहों की युति का भी उदाहरण दिया है कि ग्रह भी युति के अनुसार अर्थात् संगत के अनुसार अपना प्रभाव बदल देते हैं। जो सूर्य बुध के साथ मिलकर बुधादित्य योग जैसे सुन्दर योग का निर्माण करता है वही सूर्य, राहु के साथ ग्रहण योग व शनि के साथ छत्रभंग जैसे क्रूर योग बनाता है। बालकाण्ड की एक चौपाई में तुलसीदासजी संक्रांति के महत्त्व को बताते हुए लिखते हैं-

“माघ मकरगत रवि जब होई। तीरथपतिहिं आव सब कोई।।”<sup>11</sup>

अर्थात् माघ के महीने में जब सूर्य मकर राशि पर आते हैं तब सब लोग तीर्थराज प्रयाग को आते हैं। यहाँ तुलसीदासजी ने सूर्य के मकर राशि में गोचर तथा उस समय प्रयाग में स्नान का महत्त्व बताया है कि यह जनमानस के लिए कितना पुण्यदायी है। भगवान श्रीराम के जन्म के समय की ग्रह-नक्षत्रों की स्थिति का वर्णन गोस्वामीजी ने इस प्रकार किया है-

“जोग लगन ग्रह बार तिथि सुकल भए अनुकूल।

चर अरु अचर हर्षजुत राम जनम सुखमूल।।

नौमी तिथि मधुमास पुनीता। सकल पच्छ अभिजित हरिप्रीता।

मध्यदिवस अति सीत न घामा। पावन काल लोक विश्रामा।।”<sup>12</sup>

अर्थात् श्रीराम के जन्म के समय योग, लगन, ग्रह, वार और तिथि सभी अनुकूल हो गए। पवित्र चैत्र का महीना था, नवमी तिथि थी। शुक्ल पक्ष और भगवान का प्रिय मुहूर्त अभिजीत था। इस प्रकार तुलसीदासजी ने श्रीराम के जन्म के समय की तिथि, नक्षत्र, लगन, ग्रह, मुहूर्त आदि का संकेत कर दिया था। शिव धनुषभंग प्रसंग में जब परशुरामजी श्रीराम पर क्रोध कर रहे होते हैं तब भी तुलसीदासजी ज्योतिषीय उदाहरण से उस समय की स्थिति

बताते हैं-

“टेढ जानि सब बंदइ काहू। बरु चंद्रमहि ग्रसइ न राहू।।”<sup>13</sup>

अर्थात् टेढ़ा जानकर सब लोग किसी की भी वन्दना करते हैं, टेढ़े चंद्रमा को राहु भी नहीं ग्रसता। यहाँ तुलसीदासजी चंद्रमा को राहु द्वारा ग्रहण लगाने के उदाहरण से बताते हैं कि जिस प्रकार टेढ़े चंद्र पर नहीं अपितु पूर्णिमा के चंद्र पर राहु ग्रहण लगाता है उसी प्रकार लोग भी सीधे-सादे व्यक्ति को तंग करते हैं टेढ़े को नहीं। गोस्वामी तुलसीदास कृत दोहावली में भी तुलसीदासजी ने अपने ज्योतिष ज्ञान का बेजोड़ उदाहरण दिया है-

“जनमपत्रिका बरति कै देखहुं मनहिं बिचारि।

दारुन बेरी मीचु के बीच बिराजति नारि।।”<sup>14</sup>

अर्थात् जन्मकुण्डली को व्यवहार में लाकर देखा कि स्त्री भयंकर वैरी के और मृत्यु के बीच के स्थान में विराज रही है। कुण्डली के बारह भावों में छठा भाव शत्रु का और आठवाँ भाव मृत्यु का माना जाता है। इनके बीच सप्तम भाव स्त्री का है। इस दोहे में तुलसीदासजी के जन्मकुण्डली विषयक ज्ञान का पता चलता है कि उन्हें कुण्डली के बारह भावों, भावेश व कारक की जानकारी थी साथ ही साहित्य में इस ज्ञान का प्रयोग उन्होंने बहुत सुन्दरता से किया है।

रहीम:-रहीम के काव्य में भी ज्योतिष की पर्याप्त चर्चा मिलती है। रहीम ने तो भारतीय ज्योतिष पर कई स्वतंत्र ग्रंथों की रचना भी की है। उनके द्वारा लिखे ज्योतिष ग्रन्थ का नाम खेट कौतुकम और द्वात्रिंशति योगावली है। खेट कौतुकम में खेट का अर्थ है ग्रह और कौतुकम का अर्थ है खेल या चमत्कार। इस लघु ग्रन्थ में संस्कृत के साथ अरबी-फ़ारसी शब्दों का भी प्रयोग है। इसमें कुण्डली के 12 भावों में स्थित सूर्य, चन्द्र, बुधस्पति, मंगल आदि ग्रहों का प्रभाव बताया गया है। जैसे तृतीय भाव में सूर्य का फल इस प्रकार बताया गया है-

“यदा सम्शखेट तृतीय स्थितो

नेक कर्दानिरोगो हि शीरीसखुन।

सदा मोदते रम्यसीमन्तिनीभिः

सवारो धनाद्यो हि निःकोपशन्।।”<sup>15</sup>

अर्थात् जन्मलग्न से तृतीय भाव में सूर्य हो तो वह मनुष्य यशस्वी, मित्तव्ययी, रोगरहित हृष्ट-पुष्ट शरीर वाला, मधुर-भाषी, सर्वदा सुन्दरी स्त्रियों संग विहार करने वाला, सवारी पर चलने वाला, धनवान व क्रोधरहित होता है। रहीम ने अपने नीतिपरक दोहों में भी बड़ी कुशलता से ज्योतिष का समावेश किया है। जैसे-

“कदली सीप भुजंग मुख, स्वाती एक गुन तीन।

जैसी संगति बैठिये, तैसोई फल दीन।।”

संगति के प्रभाव को समझाने के लिए स्वाति नक्षत्र में होने वाली वर्षा के प्रभाव का अद्भुत उदाहरण यहाँ रहीम ने प्रस्तुत किया है कि किसी नक्षत्र विशेष में होने वाली वर्षा की बूंदों में संगति के प्रभाव का कैसा अलग-अलग असर पड़ता है।

निष्कर्ष:-इस प्रकार उक्त उदाहरणों से हम यह कह सकते हैं कि भक्तिकालीन कवियों में से प्रत्येक धारा से चाहे वह राम भक्ति या कृष्ण भक्ति की काव्यधारा हो या संत काव्यधारा हो या सूफ़ी काव्यधारा, कई ऐसे कवि हुए हैं जो ज्योतिष संबंधी रूचि व ज्ञान रखते थे।

इससे उनकी बहुमुखी प्रतिभा व विद्वता का तो पता चलता ही है साथ ही उनके काव्य में भी रोचकता आ गई है।

संदर्भ सूची:-

1. जायसी ग्रन्थावली, सम्पादक -आचार्य रामचंद्र शुक्ल, पृ. सं. 159 लोकभारती प्रकाशन।
2. जायसी ग्रन्थावली, सम्पादक -आचार्य रामचंद्र शुक्ल, पृ. सं. 164 लोकभारती प्रकाशन।
3. जायसी ग्रन्थावली, सम्पादक -आचार्य रामचंद्र शुक्ल, पृ. सं. 327 लोकभारती प्रकाशन।
4. जायसी ग्रन्थावली, सम्पादक -आचार्य रामचंद्र शुक्ल, पृ. सं. 164 लोकभारती प्रकाशन।
5. कल्याण - ज्योतिष तत्वांक, सन् 2014 का विशेषांक, पृ.सं. 133, गीताप्रेस गोरखपुर।
6. कल्याण - ज्योतिष तत्वांक, सन् 2014 का विशेषांक, पृ.सं. 133, गीताप्रेस गोरखपुर।
7. कल्याण - ज्योतिष तत्वांक, सन् 2014 का विशेषांक, पृ.सं. 133, गीताप्रेस गोरखपुर।
8. रामचरितमानस, टीकाकार-हनुमान प्रसाद पौद्धार, पृ. सं. 8, गीताप्रेस गोरखपुर।
9. रामचरितमानस, टीकाकार-हनुमान प्रसाद पौद्धार, पृ. सं. 8, गीताप्रेस गोरखपुर।
10. रामचरितमानस, टीकाकार-हनुमान प्रसाद पौद्धार, पृ. सं. 12, गीताप्रेस गोरखपुर।
11. रामचरितमानस, टीकाकार-हनुमान प्रसाद पौद्धार, पृ. सं. 58, गीताप्रेस गोरखपुर।
12. रामचरितमानस, टीकाकार-हनुमान प्रसाद पौद्धार, पृ. सं. 200, गीताप्रेस गोरखपुर।
13. रामचरितमानस, टीकाकार-हनुमान प्रसाद पौद्धार, पृ. सं. 286, गीताप्रेस गोरखपुर।
14. दोहावली, अनुवादक-हनुमान प्रसाद पौद्धार, दोहा-268, पृ. सं. 75, गीताप्रेस गोरखपुर।
15. खेटकौतुकम्, टीकाकार-पं. दीनानाथ झा ज्योतिषाचार्य, पृ.सं. 2, चौखम्बा संस्कृत सीरीज ऑफिस, वाराणसी, संस्करण-द्वितीय।

## भारत में समन्वित ग्रामीण विकास की संकल्पना : एक अध्ययन

डॉ. अतुल कुमार दुबे

डॉ. प्रतिमा सिंह

1. विभागाध्यक्ष, भूगोल विभाग, हर्ष विद्या मंदिर पीजी कॉलेज, हरिद्वार, उत्तराखण्ड
2. असिस्टेंट प्रोफेसर, भूगोल विभाग, महाकौशल विश्वविद्यालय, जबलपुर, मप्र.

सारंशः-वर्तमान काल में विश्व भूगोल के क्षितिज पर सबसे नवीन एवं अत्यधिक व्यावहारिक शाखा के रूप में जो शाखा सर्वाधिक लोकप्रिय है उसका नाम है समन्वित ग्रामीण विकास। जिसके अंतर्गत क्षेत्रीय विकास को महत्वपूर्ण स्थान दिया जाता है। इस शाखा का उदय उसे समय हुआ जब परंपरागत भूगोल अवसान की तरफ उन्मुख था तथा उसका स्थान वैज्ञानिक निर्पक्षतावाद के अंतर्गत, नवीन चिंतन फलक के रूप में हो वैश्विक संगठन सांख्यिकी विश्लेषण के साथ ग्रहण कर रहा था। छठवे दशक के उत्तरार्ध में अन्य विधाओं की तरह भूगोल में भी जब सभी तत्वों का विश्लेषण समाजशास्त्र, अर्थशास्त्र से प्राप्त सिद्धांतों, परिकल्पनाओं एवं मात्रात्मक विधियों के आधार पर हो रहा था, तो उस समय भी लीक से हटकर मानव कल्याण का ही उद्देश्य रखने वाले कुछ भूगोलविद् क्षेत्रीय आधार पर व्यावहारिक समस्याओं के निराकरण का उपाय खोज रहे थे। किसी संदर्भ में गरीबीउन्मूलन, अन्याय एवं शोषण समापन, सामाजिक न्याय के आधार पर संसाधनों का बंटवारा, सामाजिक न्याय के आधार पर संसाधनों का बंटवारा, पिछड़ी से पिछड़े क्षेत्र का भी आर्थिक उन्नयन चाहने वाले कुछ भूगोलविद् अपने-अपने देश में भौगोलिक अध्ययन को इस समस्या के इर्द-गिर्द ही रखकर भूगोल के विश्लेषण का प्रयत्न कर रहे थे। विश्व के मानचित्र पटल पर विकासशील समन्वित ग्रामीण विकास ने अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया है। वर्तमान ग्रामीण भू दृश्य के स्वरूप में पूर्ण परिवर्तन लाने की प्रक्रिया को ही विद्वतजनों ने ग्रामीण विकास की संज्ञा प्रदान की है।

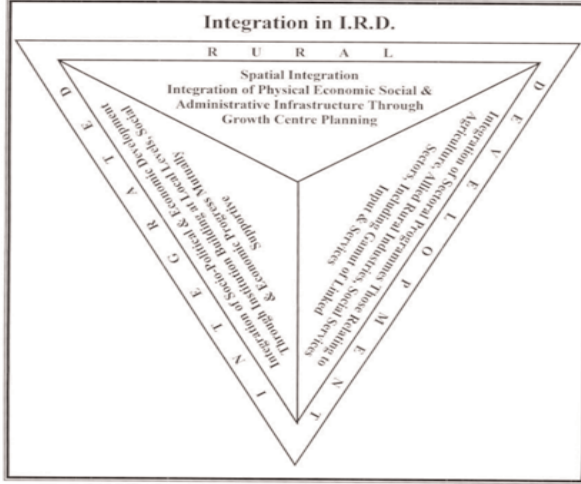
**बीजशब्दः**-समन्वित ग्रामीण विकास, विकासशील राष्ट्र, कार्यक्रम, आर्थिक, मानवीय, क्षेत्र, सामाजिक, नवीनीकरण, क्रियान्वयन, बहुउद्देशीय, आदि।

**प्रस्तावनाः**-भारत जैसे विकासशील राष्ट्र में, जहां भारत की 2011 की जनगणना के अनुसार 69 प्रतिशत भारतवासी गांव में निवास करते हैं जहां गांव की संख्या 649,481 है तथा जो प्राकृतिक आपदा (पाला, ओला, अतिवृष्टि, अनावृष्टि) एवं सामाजिक आर्थिक समस्याओं (गरीबी, बेरोजगारी, अशिक्षा, तुपोछा एवं भ्रष्टाचार) से ग्रसित है। वर्तमान समय में ग्रामीण क्षेत्रों में संतुलित विकास एक मूलभूत समस्या है। वर्तमान सामाजिक आर्थिक एवं राजनीतिक परिवेश प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप में विस्तृत ग्रामीण क्षेत्रों की विपन्नता का निराकार कर उसके चौमुखी विकास में सहायक हो सकने वाली नीतियों एवं उपायों पर निर्भर है। उसी का परिणाम है की स्वतंत्रता के उपरांत देश की राष्ट्रीय नीतियों एवं विकास परियोजनाओं तथा राष्ट्रीय स्तर के विविध कार्यक्रमों में ग्रामीण विकास की प्राथमिकता प्रदान की गई तथा विकास कार्यक्रमों के क्रियान्वयन हेतु विविध अभिगमनों को अपनाया गया है। उन पर कुछ धनराशि वे की गई है लेकिन यह सभी प्रयास संतुलित ग्रामीण विकास के

वांछित लक्ष्य को प्राप्त करने में सफल नहीं हो सके। नियोजन के चार पांच दशक पश्चात देश का अधिकांश ग्रामीण क्षेत्र वहीं खड़ा रहा है जहां से उसने अपनी विकास यात्रा प्रारंभ की थी। इन विषमताओं ने आर्थिक विकास की प्रक्रिया में वैषम्यता को जन्म दिया है तथा आर्थिक सामाजिक व क्षेत्रीय विषमताएं न्यून होने के स्थान पर बहुत प्रखर हो गयी है तथा एक बड़ा क्षेत्र व वर्ग विकास की मुख्य धारा से विलग रह गया है, जिसे समग्र एवं संतुलित विकास का स्वप्न साकार नहीं हो सका। इन समस्याओं के लिए निम्न कारण उत्तरदायी हैं-

1. विकास कार्यक्रमों में निर्बल बहुसंख्यकों की अपेक्षा तथा उनके स्थान पर संपन्न अल्पसंख्यकों की शक्ति एवं सद्दा का उपयोग करने वाले वर्गों की सुरक्षा देने वाली व्यवस्था का निर्माण।
2. पंचायती राज संस्थाओं को नौकरशाही के जाल में उलझा कर उसे निष्क्रियता प्रदान किया जाना।
3. विकास कार्यक्रमों का निर्माण क्रियान्वयन एवं संचालन देश की सांस्कृतिक विरासत एवं ऐतिहासिक अनुभवों को ध्यान में न रख कर अस्थायी एवं सतत् की सतह पर किया जाना।
4. नियोजन प्रक्रिया के स्वरूप का प्रखण्डीय होना और उसमें भू-वैज्ञानिक पक्षों की उपेक्षा।
5. नियोजन की सारी प्रक्रिया में भूगोलविदों, समाजशास्त्रियों एवं मनोवैज्ञानिकों की उपेक्षा तथा उसे अर्थशास्त्रियों की पैतृक संपत्ति के रूप में माना जाना है।
6. क्षेत्रीय एवं वर्गीय विपन्नता को सामाजिक परिणाम के स्थान पर प्राकृतिक तत्व मानकर उसे सतत बनाए रखना।
7. स्थानीय जन सहभागिता के नाम पर सांसद/विधायक/मंत्री को ही विभिन्न विकास कार्यक्रमों से संबद्धकर औपचारिकता का निर्वाह करना।
8. नियोजन के विभिन्न स्तर, बहु स्तरीय नियोजन एवं विकेंद्रीय नियोजन की प्रक्रिया को केवल सैद्धांतिक आधार पर अपनाया जाना।

देश की ज्वलंत समस्या उपरोक्त कमियों को दूर कर ग्रामीण क्षेत्र का समग्र विकास करना है। ऐसे अधिगम अपने जाने की आवश्यकता है, जिसके द्वारा उपरोक्त समस्याओं का निराकरण कर एक राष्ट्रीय व्यवस्था का निर्माण किया जा सके तथा देश के समस्त ग्रामों/जनों/प्रदेशों के समग्र संतुलित एवं संबंधित विकास के साथ में भूवैज्ञानिक संतुलन एवं सामाजिक आर्थिक समानता की पुनर्स्थापना की जा सके। लोगों के जीवन स्तर को ऊंचा उठाने के लिए सामाजिक सुविधाओं की उपलब्धता पर विशेष बल देते हुए वर्तमान सामाजिक मूल्यों, नीतियों एवं कमियों का आकलन करके ग्रामीण क्षेत्र के समग्र विकास हेतु पूर्णनिष्ठा एवं संकल्प के साथ प्रयास किया जाना चाहिए। दूसरे शब्दों



चित्र संख्या : 1

में ग्रामीण आर्थिक सामाजिक समानता, उत्पादन एवं उत्पादकता सामाजिक आर्थिक विकास में भूवैज्ञानिक संतुलन एवं विकास की प्रक्रिया में ग्रामीण लोगों की व्यापक भागीदारी आदि द्वारा ग्रामीण क्षेत्र का सर्वांगीण विकास किया जा सके। समन्वित ग्रामीण विकास ही ऐसा उपागम है जो स्थानीय आर्थिक एवं मानवीय संसाधनों की संभाव्य क्षमता एवं उत्पादकता का आदर्श उपयोग सुनिश्चित कर ग्रामीण उत्पादन एवं उत्पादकता में वृद्धि करके समाज के कठोर वर्गों पर विशेष ध्यान देते हुए सभी वर्गों का लाभप्रद रोजगार के अवसर प्रदान करने ग्रामीण क्षेत्र के कमजोर वर्ग के लोगों का राष्ट्रीय एवं स्थानीय विकास की धारा में समायोजित करने एवं विकास की प्रक्रिया में व्यापक सामूहिक जन सहभागिता उत्प्रेरित करने, बेहतर आर्थिक समानता सुनिश्चित करने, सामाजिक आर्थिक विकास में भूवैज्ञानिक संतुलन स्थापित करने तथा सामाजिक आर्थिक विकास, राजनीतिक संस्थागत एवं पर्यावरण के बहुकारकों को नियोजित प्रक्रिया में समाकलित करने व इस प्रकार ग्रामीण क्षेत्र का सम्यक संतुलित व सर्वांगीण विकास करने एवं लोगों के जीवन स्तर में गुणात्मक सुधार कर स्वावलंबी व आत्मनिर्भर समाज के निर्माण में सहायक हो सकता है।

समन्वित ग्रामीण विकास की संकल्पना ग्रामीण क्षेत्र के संतुलित विकास तथा सुसंगत विकास हेतु उपयुक्त रणनीति एवं कार्यक्रमों की निरंतर खोज में एक अभिनव नवाचार है। अस्सी के दशक में अपनी व्युत्पत्ति (संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा पारित प्रस्ताव संख्या 2681/1921) के पश्चात विभिन्न विकास नीति निर्धारकों नियोजकों एवं प्रशंसकों द्वारा ग्रामीण क्षेत्र के विकास हेतु एक ऐसे समन्वित उपागम की खोज करना है जिसमें विकास के समस्त पहलुओं, सांस्कृतिक, सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक पर्यावरण आदि का समावेश हो। ग्रामीण विकास का यह नवीन अंकुर है, जिसे आज प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से विकासशील देशों में महत्वपूर्ण स्थान पर रखा गया है। इस संदर्भ में विद्वानों एवं संगठनों ने निम्नलिखित विचार व्यक्त किए हैं।

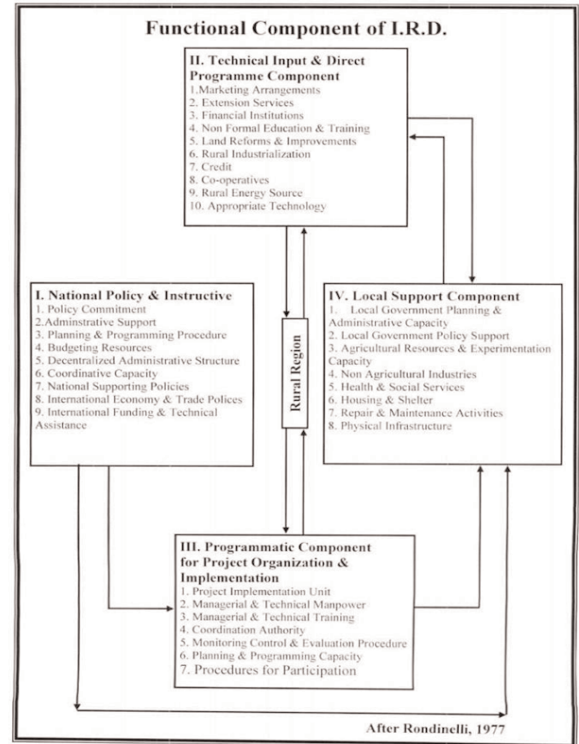
अफ्रीका महाद्वीप के सुव्यवस्थित विकास हेतु संगठित संयुक्त राष्ट्र संघ के आर्थिक आयोग (97) के अनुसार संबंधित ग्रामीण विकास उन नीतियों एवं परियोजनाओं का संगठन है जिससे संपूर्ण ग्रामीण जनसंख्या के जीवन स्तर को ऊपर उठाया एवं संपोषित किया जा सके। इसमें नवीनीकरण समाहित है जो उत्पादन शक्ति में प्राकृतिक पर्यावरण व अभिवृद्धि पर मानवीय निर्भरता की रूपरेखा में परिवर्तन लायेगा। मलिक<sup>7</sup> लाहौर में आयोजित के अंतरराष्ट्रीय संगोष्ठी में अपना मत व्यक्त करते हुए समन्वित ग्रामीण क्षेत्र की समस्याओं के

समाधान हेतु उपलब्ध संसाधनों (मानव भौतिक पदार्थ तकनीक एवं विज्ञान आदि) के समुचित उपयोग, सरकारी, अर्द्धसरकारी, गैर सरकारी संगठनों को सामूहिक रूप से संयुक्त कार्य करने तथा ग्रामीण विकास के निम्न उद्देश्यों की पूर्ति के लिए निर्मित विभिन्न कार्यक्रम एवं क्रियों के संयुक्त क्रियान्वयन को सम्मिलित किया है।

उमालेले<sup>8</sup> का मत है कि समन्वित ग्रामीण विकास अपेक्षाकृत अधिक संतुलित, विस्तृत एवं सर्वांगीण विकास का एक उपागम है। इसके द्वारा भौगोलिक, संस्थागत, आर्थिक व सामाजिक समन्वय स्थापित कर ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करने वाली संपूर्ण जनसंख्या के जीवन स्तर में सुधार एवं उनके विकास माध्यमों को आत्मनिर्भर बनाने का प्रयास किया जाता है।

वाटरस्टोन<sup>4</sup> समन्वित ग्रामीण विकास को एक समन्वित बहुउद्देशीय गतिविधि मानते हैं जिसके अंतर्गत कृषि उत्पादकता में वृद्धि के साथ-साथ ग्रामीण जनों के आर्थिक एवं सामाजिक उन्नयन हेतु आवश्यक सुविधाओं का विकास भी सम्मिलित है तथा इसका मुख्यउद्देश्य ग्रामीण जनों के भौतिक एवं सामाजिक कल्याण में अभिवृद्धि करना है। उन्होंने इसके अंतर्गत निम्नलिखित तत्वों का समावेश किया है-

1. कृषि पर आधारित लघु स्तर के हल्के उद्योग
2. स्थानीय सहयोग एवं आत्मनिर्भरता
3. श्रम आधारित गहन कृषि
4. श्रम प्रधान लघु विकास कार्य
5. विकास केन्द्रों का पदानुक्रम
6. समुचित संस्थागत एवं संगठनात्मक व्यवस्था



चित्र संख्या : 2

कोटर<sup>9</sup> के अनुसार समन्वित ग्रामीण विकास का तात्पर्य सामाजिक व राजनीतिक संस्थाओं एवं अवस्थाओं तथा उत्पादन की प्रक्रिया में परिवर्तन करके ग्रामीण क्षेत्र एवं मानवीय संबंधों में रूपांतरण किया जाना है। इस प्रकार उद्देश्य की पूर्ति हेतु उन्होंने एक क्रमबद्ध उपागम जिसमें सामाजिक, राजनीतिक

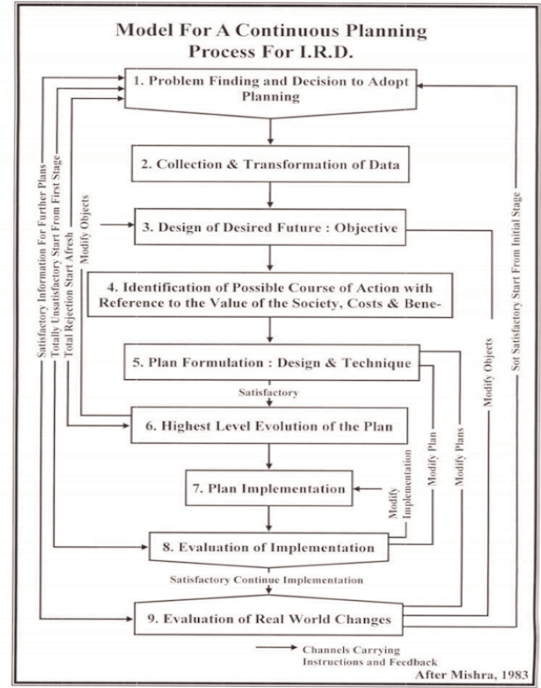
एवं तकनीकी कारकों के अंतर संबंधों का पर्याप्त विवेचन हो, को स्वीकार करने तथा ग्रामीण निर्धनों को एक समग्र तंत्र को समाकलित करने की सलाह दिया है। खाद्य एवं कृषि संगठन<sup>६</sup> के अनुसार समन्वित ग्रामीण विकास ग्रामीण क्षेत्र के गुणात्मक परिवर्तनों के नियोजन एवं क्रियान्वयन की एक संकल्पना है जो इस मान्यता पर आधारित है कि उत्पादन विधि एवं सामाजिक परिष्कार परस्पर विसंगत न होकर एक दूसरे को बल प्रदान करते हैं। अतः आवश्यक है कि सभी प्राकृतिक, प्राविधिक, आर्थिक एवं संस्थागत अंतर्संबंधों एवं विभिन्न समयों में होने वाले परिवर्तनों को दृष्टिगत रखते हुए उन्हें इस प्रकार संयोजित किया जाए कि वह ग्रामीण जनसंख्या के कल्याण एवं सामाजिक एकीकरण जैसे चरम उद्देश्यों की प्राप्ति में सहायक हो सके।

हॉन हालज<sup>७</sup> का मत है कि समन्वित ग्रामीण विकास एक अंतर्विषयक प्रक्रिया है जिसमें भूगोलविदों की एक विशिष्ट भूमिका होगी। ऐसी संकल्पना तब तक व्यावहारिक नहीं हो सकती जब तक विभिन्न तथ्यों की अन्योन्याश्रित तथा अनेक प्रभावों को अंतर्विषयक विवेचन के आधार पर सार्थक रूप से बृहत क्षेत्रीय आर्थिक योजना में सम्मिलित नहीं कर लिया जाता है। इस संदर्भ में इन्होंने ग्रामीण क्षेत्र की विकास प्रक्रिया में विभिन्न स्तर के केंद्र के भूवैज्ञानिक प्रभाव का उदाहरण देकर अपने विचारों को और अधिक प्रभावी बनाया।

यूयाना<sup>८</sup> का मत है कि समन्वित ग्रामीण विकास भौगोलिक संदर्भ में सामान्य ग्रामीण विकास से भिन्न है क्योंकि इसमें प्राकृतिक एवं मानवीय संसाधनों को संभाव्यताओं की गतिशीलता एवं उनके विकास व संसाधनों की समान अभिगम्यता तथा आय के न्यास संगत भौगोलिक वितरण पर अधिक बल दिया गया है। इसे परिभाषित करते हुए उनका कहना है कि यह परस्पर रूप से सहायक व अंतर्संबंधित अकृष्य तथा भौगोलिक दृष्टि से उल्लेखनीय किसी निश्चित उद्देश्य के क्रियाकलापों के समूह की एक श्रृंखला है जिसमें संपूर्ण तंत्र की उन्नति समाहित है। इस प्रकार इसे नियोजन कार्यक्रमों एवं उनके क्रियान्वयन की एक ऐसी संकल्पना समझना चाहिए जो ऐसा ढांचा एवं समझ प्रदान करती है जिससे विभिन्न घटकों के मध्य अनुबंधों एवं पारस्परिक संबंधों का अभिज्ञान होता है। फ्रेड फ़उंडेशन के एक अध्ययन के अनुसार समन्वित ग्रामीण विकास केवल कृषि एवं उससे संबंधित क्रियाकलापों के समन्वित विकास की योजना ही नहीं है अपितु इसमें विपणन, नगरी केंद्र, सेवा केंद्र एवं कृषि पर आधारित उद्योगों का विकास भी सम्मिलित है। किसी प्रकार विकास क्रियाकलापों का समन्वय एवं रोजगार को उत्पन्न करने वाले क्रियाओ तक ही सीमित नहीं है बल्कि इसमें उनके अग्रभागों एवं पश्चगामी अनुबंधों को भी सम्मिलित किया जाता है।<sup>९</sup>

समन्वित ग्रामीण विकास की संकल्पना का विदेशी विद्वानों एवं संगठनों के साथ-साथ भारतीय विद्वानों ने भी विश्लेषण किया है। सेन का मत है कि समन्वित ग्रामीण विकास का तात्पर्य किसी प्रदेश के संतुलित विकास हेतु उपयुक्त स्थान पर सामाजिक आर्थिक सेवाओं के संकेंद्रण से है। इस प्रक्रिया में विभिन्न सामाजिक आर्थिक क्रियाओ की भूवैज्ञानिक, अन्योन्याश्रित एवं समन्वय की प्रक्रिया पर विशेष बल दिए जाने की आवश्यकता है। आजाद<sup>१०</sup> का मत है कि समन्वित ग्रामीण विकास द्वारा स्थानीय भौतिक, जैवीय एवं मानवीय संसाधनों का आदर्श उपयोग एवं संस्थागत, संरचनात्मक, संगठनात्मक अभिवृद्धि से संबंधित परिवर्तन तथा सामाजिक अवस्थापनाओं को प्रतिष्ठापित कर ग्रामीण क्षेत्र एवं ग्रामीण जनसंख्या का विकास हो। यह विशिष्ट प्रकारों को समुचित स्थानों पर स्थापित कर आर्थिक एवं सामाजिक क्रियाओ के विकेंद्रीकरण का ढांचा प्रस्तुत करता है।

शर्मा एवं मल्होत्रा<sup>११</sup> के अनुसार यह एक गत्यात्मक अवधारणा है जो ग्रामीण अर्थव्यवस्था की दशाओं एवं आवश्यकताओं के अनुसार सतत



चित्र संख्या : 3

प्रयत्नशील है। इसकी रणनीति पैकेज है, इसके उद्देश्य ग्रामीण उत्पादन एवं उत्पादकता में वृद्धि, सामाजिक, आर्थिक, विकास में भूवैज्ञानिक संतुलन, विकास की प्रक्रिया में विस्तृत जन सहभागिता आदि।

**समन्वित ग्रामीण विकास के उद्देश्य:-**

समन्वित ग्रामीण विकास संकल्पना की उपरोक्त व्याख्या से इसके मुख्य निम्नलिखित उद्देश्य परिलक्षित होते हैं-

1. नवीनतम प्राविधि द्वारा क्षेत्रीय संसाधनों का सर्वेक्षण, मूल्यांकन एवं आदर्श उपयोग कर ग्रामीण उत्पादन एवं उत्पादकता में वृद्धि करना तथा पारिस्थितिक संतुलन बनाए रखना।
2. ग्रामीण समस्याओं जैसे, भूमि सुधार, भूमि संरक्षण, बाढ़ एवं सूखा, जल प्रबंध, वृक्षारोपण, भूमि का उपयोग आदि के समाधान हेतु उपाय बताना।
3. ग्रामीण गरीबों को स्थानीय एवं राष्ट्रीय विकास की धारा में समन्वित करना तथा विकास की प्रक्रिया में उनकी व्यापक जन सहभागिता को प्रोत्साहित करना।
4. क्षेत्र में लक्षित वर्गों पर विशेष ध्यान केंद्रित करते हुए सबसे गरीब व्यक्ति से लेकर सभी को रोजगार के अधिक अवसर प्रदान करने की दृष्टि से यथा संभव क्षेत्रीय संसाधनों पर आधारित श्रम प्रधान लघु एवं कुटीर उद्योगों के साथ ग्रामीण दस्तकारों, बुनकरों एवं शिल्पकारों के परंपरागत कुटीर उद्योगों का विकास करना।
5. विस्तृत पैमाने पर सामाजिक, आर्थिक समानता सुनिश्चित करना।
6. क्रमबद्ध बहुप्रखंडीय, बहु वर्गीय एवं बहुस्तरीय समन्वय द्वारा विकास के बहुआयामों (आर्थिक, राजनीतिक, सामाजिक, संस्थागत एवं पर्यावरण) को विकास प्रक्रिया के एकांकी रूप में समाकलित करना जिनसे ग्रामीण निवास का समग्र सर्वांगीण, व्यापक एवं संतुलित विकास प्रस्तावित कर जीवन की गुणवत्ता में सुधार किया जा सके।
7. आधारभूत
8. अवस्थापनाओ, सेवाओं एवं सुविधाओं का उपर्युक्त स्थलों पर संकेंद्रण।

9. संवर्गीय एवं कृषि कार्यों के विकास हेतु क्षेत्र में निवेश आपूर्ति, परंपरागत यंत्रों में सुधार, नवीनतम प्रौद्योगिकी का प्रसार तथा कृषिगत भूमि का तत्त्वगति विश्लेषण करना।

**निष्कर्ष:-** उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि समन्वित ग्रामीण विकास ग्रामीण क्षेत्र के समग्र व्यापक संतुलित एवं सम्यक विकास से संबंधित है जिसे ग्रामीण जीवन के विविध पक्षों के प्रकार्यात्मक, भूवैज्ञानिक सामाजिक संस्थागत प्राविधिक पारिस्थितिकी एवं कालिक समन्वय द्वारा प्राप्त किया जाता है। इसका मुख्य उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्र के संतुलित एवं सर्वांगीण विकास हेतु भौतिक परिवेश में सामाजिक आर्थिक क्रियाओं का अनुकूलतम स्थान निर्धारण एवं सामाजिक प्रगति के माध्यम से उर्ध्वमुखी एवं स्वावलंबी समाज का सृजन करना है। यह ग्रामीण विकास के किसी एक आयाम को विकसित करने का प्रयास नहीं करता है बल्कि समस्त आयामों को उनकी अन्योन्यक्रिया को अपने में समाहित करते हुए विकास के लिए संयुक्त एवं समिश्रपूर्ण रूप में एक साथ विकसित करने का अभिगम प्रस्तुत करता है।

**संदर्भ सूची:-**

1. मैथानी, बी०पी० एंड पी०सी० तिवारी 1982- स्पेशियल प्लानिंग फॉर इंटीग्रेटेड रुरल डेवलपमेंट, कॉन्सेप्ट टेक्निक और एप्लीकेशन, जर्नल ऑफ़रुरल डेवलपमेंट, वा, 1, पेज 125.
2. मलिक, एम०एस०, 1973- इंटीग्रेटेड रुरल डेवलपमेंट इन पाकिस्तान, पेपर रिप्रेजेंटेट एट इंटरनेशनल सेमिनार ऑ इंटीग्रेटेड रुरल डेवलपमेंट, लाहौर.
3. उमालेले, 1974- द डिवीज़न ऑफ़रुरल डेवलपमेंट इन एनालिसिस का प्रोग्राम एंड प्रोजेक्ट इन अफ्रीका, जॉनहॉकिंसन यूनिवर्सिटी, वाल्टीमोर, पेज 20.
4. वाटर्सटन, ए. 1974- ए अवलेबुल मॉडल का रुरल डेवलपमेंट, फ़ाइनेंस एंड डेवलपमेंट.
5. कोर्टर, एच०आर०, 1974-सम ऑब्जरवेशन ऑफ़द बेसिक प्रिंसिपल्स एंड जर्नल स्ट्रेटजी, ऑफ़इंटीग्रेटेड रुरल डेवलपमेंट एफ़०ए०ओ० मासिक बुलेटिन, ऑफ़एग्रीकल्चरल इकोनॉमिक्स एंड स्टैटिक्स पेज 29.
6. एफ़०ए०ओ० फ़िक्स डिव, 1975- की इसूज, इंटीग्रेटेड रुरल डेवलपमेंट, रोम, इटली, पृष्ठ 4.
7. हॉनहाल्ज, जे०एच०, 1979- इंटीग्रेटेड रुरल डेवलपमेंट, एजसीन बाई ए ज्योग्राफ़र इन हॉनहाल्ज(इ डी.) एप्लाइड साइंस एंड डेवलपमेंट, स्पेशलाइज्ड इसू, वॉल्यूम, वियना, पृष्ठ 26.33.
8. उयंगा, जे०टी० 1980- इंटीग्रेटेड रुरल एरिया डेवलपमेंट ए ज्योग्राफ़िक एप्रोच, आर०बी०मंडल इत्यादि रिसेंट ट्रेड्स और कॉन्सेप्ट इन ज्योग्राफी, नई दिल्ली.
9. थीममेह, जी०, 1983- ब्लॉक लेवल प्लानिंग, कॉन्सेप्ट पब्लिशिंग कंपनी, नई दिल्ली, पृष्ठ 131.
10. आजाद, आर०एन० 1977- इंटीग्रेटेड रुरल डेवलपमेंट, एस०के० शर्मा डायनामिक ऑफ़डेवलपमेंट : एन इंटरनेशनल पर्सपेक्टिव, कॉन्सेप्ट पब्लिशिंग कं० नई दिल्ली.
11. शर्मा, एस०के० एंड मल्होत्रा, 1977- इंटीग्रेटेड रुरल डेवलपमेंट- एप्रोच स्ट्रेटजी एंड पर्सपेक्टिव, अभिनव पब्लिकेशन न्यू दिल्ली.

# भिखारी ठाकुर के नाटकों में सामाजिक न्याय और व्यक्तिगत स्वतंत्रता

अजय सुब्बा  
डॉ. बृजेश कुमार

1. शोधार्थी, हिन्दी विभाग, नागालैंड विश्वविद्यालय, कोहिमा परिसर, नागालैंड
2. सहायक आचार्य, हिन्दी विभाग, नागालैंड विश्वविद्यालय, कोहिमा परिसर, नागालैंड

शोध सारांश:-भिखारी ठाकुर भोजपुरी लोक-साहित्य के महान साहित्यकार थे। वे मूलतः बिहार के रहने वाले थे। भिखारी ठाकुर एक महान लोक-कलाकार व नाटककार थे। उन्होंने भोजपुरी साहित्य में रंगमंच और संगीत के माध्यम से भोजपुरी समाज में नयी दिशा प्रदान किए। भिखारी ठाकुर की रचनाएं अक्सर ग्रामीण जीवन के संघर्षों और आकांक्षाओं पर केंद्रित रहा है। उन्होंने अपने नाटक मंडली से केवल मनोरंजन नहीं किया है, बल्कि अपने प्रदर्शन से अपने समाज में व्याप्त समाज की वास्तविकताओं को दिखाया है। उन्होंने अपने लेखन और नाटक मंडली के द्वारा भोजपुरी साहित्य को नई दिशा दी है। भिखारी ठाकुर का जन्म एक साधारण नाई परिवार में 18 दिसंबर सन् 1887 को बिहार के सारन जिले के दियारा गाँव में हुआ था। भिखारी ठाकुर पढ़े लिखे नहीं थे एना ही उन्हें पढ़न-लिखने में मन लगता था एफिर भी उन्होंने शब्दों को जोड़कर लिखना सिखा। भिखारी ठाकुर की खास बात यह थी कि वे अपने समाज के प्रति बहुत जागरूक थे। बहुत छोटे उम्र से ही वे अपने समाज के समस्याओं के प्रति सजग थे। यही कारण था कि समाज में व्याप्त सामाजिक कुरीतियों पर उनकी पैनी नजर थी जो उनके नाटकों में चित्रित है। उन्होंने कुल 12 नाटकों की रचना की और 12 से अधिक भजन-कीर्तन-गीत-कविता की रचना की। प्रस्तावित आलेख उनके चुनिंदा नाटकों (बिदेसिया, बेटी बियोग) बेटी बेचवाए विधवा विलाप, कलयुग प्रेम, गंगा स्नान और पुत्र वद्ध को केंद्र में रखा गया है।

**बीज शब्द:-**समस्या, रोजगार, रंगमंच, पलायन, विवाह, ग्रामीण, बिदेसिया, परिवार, अधिकार, संघर्ष, लगाव, पितृसत्तात्मक, संपत्ति, मजदूर, अभाव, मंडली, ग्रामीण, जीवन, संघर्ष, आकांक्षा, व्याप्त, वास्तविकता, समाज, जागरूक, कुरीतियाँ।

**मूल आलेख:-**बिहार में हमेशा से ही रोजगार की समस्या रही है। यह रोजगार के अभाव ही है जिसके कारण बिहार के वाशिंग्टन को पलायन करने में मजबूर होना पड़ता है। भिखारी ठाकुर भी इसके शिकार हुए। उनके समय में रोजगार के लिए दो राज्यों का नाम बहुत महशूर था। असम और बंगाल। बिहार के ज्यादातर लोग इन दो राज्यों में नौकरी की तलाश में जाते थे, सो भिखारी ठाकुर भी गए। वे भी बंगाल गए। वहाँ के मेदिनीपुर जिला में वे देहारी मजदूर की तरह काम करते और शाम होते ही अपने गाँव के लोगों के साथ रामलीला देखने निकलते। रामलीला देखना उन्हें बहुत पसंद था। देखते-देखते रंगमंच और नाटक का उनपर ऐसा खुमार छाया कि उन्होंने कुछ करने की टान ली। उन्होंने मन बना लिया कि अपने गाँव जाएंगे और रंगमंच की स्थापना करेंगे। जैसा कि अक्सर होता है, शुरुआती दौर में उन्हें भी सभी बड़े खाब देखने वाले की तरह बहुत सी चुनौतियों का सामना करना पड़ा। यह वह समय

था जब स्त्रियों का नाचना-गाना अच्छा नहीं माना जाता था। किन्तु भिखारी ठाकुर ने मन बना लिया था। सो बहाल इस व्यवधान के कारण कैसे रुक जाते! तय यह हुआ कि अपने नाटकों के मंचन के लिए स्त्री पात्र के किरदार भी लड़कों द्वारा निभाए जाएंगे। बाद में चलते इन्हीं नाटकों अथवा नाच को लौंडा नाच की संज्ञा दी गई।

साहित्य क्यों? और किसके लिए? सदियों से इस बात पर बहस रही है। कोई इसे 'स्वातः सुखाय का मामला मानता है तो कोई इसके लोकोन्मुखी रूप का तलबगार है।' यानि कला कला के लिए या कला समाज के लिए की बहस आज की नहीं है। जहाँ तक भिखारी ठाकुर की रचनाओं की बात है, उनके लिए कला का मूल उद्देश्य है, समाज का हित। इसलिए उनके रचनाओं से गुजरते हुए हम अधिकांशतः समाज के ताने-बाने को ही देख पाते हैं। उनका दुरूख उनका सुख सबकुछ उनके रचनाओं में देखने को मिलता है। और यह दुख और उनका सुख उनका निजी नहीं है। बिना 'बिदेसिया' नाटक का जिक्र किए हम उनकी रचनाओं से वाबस्ता नहीं हो सकते। यह नाटक तात्कालिक समय के ग्रामीण भारतीय समाज की वास्तविकता और प्रवासी मजदूरों की संघर्ष और समस्या को उजागर करता है। इस नाटक में भिखारी ठाकुर ने पति-पत्नी के संबंधों में आए भावनात्मक उतार-चढ़ाव, अकेलेपन, त्याग और कठिनाई का मार्मिक चित्रण किया है। 'बिदेसिया' नाटक में मुख्य पात्र 'बिदेसी' है, जो अपने घर की आर्थिक स्थिति सुधारने के लिए कोलकत्ता जाने का फैसला करता है। 'बिदेसी' अपने समाज की उस पीढ़ी का प्रतिनिधित्व करता है, जहाँ पुरुष मजदूरी में अपने घर-परिवार को छोड़कर परदेश जाने को विवश होते हैं। जैसा कि पहले भी जिक्र किया जा चुका है, कि भिखारी ठाकुर का कुछ भी निजी नहीं है। जाहिर है इस नाटक में भी केवल एक व्यक्ति की कहानी नहीं दिखाया है, बल्कि पूरे समाज की व्यथा कथा को दिखाया गया है। जिसमें गरीब मजदूर बेहतर भविष्य की तलाश में अपने घर-परिवार से दूर होने पर मजबूर होते हैं। भिखारी ठाकुर ने इस नाटक में एक बड़े सामाजिक मुद्दे को पेश किया है। वह यह कि पुरुष अपने परिवार से बिछड़ते हैं और परिस्थितिवश कभी-कभी अपनी प्राथमिकताओं से भी बाध्य होते हैं। इस नाटक में यह दिखाया है कि 'बिदेसी' की विवाह के कुछ दिन बाद ही वह कोलकत्ता चला जाता है। कोलकत्ता में वह एक वैश्या के प्रति आकर्षित हो जाता है। यह झुकाव केवल 'बिदेसिया' की कमजोरियों को ही नहीं दर्शाता बल्कि, प्रवासी मजदूरों के नैतिक पतन हुए अकेलेपन को भी दर्शाता है। यह प्रवासियों ही उस पक्ष को सामने लाता है, जो आमतौर पर अनदेखा रह जाता है। पति-पत्नी के बीच विश्वास और समर्पण की कमीए वफ़ादारी पर संकट और व्यक्तिगत इच्छाओं के लिए परिवार की उपेक्षा इन सभी तत्वों के माध्यम से इस नाटक को एक गहरी सामाजिक और मानवीय

दृष्टिकोण प्रदान करता है। नाटक का अंत भावनात्मक रूप से जटिल है, जहाँ 'बिदेसी' अपनी 'प्यारी सुंदरी' के पास लौट आता है। लेकिन कहानी यहाँ अंत नहीं होता है। उसके पीछे-पीछे उसकी दूसरी पत्नी और बच्चा भी गाँव तक पहुँच जाते हैं। और 'प्यारी सुंदरी' के पास उन्हें स्वीकारने के सिवा कोई विकल्प नहीं बचता। उन्हें स्वीकार करना 'प्यारी सुंदरी' की सहनशीलता और मजबूरी को दर्शाता है।

भिखारी ठाकुर के इस नाटक के माध्यम से हमें पति-पत्नी के रिश्तों के भावनात्मक पहलुओं का परिचय मिलता है। साथ ही साथ कठिनाई और प्रवास की कष्टप्रद स्थिति को भी बखूबी जान पाते हैं। 'बिदेसिया' नाटक उन परिवारों की पीड़ा को दर्शाता है, जो अपने प्रियजनों को खोते हैं। तथा उन प्रवासी मजदूरों की दुर्दशा की पड़ताल करता है, जो अपने परिवार से दूर बाहरी प्रभावों में फँस कर अपनी मूल जिम्मेदारियों को भी भूल जाते हैं। इस प्रकार यह नाटक एक ऐसी कृति है, जो आज भी समाज में प्रासंगिक बनी हुई है। जहाँ एक तरफ पारिवारिक रिश्तों की जटिलता है तो वहीं दूसरी ओर प्रवासी मजदूरों के संघर्षों का उद्घाटन हमें देखने को मिलता है।

भिखारी ठाकुर का नाटक 'बेटी बेचवा' ग्रामीण क्षेत्र के सामाजिक रूढ़िगत परंपरा पर व्यंग्य करता है। ग्रामीण भारतीय समाज में व्याप्त रूढ़िवादिता, पितृसत्तात्मक सोच और महिलाओं के साथ होने वाले अन्याय पर करारा प्रहार करता है। 'बेटी बेचवा' नाटक में भिखारी ठाकुर ने उन समस्याओं को उजागर किया है, जिनसे निचली जातियाँ और गरीब घर की बेटियाँ गुजरती हैं। यह नाटक उनके अधिकारों, उनके सम्मान के फँसलों में उनकी भूमिका की वकालत करता है, साथ ही बेमेल विवाह के प्रति भी करारा प्रहार करता है। 'उपातो' इस नाटक की मुख्य केन्द्रीय किरदार है। उसके माता-पिता गाँव के एक पंडित से मिलकर उसकी विवाह एक बुजुर्ग से तय कर देते हैं। यह एक किस्म का सौदा था कि उन्हें बदले में कुछ पैसा भी मिल जाए और बेटी की विवाह भी हो जाए। बेचारी छपातोष रोती हुई अपने माता-पिता से कहती है।

'सउदा बेसाहे। में टगइल हो बाबूजी।  
केइ अइसन जादू कइलाएपागल तोहार मति भइलय  
नेटी<sup>9</sup> काटि के बेटी भसिअवले<sup>10</sup> हो बाबूजी।  
रोपेया गिनाइ लिहलेए पगहा<sup>10</sup> धराइ दिहलेय  
चेरिया के छेरिया<sup>12</sup> बनवले हो बाबूजी।'

उस समय भोजपुरी समाज में दहेज प्रथा की चलन बहुत ज़ोरों पर थी। यही कारण था कि 'उपातो' की विवाह जबरन करादी गई। इस नाटक में भिखारी ठाकुर ने विशेष रूप से उस पितृसत्तात्मक व्यवस्था को दर्शाया है जहाँ बेटी को केवल आर्थिक बोझ के रूप में देखा जाता है। 'उपातो' की विवाह एक बूढ़े और धनी व्यक्ति 'झाँटूल' के साथ केवल कुछ पैसे के लिए कराई जाती है। यहाँ एक लड़की (उपातो) की इच्छा और उसके अधिकारों को पूरी तरह अनदेखा किया गया है। यह उस समय की मानसिकता का परिचय देता है, जहाँ बेटियों की इच्छाओं के लिए कोई स्थान नहीं था। इस नाटक में भिखारी ठाकुर ने उस समय के भोजपुरी समाज में व्याप्त प्रचलित दहेज-प्रथा की भी कड़ी आलोचना की है। 'उपातो' को भी इस वरुन दहेज-प्रथा का शिकार होना पड़ता है। किन्तु भिखारी ठाकुर ने समाज में मौजूद ऐसे वर्ग को भी दिखाया है, जो इस प्रथा का विरोध करता है। यहाँ एक किरदार है जिसका नाम है 'गोतिया'। गोतिया उपातो की जबरन विवाह पर उसके माता पिता से कहते हैं।

'बेटी बेंचि के धइले माल। तोहरा सिर पर चडल काल ॥  
चडल बंस के पानी गइल। जब से तोहरा जबाना। भइल ॥  
अइसन बंस में जमले कूर<sup>9</sup>। दया,धरम के कइले दूर ॥'

लेकिन उपातो की माँ उसे उनके घर के मामलों में दखलंदाज न करने की धमकी देती है। हालांकि वर्तमान समय में दहेज प्रथा बहुत कम हुआ है। इसका कारण है कि लोग शिक्षित हो रहे हैं। अब किसी भी लड़की की विवाह इस तरह नहीं कराया जाता है।

'विधवा विलाप' नाटक 'बेटी बेचवा' नाटक के दूसरे भाग के रूप में भिखारी ठाकुर ने लिखा है। इस नाटक में भिखारी ठाकुर ने भारतीय समाज की उस पिछड़े मानसिकता को दिखाया है जहाँ लोग आर्थिक मजबूरियों के चलते अपनी बेटी की विवाह किसी अथेड़ उम्र के व्यक्ति से कराते थे। ताकि उन्हें दहेज देना न पड़े। भिखारी ठाकुर ने इस नाटक के माध्यम से भारतीय समाज की एक और बिकराल समस्या पर अपनी कलम चलाई है। वह समस्या है विधवाओं की स्थिति। लगभग 70 साल पहले लिखे गए इस नाटक को यदि हम थोड़ी देर के लिए बगल में रख दें और आज भी ग्रामीण पृष्ठभूमि से आने वाली विधवा स्त्रियों की दिशा एवं दशा पर गौर करें तो यह अलग से कहने की जरूरत नहीं कि अलगाव और सामाजिक बहिष्कार की मार वे 2024 में भी झेल रहे हैं। आइए 'विधवा विलाप' नाटक पर पुनरुआते हैं। हम देखते हैं कि 'उपातो' (बूढ़ी काकी) भी इस अलगाव के दंश को झेलने के लिए बाध्य है। अकस्मातरु ही 'निर्मला' का चरित्र याद हो जाता है। प्रेमचंद रचित 'निर्मला' में भी जो निस्वार्थ बोध हमें देखने ओ मिलता है। वहीं 'उपातो' में भी हम देख पाते हैं।

यह नाटक पितृसत्तात्मक मानसिकता और रूढ़िगत मानसिकता पर प्रहार करता है, जो विधवाओं को समाज में एक बोझ या कलंक के रूप में देखता है। निसंतान विधवाओं की तो इस समाज में और गत होती है। अथेड़ उम्र व्यक्ति से विवाह कर दी गई 'उपातो' जल्द ही विधवा हो जाती है। उसका पति पहले से ही बीमार रहता है। मृत्यु उपरांत वह अपने माता-पिता को उलहाना देते हुए कहती है।

'रोकसद होके घरे गइल। अब सुनहू जे आगे भइल ॥  
झाँटू के मिरतू हो गइल। एक आइ अस खबर कइल ॥  
पटिदारी में झगरा होता। बहे चाहत बा खून के सोता ॥  
जब से माल भइल मुसमाती। तब से जूध होखन दिन-राती ॥'

समाज में अक्सर विधवा हो जाने पर स्त्रियों को तमाम अत्याचारों का सामना करना पड़ता है। खासकर तब जब उसका पति निसंतान मर जाता है। जब भी हमारे समाज में यदि कोई स्त्री बिना संतान के विधवा हो जाती है, तो समाज में उसे अशुभ और कलंक दृष्टि से देखा जाता है। इस कारण न केवल अकेलेपन का सामना करना पड़ता है, वरन अपनों से ही धोखा मिलता है। 'बूढ़ी काकी' (उपातो) अपनी घर की देखभाल के लिए अपने गोतिया के पुत्र और उसकी पत्नी (उदबास और उदबास बहू) को अपने पास रखती है। वह अपनी संपत्ति का प्रबंधन करने के लिए उन्हें घर का चाबी सौंप देती है। किन्तु दोनों की लालच और चरित्र अत्यंत नीच होता है। दोनों 'बूढ़ी काकी' की संपत्ति पर नजर गढ़ाते हैं। वे दोनों 'बूढ़ी काकी' (उपातो) को तीर्थ यात्रा के बहाने से घर से दूर ले जाने और रास्ते में उसका वध कर उसकी संपत्ति हड़पने की योजना बनाते हैं। यह प्रसंगों समाज में बुजुर्गों के प्रति हो रहे अत्याचारों की ओर इशारा करता है जहाँ नई पीढ़ी उन्हें आदर-सम्मान देने की बजाय एक बोझ समझकर उनकी संपत्ति पर अधिकार जमाने के लिए हर संभव प्रयास करता है।

भिखारी ठाकुर ने इस नाटक में समाज की रूढ़िवादी मानसिकता की आलोचना की है, जहाँ विधवाओं के अधिकारों का हनन होता है। हालांकि ईस्ट इंडिया कंपनी के गवर्नर जेनरल लॉर्ड कनिंग के समय भारत में 26 जुलाई 1856 को 'हिन्दू विधवा पुनर्विवाह' अधिनियम पारित हो चुका था। इस

अधिनियम को पारित करने में समाज सुधारक ईश्वर चंद्र विद्यासागर की अहम भूमिका रही। फिर भी भारत के कई ग्रामीणक्षेत्रों में विधवाओं के लिए दूसरी विवाह का अधिकार नहीं था। उन्हें जीवन के सुख-सुविधाओं से वंचित किया जाता है। 'उपातो' को भी इसी प्रकार की अमानवीय और रूढ़िवादीता का सामना करना पड़ा था। यदि समाज विधवाओं को पुनर्विवाह की अनुमति देते तो शायद 'उपातो' को इस दुरूखद स्थिति से गुजरना नहीं पड़ता।

'कलयुग प्रेम', यह नाटक भिखारी ठाकुर ने अपने तत्कालीन समाज की स्थिति को देखते हुए लिखा है। उस समय लोग गाँव में अत्यधिक नशा का सेवन करते थे। इस कारण घर का माहौल कभी भी अनुकूल नहीं रहता था। भिखारी ठाकुर ने इस नाटक के द्वारा समाज में नशाखोरी, परिवार के टूटते रिश्ते और घरेलू हिंसा के मुद्दों पर गहरी व्यंग्यात्मक दृष्टि डाला है। इस नाटक के माध्यम से भिखारी ठाकुर ने ग्रामीण समाज में फैली उन कुरीतियों और नैतिक पतन को दर्शाया है, जो पारिवारिक विघटन का कारण बनते हैं। किस तरह अत्यधिक नशा का सेवन करने से घर, परिवार और समाज के प्रति इंसान को गैरजिम्मेदार बना देता है। इस नाटक में 'नशाखोरी' के द्वारा यह दिखाया गया है कि नशे की लत न केवल एक व्यक्ति के जीवन को बर्बाद करता है, बल्कि उसके पूरे परिवार को भी प्रभावित करता है। घर का माहौल अस्थिर और अशान्ति हो जाता है, जिससे न केवल घर की आर्थिक स्थिति बिगड़ती है, बल्कि बच्चों पर भी इसका गंभीर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। इस नाटक में एक बेटे का घर छोड़ना इस बात का सूचक है कि नशे और घरेलू अशान्ति से बच्चे प्रभावित होते हैं और उन्हें एक सुरक्षित और सकारात्मक वातावरण की कमी महसूस होती है।

इस नाटक में नशाखोरी के द्वारा दूसरी पत्नी को घर में लाना उस समय के समाज में पुरुषों के गैर-जिम्मेदारी व्यवहार और उनके अनैतिक रिश्तों को दर्शाता है। भिखारी ठाकुर ने समाज की इस प्रवृत्ति पर भी तीखा कटाक्ष किया है। पुरुष किस तरह अपने व्यक्तिगत इच्छाओं के कारण परिवार को तोड़ देते हैं। दूसरी पत्नी का घर में आना घर के माहौल को और अधिक अस्थिर बनाता है साथ ही बच्चों पर इसका नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। भिखारी ठाकुर ने इस नाटक के माध्यम से यह भी दिखाने का प्रयास किया है, कि बच्चों के व्यक्तिगत निर्माण में माता-पिता की कितनी बड़ी भूमिका रहती है। घर का खराब माहौल के कारण बच्चों के व्यक्तित्व पर बहुत ज्यादा नकारात्मक प्रभाव पड़ता है, जिससे वे एक स्वस्थ मानसिकता और नैतिकता का विकास नहीं कर पाते हैं। हम कह सकते हैं, कि इस नाटक में भिखारी ठाकुर ने समाज में व्याप्त नशाखोरी, अनैतिक संबंध और पारिवारिक विघटन पर करारा व्यंग्य किया है। माता-पिता को अपने बच्चों के लिए एक सुरक्षित और सकारात्मक वातावरण प्रदान करना चाहिए जिससे उनका व्यक्तित्व संतुलित और सशक्त बन सके।

'गंगा स्नान' नाटक में भिखारी ठाकुर ने समाज में अपने बहू और बेटे द्वारा अपने बुजुर्गों के प्रति घटते संवेदनशीलता को दिखाया है। 'गंगा स्नान' का हिन्दू समाज में महत्वपूर्ण स्थान है। गंगा को हिन्दू समाज में माँ का दर्जा दिया गया है। गंगा स्नान को हिन्दू समाज में पवित्र और जीवन के पापों को धोने का प्रतीक माना जाता है। इस नाटक में भिखारी ठाकुर ने बेटे और बहू द्वारा एक माँ के प्रति किए दुर्व्यवहार का उजागर किया है। यह आज समाज में बुजुर्गों के प्रति घटते आदर और प्रेम पर करारा प्रहार है। इस नाटक में एक बूढ़ी सास है जिनके प्रति बहू का अत्यंत अपमानजनक और अमानवीय व्यवहार है। आज आधुनिक और आत्म-केंद्रित सोच ने पूरे परिवारों के बुजुर्गों के प्रति सम्मान और सहानुभूति में कमी आई है। भिखारी ठाकुर ने इस नाटक में यह भी दिखाने का

प्रयास किया है, कि आज के भौतिकवाद समाज में अधिकतर लोग अपने माता-पिता को बोझ समझने लगे हैं। उन्हें केवल हम अपने स्वार्थ के कारण अपने साथ रखते हैं। 'गंगा स्नान' में 'मलेछू' अपने पत्नी की बातों में आकार अपनी माँ के प्रति बेरुखी और कठोरता से पेश आता है। भिखारी ठाकुर ने इस नाटक के द्वारा यह दिखाने का प्रयास किया है कि एक बेटा अपनी पत्नी के प्रभाव में आकर अपनी माँ के प्रति संवेदनहीन हो जाता है। किन्तु इस नाटक में 'मलेछू' को बाद में अपनी बात के लिए बहुत पछतावा होता है। भिखारी ठाकुर ने इस नाटक को एक प्रतीक के रूप में प्रस्तुत किया है, जहाँ गंगा माँ के माध्यम से न केवल पवित्रता का संदेश दिया है, अपितु यह भी बताने का प्रयास किया है, कि हमारे जीवन में एक माँ का स्थान कितना सर्वोच्च है।

नाटक 'पुत्र वद्ध' एक साधारण परिवार पर केंद्रित है। इस नाटक में समाज में व्याप्त पारिवारिक और सामाजिक कमजोरियों को उजागर किया गया है। यह नाटक एक साधारण संघर्ष, प्रेम, वफ़ादर और विश्वासघात की कथा को प्रस्तुत करता है। नाटक में 'चपाटराम' मुख्य पात्र है जो बहुत ही सरल और सीधा-साधा व्यक्ति है। उसने दो शादियाँ की हैं। 'बड़की' उसकी बड़ी पत्नी है, जो बहुत ही मिलनसार और संवेदनशील है। 'छोटकी' उसकी दूसरी पत्नी है जो थोड़ा आधुनिकता की ओर झुकी है। 'छोटकी' का चरित्र कुछ नकारात्मक तत्वों को दर्शाता है, जो शहरी जीवन और भौतिक लालच से प्रभावित है। वह अपने पति के आर्थिक स्थिति को नजरअंदाज करके एक सोनार से गहने खरीदने की जिद्द करती है। अंततः गलत राह पर चली जाती है। 'छोटकी' की लालच और नैतिक पतन का परिणाम यह होता है कि वह न केवल अपने पति 'चपाटराम' के साथ धोखा करती है बल्कि 'चेतराम' (बड़की का बेटा) को भी बदनाम करने की कोशिश करती है। यह प्रसंग उस समय के समाज की उन कमजोरियों को उजागर करता है, जहाँ बाहरी हस्तक्षेप और भौतिक लालच परिवारों को बर्बादी की ओर ले जाता है। गाँव की कुटनी का 'छोटकी' को बहकाना और उसके बाद 'छोटकी' का अपने पति और परिवार के प्रति बेवफ़ाई को दर्शाना कैसे सामाजिक रूढ़ियाँ और लालची लोगों को अपने मूल कर्तव्यों से दूर ले जाता है।

चपाटराम के चरित्र में भोलापन और अपनी पत्नी से अत्यधिक प्रेम दिखाया गया है। इसी कारण वह अपने ही बेटे की हत्या करने का प्रयास करता है। यह प्रसंग इस बात को उजागर करता है कि कैसे भावनात्मक कमजोरियाँ व्यक्ति को गलत फैसले लेने में मजबूर कर देता है। नाटक का चरम उस वक्त आता है जब बड़की चेताराम को जंगल में जाकर बचाती है और चपाटराम को उसकी गलती का एहसास होता है। यह दृश्य इस बात का संदेश देता है कि सच और न्याय देर जितना भी हो ये सामने आ ही जाते हैं। इस नाटक में भिखारी ठाकुर ने समाज के उन तत्वों को उजागर किया है जो पारिवारिक रिश्तों में दसरा पैदा करते हैं, जैसे लालच बाहरी हस्तक्षेप और भावनात्मक कमजोरी।

**निष्कर्ष:-** भोजपुरी लोक-रंगमंच के दिग्गज भिखारी ठाकुर ने अपने कालजयी नाटकों में सामाजिक न्याय और व्यक्तिगत स्वतंत्रता के विषयों को बहुत ही सुंदर ढंग से पिरोया है। उनके नाटकों में कमजोर व्यक्तित्व वाले पात्रों का चित्रण किया गया है। यह व्यक्तित्व समाज की वास्तविकताएँ भावनात्मक, कमजोरियों, रूढ़िवादी विचारधाराओं और सामाजिक समस्याओं का उजागर करता है। बिदेसी, लोभा, चटक, मलेछू, नशाखोरी, उदबास आदि जैसे चरित्र समाज में व्याप्त नैतिक पतनएँ पारिवारिक विघटन और रूढ़िगत सोच के परिणामस्वरूप उत्पन्न समस्याओं को दर्शाते हैं। ये पात्र शिक्षा की कमी, भावनात्मक निर्बलता और सामाजिक जकड़न से प्रभावित हैं, जो अपने कर्तव्यों का सही ढंग से निर्वहन नहीं कर पाते।

उनकी रचनाएं भोजपुरी अंचल की ही नहीं, पूरे तत्कालीन भारत के ग्रामीण वास्तविकताओं का एक मार्मिक रूप है। साथ ही उन्होंने मानव स्थिति के सार्वभौमिक संघर्षों पर प्रकाश डाला है। उनके नाटक सामाजिक न्याय के ताने-बाने में गहराई से निहित है। हाशिये पर रहने वाले समुदायों द्वारा सामना की जाने वाली घोर असमानताओं और अन्यायों को चित्रित करता है। भिखारी ठाकुर ने समाज में हो रहे अन्यायों के हर पहलुओं के बारे में दिखाने का सफल प्रयास किया है। साथ ही उन्होंने समाज के ऐसे पात्रों को अपने रचनाओं में लिया है, जिन्हें सामाजिक बाधाओं से मुक्त होने, और अपने व्यक्तिगत रूप से जीवन जीने की लालसा है।

#### सन्दर्भ सूची:-

1. उपाध्याय, डॉ. कृष्णदेव, भोजपुरी लोक संस्कृति की रूपरेखा, लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 1988
2. उपाध्याय, डॉ. कृष्णदेव, लोक साहित्य की भूमिका, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2019
3. दर्शन, डॉ. पाण्डेय, भिखारी ठाकुर कृत बिदेसिया, की अंतर्वस्तु और प्रासंगिकता
4. पाण्डेय, मुन्ना कुमार, पारंपरिक रंग प्रयोग में भिखारी ठाकुर के नाटकों का सांस्कृतिक मूलक अध्ययन, दिल्ली विश्वविद्यालय, 2014
5. मिश्र, डॉ. श्रीधर, भोजपुरी लोक साहित्य: सांस्कृतिक अध्ययन, हिन्दुस्तानी अकादमी प्रकाशन, इलाहाबाद, 1971
6. यादव, डॉ. वीरेंद्र नारायण(सं), भिखारी ठाकुर रचनावली ;संस्करण.3, बिहार.राष्ट्रभाषा.परिषद, पटना,2015
7. पृ.सं.. 75
8. वही, पृ. सं.. 90
9. वही, पृ. सं.. 97
10. शुक्ल, श्रीपरकाश, भिखारी ठाकुर विशेषांक, (संपा) भोजपुरी अध्ययन केंद्र कला संकाय, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी, 2023
11. सहाय, काली, समकालीन सामाजिक सन्दर्भों के परिप्रेक्ष्य में भिखारी ठाकुर के साहित्य का अध्ययन, 2019
12. सिंह, धनंजय, भिखारी ठाकुर और लोकधर्मिता ;प्रथम संस्करण, अनन्य प्रकाशन, नई दिल्ली, 2017
13. <https://epgp.inflibnet.ac.in/epgpdata/uploads>
14. <https://puneetbisaria.wordpress.com>
15. <https://bhojpurisahityangan.com/wp-content/uploads/2019/10/Bhikhari-thakur-Granthawali-Pt-1-pdf>
16. <https://www.shivajicollege.ac.in>

## एक मौन पीढ़ी का दस्तावेज : 'माई' उपन्यास

सुनीता वर्मा

शोधार्थी, श्री जगदीशप्रसाद झाबरमाल टिबरेवाला विश्वविद्यालय, झुंझुनू, राजस्थान

गीतांजलि श्री ने समकालीन साहित्य की प्रतिष्ठित लेखिका के रूप में अपनी अलग पहचान बनाई हैं। जिन्होंने अपने उपन्यासों में स्त्री चेतना, समाज में उनकी भूमिका व प्रतिष्ठा को गहरे से उकेरा हैं। उनके स्त्री पात्र समाज में अपने अस्तित्व, स्वतंत्रता की तलाश के लिए संघर्षरत नजर आते हैं। वे घर की चाहरदीवारी से बाहर निकलकर सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक व शैक्षिक रूप से सचेत रहकर समाज में अपनी सजग भूमिका का निर्वाह करती नजर आती हैं। वे अपनी क्षमता, बौद्धिकता के बल पर आत्मनिर्भरता की ओर बढ़ती हुई अलग पहचान बना रही हैं।

आधुनिक स्त्री समाज में दोहरी भूमिका का निर्वाह कर रही है। गीतांजलि श्री ने अपने उपन्यासों में आधुनिक भारतीय स्त्री की विविध भूमिकाओं का चित्रण किया है। बीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध में स्त्री-विमर्श के माध्यम से नारी के अधिकारों के प्रति चेतना का दौर आया। नारी अपने अस्तित्व की रक्षा करने वाली स्वावलंबी के रूप में उभरकर सामने आयी। जिसे आधुनिक लेखकों ने लेखन का विषय बनाया। इस संदर्भ में रामदरश मिश्र का कहना है कि 'ईलेखक बाह्ययाचार के विरुद्ध अपने पात्रों को खड़ा कर गतिशील भीतरी तत्त्वों की पहचान कराता है। बाह्ययाचार पुजा की सबसे बड़ी शिकार होती है स्त्री। इसलिए आधुनिक हिंदी लेखकों ने बार-बार इस बाह्ययाचार के इस आवरण को फाड़कर स्त्री के महत्व को उभारा है।'<sup>1</sup>

सदियों से हमारे देश में घर की चाहरदीवारी के अंदर की जिम्मेदारियों के बोझ के नीचे स्त्री के अस्तित्व को दबाया जाता रहा है। पितृप्रधान सामाजिक व्यवस्था में स्त्री को हमेशा कमतर आँका गया है। वर्तमान स्त्री आर्थिक रूप से कमजोर पुरुष के कंधे से कंधा मिलाकर आर्थिक उपाजन में सहयोग करती है। इस संदर्भ में राजेंद्र यादव कहते हैं, 'स्त्री अपनी बौद्धिक या अन्य उपलब्धियों के लिए चाहे जितनी हाथ तौबा मचाती रहे, पुरुष की जिद है कि साम, दाम, दंड, भेद से वह उसे कमर, कुल्हे, नितंब, छातियों के ऊपर उठने नहीं देता।'<sup>2</sup> स्त्री कितनी ही जिम्मेदारियां चाहे बखूबी निभाएं लेकिन पुरुष बहुत मुश्किल से उसे बराबर स्थान दे पाता है। इसी नारी की भूमिका हमें गीतांजलि श्री के उपन्यासों में देखने को मिलती है।

इनका 'माई' उपन्यास भारतीय पारिवारिक व्यवस्था का श्रेष्ठ उदाहरण प्रस्तुत करता है। जिसमें एक ही परिवार की तीन पीढ़ियों का चित्रण किया गया है। इसकी केन्द्रीय पात्र 'माई' है जो परिवार की रीढ़ है लेकिन सब जगहों पर उसे ही झुकाया जाता है। उसकी कमजोर रीढ़ को लेखिका ने बीमारी व विनम्रता के प्रतीक रूप में दिखाया है। उसकी रीढ़ का दर्द शक्तिहीनता का प्रतीक है। उसे पारिवारिक जिम्मेदारियों के बोझ में इतना उलझा दिया जाता है कि शायद वह अपनी पहचान नाम (रज्जो) तक भूल गई

है। माई वृद्धावस्था को प्राप्त करने के बाद भी पारिवारिक जिम्मेदारियों को बखूबी निभाती है। माई उस इच्छाहीन स्त्री का प्रतीक बनकर रह गई है जिसकी कोई भी महत्वाकांक्षा नहीं है वो सिर्फ परंपरागत मान्यताओं व रूढ़ियों का शिकार है। माई जो पढ़ी-लिखी होकर भी अपने पति की नजरों में अनपढ़ ही रही। 'याद आता है कैसे हम तीन हँसते थे, तो लगता है उस कमरे में तीन हम उम्र रहे होंगे। वैसे बहुत अरसे तक माई इसी वक्त हमारा होम वर्क जाँचती थी। हालांकि बाबू ने क्लब में किसी से हँसकर कहा था कि इनसे क्या पूछना पड़े-लिखे से पूछिए, तो वह बोली थी एम.ए. पास है।'<sup>3</sup> 'माई' की माँ हो या तिरोहित उपन्यास की 'माँ' दोनों ही अपने परिवार को एकसूत्र में बाँधने के लिए स्वयं तकलीफ उठाकर पारिवारिक जिम्मेदारियों का निर्वाह करती हैं। लेकिन मध्यवर्गीय नारी आज भी सामाजिक रूप से स्वतंत्र नहीं है। इस सन्दर्भ में डॉ. शशिकला त्रिपाठी कहती हैं कि 'यह सच है कि आज की नारी एकदम रूढ़ियों और संस्कारों से मुक्त नहीं हुई है। वह लिखती कुछ और करती कुछ और है।'<sup>4</sup>

मध्यवर्गीय परिवार की आर्थिक स्थिति भले ही कमजोर हो लेकिन इज्जत, मान-सम्मान, परंपरा को ज्यादा महत्व दिया जाता है। माई एक ऐसी पात्र है जिसने चुप्पी का ऐसा लिबास ओढ़ लिया है कि उसके पति द्वारा पीटने, अन्य स्त्री से पति के संबंध के बारे में जानते हुए भी उपेक्षित बनी रहती है। वह संस्कारी व आज्ञाकारिता का चोगा पहने हुए हैं। उसके सास-ससुर कोई सम्मान नहीं करते हैं। माई का यह स्वभाव उसके बेटे सुबोध व बेटे सुनैना को बहुत खलता है वे दोनों मिलकर इस दलदल से माई को निकालना चाहते हैं वे चाहकर भी माई के अस्तित्व को पहचान नहीं दिला पाते हैं। 'असल में अपने देखे और समझे के प्रति शक को लेकर माई की शुरुआत होती है। माई को मुक्त कराने की धुन में बहन और भाई उसको उसके रूप और सन्दर्भ में देख ही नहीं पाते। उनके लिए-उनकी नई पीढ़ी के सोच के मुताबित-माई एक बेचारी भर है। वे उसके अन्दर की रज्जों को, उसकी शक्ति को, उसके आदर्शों को-उसकी आग को देख नहीं पाते।'<sup>5</sup>

दादी जो माई की सास है जो माई पर रौब जमाती रहती है लेकिन उनका पति भी नशे में मारपीट करता है। वह भी विवाहेतर संबंध रखता है। माई ने अपने मौन को ही पति का विरोध दर्ज कर लिया है। स्त्री के प्रति स्त्री के दमन के मूल भाव में पुरुष से मिली पीड़ा है, जो कुंठा का रूप ग्रहण कर चुकी है। शायद इसीलिए दादी भी माई के दबे व्यक्तित्व की प्रशंसा करती है। 'माई की यह एक बात थी जो दादी तक को भाती थी। कम से कम एक गुण था माई में, जिसके लिए वह कभी-कभी उसके सारे दोषों को माफ़ कर देती-कि दिन बीता जाता है और बहू की आवाज एक बार भी सुनाई नहीं पड़ती। क्लब भी जाती है पर सिर पर पल्लू रहता है और सब कहते हैं कि माता जी!

यह आपका ही पुण्य का फल है कि ऐसी दीन हीन, सुशील बहू मिली।<sup>6</sup> लेखिका ने दिखाया है कि परिवार, समाज में मान-मर्यादा के नाम पर सारे शोषण, अत्याचार दब जाते हैं। बचती है तो सिर्फ अंतहीन सिसकियां जिनका न कोई हिसाब है न कोई सीमा, जो उनके अस्तित्व को अंदर ही अंदर खत्म करती रहती हैं। जो पाबंदियां माई व उसकी सास पर थीं वही अब सुनैना पर लागू होने लगी है। 'समाज में स्वतंत्र संचरण और खुलकर अपनी बात करने की पुरुषोचित सुविधा भी स्त्री को नहीं है। यह असामनता हर वर्ग, हर वर्ण और हर आयु की स्त्रियों की स्थिति में दिखाई देती है।'<sup>7</sup>

उसके बाहर जाने पर रोक लगा दी गई। सुबोध अपने स्कूल में गिटार बजाना सिख रहा है तो सुनैना की स्कूल में सिर्फ होमसाइंस विषय है जिसमें उसकी कोई रुचि नहीं है। इस प्रकार लैंगिक-भेदभाव भी देखने को मिलता है। लड़की होने के कारण सुनैना के कपड़े पहनने से लेकर बोलने, खेलने तक में पाबंदियां होने लगी थी। 'पारंपारिक रूप से हमारी स्त्रियों ने पृथ्वी, जल, वन और जीवजंतुओं की रक्षा और संवेदनाओं में ही भूमिका अदा की है। तुलसी, अश्वत्थ पूजा और गोवर्धन जैसे अनुष्ठान बस अतीत के धुंधले स्मृतिचिन्ह हैं। जब अन्नधान्य के उत्पादन और संवर्धन में, स्त्रियों की बराबरी की भागीदारी न केवल स्वीकृत है बल्कि समाहृत है।'<sup>8</sup>

माई जो सब जानते हुए भी व्रत करना नहीं भूलती है। हमारे पितृसत्तात्मक समाज में स्त्रियों को शारीरिक ही नहीं मानसिक गुलाम भी बना लिया जाता है। जब सुनैना के बाबू का एक्सीडेंट होता है तो माई बिना शिकायत के उसके सेवा-भाव में जुटी रहती है। वो औरत मिलने आती है तब भी कुछ नहीं कहती है। पति का पर-स्त्री से संबंध स्वीकारने का कारण उसे व उसकी संतान को मिली सामाजिक सुरक्षा है। इस परिवार की धुरी माई के त्याग पर टिकी है। 'आमतौर पर मिथकों में जैसी स्त्रियां सृजित की गई हैं, वे पितृसत्तात्मक व्यवस्था को बनाए रखने का औजार भर है। त्यागमाई पतिव्रता, सती स्त्री की यह छवि मर्दावादी विमर्श ने बनाई और यह दुनिया के हर मिथक में मौजूद है।'<sup>9</sup>

यह सदियों का सत्य है कि पुरुष स्त्री पर शारीरिक ही नहीं वरन् उसकी सोच तक को परतंत्र रखना चाहता है। बाबू सुनैना के जीवन के हर मामले में हस्तक्षेप करते हैं। वही सुबोध के मामलों में खुलकर विरोध नहीं कर पाते हैं। वह माई के माध्यम से विशेषकर सुनैना के मामले में अपना दबाव डालकर उसे ड्योडी तक सीमित रखना चाहते हैं। 'घर के बाहर औरत के लिए बस बदकारी है। ड्योडी की दीवारों से टकराकर किसी के बोल फिसले और देखते-देखते माई एक निर्णायक खामोशी में चली गई। बाबू पीछे पड़े रहे। किसी भी तरह करो, तुम्हारी वे सुनते हैं, ऐसा बिगाड़ दिया है कि दूसरों का तिरस्कार करते हैं, याचना करो, धमकी दो, तुम समझाओ, खानदान को सर्वनाश से बचाओ, उनके पैरों में गिड़गिड़ाओ, मारो उन्हें, मां हो, हक है तुम्हारा... वे सुनेंगे तुम्हारी...'<sup>10</sup>

माई खुद भले ही घर की चाहरदीवारी में कैद रही लेकिन वह चाहती है कि उसकी बेटी सुनैना उसकी तरह न बने। पति के विरोध के बावजूद वह सुनैना को शहर में पढ़ने जाने से नहीं रोकती। वह उसकी मेडिकल की पढ़ाई व चित्रकारी का समर्थन करती है। वह चाहती है कि सुनैना ऐसी परिस्थितियों का सामना न करें, वह अपना जीवन जीये न की भोगे। माई सुनैना की मुक्ति में अपनी मुक्ति देखती है। माई सुबोध की महिला मित्र व सुनैना के पुरुष मित्र से बहुत शालीनता से बातचीत करती है। माई विचारों में तो आधुनिक है लेकिन अपने भोगे हुए यथार्थ के लिए मौन है। सुनैना को अपनी माई के प्रति सम्मान, प्रेम है लेकिन वो कभी भी माई नहीं बनना चाहती

है। 'माई जो हर देने में थी मुझमें भी आ गई। पर मैं तो लड़ी थी, हर लेने में होने के लिए। मैं माई नहीं बन पाऊंगी। वह सिर्फ ही उस सदी में लोप होती जा रही है। मैं माई बन भी सकती तो नहीं बनना चाहूंगी। मुझे माई नहीं बनना। जी जान से लड़ूंगी माई न बनूं। जोर से झकझोर कर अपने अंदर से माई को झटका देना चाहती हूं। हर तरह के सहने को निकाल फेंकना चाहती हूं। वह गलत वह मुझे रोकना है।'<sup>11</sup> सुनैना माई बनने का अर्थ जानती थी कि एक ऐसी औरत जिसकी मात्र सांसे चलेगी; न उसका आत्मसम्मान होगा, न अस्तित्व। वह केवल शोषण की मूर्ति रह जायेगी।

लेखिका इस उपन्यास के माध्यम से पाठकों का ध्यान इस ओर आकर्षित करवाती नजर आ रही है कि स्त्री विमर्श कोई सामान्य मुद्दा नहीं है। इसके पीछे न जाने कितनी 'माई' की अंतहीन पीड़ा व दर्द छिपा हुआ है। लेखिका इसके साथ यह भी संदेश देती नजर आती है कि जब तक स्त्री स्वयं अपने आत्मसम्मान के लिए बोलना नहीं सीखेगी तब तक सुनैना व सुबोध कोशिश करते ही रह जायेंगे। स्त्री स्वयं ही शोषण की भागीदार होगी तो समाज व राष्ट्रवापी आंदोलन कुछ नहीं कर सकते। स्त्री जब स्वयं अपनी क्षमताओं को पहचानेगी तभी पुरुष की दासता से मुक्ति पा सकेगी। इस उपन्यास में एक तरफ तो स्त्री की सेवाधर्मिता का चित्रण है वहीं दूसरी ओर दादी जैसे वर्ग, शोषक वर्ग का प्रतिनिधित्व करते हैं। लेखिका ने पीढ़ियों के अंतर्द्वंद्व का चित्रण इस प्रकार किया है कि एक तरफ तो माई रूढ़ियों व पारंपारिक मूल्यों के दबाव में चुप रहती है वही दूसरी तरफ सुनैना है जो अपने अधिकारों के लिए लड़ती हुई आवाज उठाती है। माई उन स्त्रियों का प्रतीक बनकर रह जाती है जो अपनी महत्वकाक्षाओं व इच्छाओं को दबाते हुए दूसरों के लिए जीते हैं। लेकिन माई स्वयं तो आजीवन चुप रही पर सुनैना के अधिकारों की लड़ाई में उसके साथ खड़ी रहती है। मृदुला गर्ग के 'कटगुलाब' में भी हमें देखने को मिलता है कि 'कटगुलाब सृजन की संभावनाओं से बहुआयामी संदर्भों को विश्लेषित करने वाला उपन्यास है, विशेषकर स्त्री के संदर्भ में। उपन्यास मातृत्व विरोधी नहीं, परन्तु यह अवश्य स्थापित करता है कि मातृत्व ही स्त्री जीवन की सार्थकता नहीं है। स्त्री स्वयं को शक्ति-सम्पन्न समझे, पुरुष की सापेक्षता में अपनी पहचान खोजने में अधीनस्थ की भूमिका ही प्राप्त होगी। इस दृष्टि से 'कटगुलाब' मृत संबंधों को हादसा समझकर उससे मुक्त होती स्त्री-कथा है।'<sup>12</sup>

निष्कर्षतः हम कह सकते हैं कि लेखिका ने स्त्री समस्या को विभिन्न दृष्टियों से चित्रित किया है, जो समाज में व्याप्त रूढ़िवादिता, नारीवाद और स्वतंत्रता की तलाश करती रहती है। इस उपन्यास में लेखिका ने नारीवाद को बहुत ही संवेदनशील तरीके से दिखाया है। लेखिका ने स्त्री दृष्टिकोण से पितृसत्तात्मक समाज की परतों को उधेड़ने का काम किया है। इस उपन्यास में स्त्री मुक्ति की आवश्यकता को बताने का प्रयास किया गया है। माई के चरित्र के माध्यम से लेखिका ने पुरुषवादी सोच के खिलाफ सवाल उठाया है कि स्त्री ही क्यों परंपरा, इज्जत, सम्मान की बेड़ियों में जकड़ी रहें। अंततः माई मृत्यु को प्राप्त होकर ही इस ड्योडी से आजाद हो पाई। सुनैना द्वारा माई बनने का अहसास होना व अंतोतगत्वा उसके द्वारा ड्योडी छोड़ना एक आधुनिक स्त्री की आजाद सोच को दर्शाता है। स्त्री विमर्श चाहता है कि स्त्री तमाम प्रतिबन्धों को दरकिनार करते हुए पुरुष के बराबरी का अधिकार रखें। वह अपने निर्णय, स्वयं लेते हुए अधिकारों का भोग करें। लेकिन माई इस स्थिति से कोसो दूर है। माई किसी से मिल नहीं सकती, माई किसी को पत्र नहीं लिख सकती, माई अपनी स्थिति को बयान नहीं कर सकती। माई के दोनों बच्चे उन्मुक्त विचार पैदा करना चाहते थे। यह उपन्यास सिर्फ औरत की

कहानी नहीं बल्कि एक पीढ़ी की चुप्पी, समझौतों और विद्रोह की कहानी है। आज भी न जाने कितनी माई के सपने, अस्तित्व ड्योढ़ी में कैद है। मध्यमवर्गीय भारतीय समाज में स्त्री को इस ड्योढ़ी को पार करने में कई वर्ष लग जायेंगे।

संदर्भ सूची:-

1. मिश्र, रामदरश; हिंदी उपन्यास एवं अंतर्थात्रा; राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली; तीसरा परावर्धित संस्करण: 2001; पृ.215
2. यादव, राजेंद्र; आदमी की निगाह में औरत; राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली; संस्करण: 2013; पृ.28
3. श्री, गीतांजलि; माई; राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली; संस्करण:2006; पृ.19
4. त्रिपाठी, शशिकला; उत्तरशती के उपन्यासों में स्त्री; विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी; संस्करण: 2006; पृ. 93
5. श्री, गीतांजलि; माई; राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली; संस्करण:2006; पृ. आवरण पृष्ठ
6. वही; पृ.19
7. पांडे, मृणाल; स्त्री देह की राजनीति से देश की राजनीति तक; राधाकृष्णन प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण: 2011; पृ.88
8. वही; पृ.128
9. शर्मा, क्षमा; स्त्रीत्ववादी विमर्श: समाज और साहित्य; राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली; संस्करण: 2012; पृ.123
10. श्री, गीतांजलि; माई; राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली; संस्करण:2006; पृ.95
11. वही; पृ.64
12. कस्तवार, रेखा; स्त्री चिंतन की चुनौतियां; राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण: 2006; पृ. 188

# The Clever Hero : A Trickster Archetype in Tharu Folktales

Bam Dev Adhikari

Associate Professor, Trichandra Campus, Tribhuvan University

**Abstract:** Tricksters are archetypal characters that are found in myths and folklore around the world. Trickster characters are represented in the best form in North American Indian folktales. These folk tales portray some animals like coyotes, ravens, hares and spiders, which play anthropomorphic roles and perform unbelievable tasks by using deception and trickery. Tharus, one of the tribal/indigenous groups of Nepal, resides in the southern part of Nepal known as the Terai. As an indigenous/tribal group of Nepal, Tharus have a large body of oral literature including folktales. Like other forms of oral literature, Tharu folktales have survived in oral form for many centuries. In this essay, I am trying to show the portrayal of the clever heroes in Tharu folktales. The clever heroes are suggested by Orrin E. Klapp in an essay "The Clever Hero." Tharu folk tales are about the adventures of the heroes, both men and women who perform unusual tasks and save themselves from dangerous situations. Unlike the North American Indian tricksters, most of the trickster roles in Tharu folktales are performed by men and women. These men and women meet the requirement of a clever hero as suggested by Klapp.

**Key Words:** trickster, folktales, archetype, clever hero, tricks, deception.

**Introduction:** Literary texts deal with characters, human or non-human and animate or inanimate. Some literary texts portray character types and describe what a particular type of character is like, e. g. what a chatterbox is like, what a gullible is like, or what a jealous husband is like and many others. Types and archetypes sound similar but types are local while archetypes are universal. The word 'archetype' originated from the Greek word *arkhetupon*, a combination of *arkne*+ *tupos* in which *arkne* means old/primitive and *tupos* means model. Hence, etymologically archetype means something modeled for the first time. The models were made in primitive times and they descended towards posterity from one generation to another. Swiss psychiatrist Carl Gustav Jung suggested that the archetypes, the archaic models are human heritages and they passed to us from our ancestors in the form

of collective unconscious. Jung remarks, "The contents of the collective unconscious, on the other hand, are known as archetypes" (4). Jung makes a comprehensive discussion of four archetypal figures, mother, rebirth, spirit and trickster in his book *Four Archetypes*. According to Jung, the trickster figure is also a major archetypal character depicted in myths and folklore.

A trickster is a character commonly found in folklore and myths, who uses cunning, deception, and trickery to subvert difficult situations in their favor. The trickster displays a high degree of ingenuity or secret knowledge, often breaking societal norms and values, and crossing conventional boundaries. Lewis Hyde describes a trickster as "a boundary-crosser" (Hyde, 1998, p. 18). Hyde elaborates, explaining that the trickster's path is not only a physical road but also a spiritual one, allowing them to traverse between heaven and earth, and between the living and the dead (Hyde, 1998, p. 18). This description is drawn primarily from Western, particularly North American Indian, trickster narratives. Michael P. Carroll expands on the concept by noting that critics often define the trickster as any character who makes extensive use of deceit (Carroll, 1991, p. 105). Carroll further explores North American Indian trickster figures and identifies seven broad trickster archetypes, four of which-coyote, raven, hare, and spider-are anthropomorphized (Carroll, 1991, pp. 108-109). According to Carroll, these tricksters can be interpreted as both cultural heroes and "selfish buffoons," since they often focus on over-gratification of basic desires such as hunger and sex. In this sense, tricksters entertain the audience through their acts of foolishness while employing deceit.

In contrast, Orrin E. Klapp (1969) defines tricksters as "the clever hero," characters who can outwit and deceive stronger enemies, whether in terms of physical power or other forms of strength. Klapp's definition includes iconic figures like Robin Hood, Ulysses, Davy Crockett, and Will Rogers, all of whom are clever heroes who employ their wit to overcome challenges. Similar characters from different mythologies and folktales, such

as "The Hare and the Lion" from East African folktales, "Gonu Jha and Three Thieves" from Maithili folktales, "The Monkey and the Crocodile" from the Panchatantra, and "Aladdin's Wonderful Lamp" from One Thousand and One Nights, also depict clever heroes. Other examples include Brother Rabbit (Brer Rabbit), an African-American folk hero; Wenchang Wang, a Taoist war hero from Chinese tradition; and Birbal from the Akbar Birbal Tales. Tharu folktales, although distinct from North American trickster tales or British Robin Hood legends, feature clever hero figures that align more closely with Klapp's description of the trickster.

**Statement of the Problem:** As mentioned earlier, the trickster is a prominent figure in North American folk literature. However, this archetype has yet to be adequately explored in Oriental literature, and Tharu folktales, in particular, have not received significant critical attention. The trickster characters in Tharu literature, while resembling the clever heroes discussed by Klapp, have not been systematically analyzed in terms of how they compare with Western trickster figures. This gap in research presents an opportunity for further study.

**Objectives of the Study:** The general objective of this essay is to introduce Tharu tribal literature to speakers of the English language. The specific objectives are to:

- ◆ Explore how the archetypal trickster character is portrayed in Tharu folktales.
- ◆ Compare and contrast Tharu trickster characters with Western trickster characters.
- ◆ Examine how the trickster character reflects Tharu culture and mythology.

**Methodology:** This study will primarily utilize Tharu folktales as primary texts to analyze the trickster characters. The major theoretical framework for interpreting these characters will be based on Orrin E. Klapp's essay "The Clever Hero" (1969).

**Review of Literature:** Tharu culture has long been overlooked in scholarly research. Chandra Prasad Chaudhary (1987) has documented the ritual dance Maghi Naach, performed in the third week of January, and analyzed the meaning of the accompanying songs in his M.A. dissertation. Similarly, Prem Raj Tharu (1989) has explored the representation of myths in Tharu songs in his M.A. dissertation, *Animistic Representation of Myth in Traditional Tharu Songs*. Megh Prasad Kharel (1995) provided an extensive study on the anthropology of the Dangaura Tharu, a sub-group of Tharu people from Dang district in mid-western Nepal. His research contributed valuable insights into their origin and development. Victoria M. Dalzell (2001) focused on Tharu ethnography and folk music in her essay *Creative Nonfiction in the Shadow of Other Anthropologists*. Ganga K. C. (2000)

discussed the celebration of Maghi, the Tharu New Year festival, in her article "Maghi: The Festival Among the Tharus: Celebration of New Year." Although these studies have focused on various aspects of Tharu culture, including anthropology, ethnography, and mythology, Tharu literature has received little scholarly attention. Notably, the Tharu folk versions of the Ramayana and Mahabharata have been transcribed and translated into various languages, yet they have not been explored in terms of the trickster figure. This gap makes the present study on Tharu trickster figures a valuable and original contribution to the field.

**Trickster in Tharu Folktales:** Tharu folktales portray both human and non-human, royal and commoner characters. Most of the folktales have royal characters like kings, queens, princes and princesses, who suffer because of their fates or wrong decisions but ultimately the circumstances develop in their favor and they come out of the predicaments. Western tricksters, especially North American Indian trickster tales deal with animals as clever heroes but only a few Tharu characters deal with animal heroes and even these animals are portrayed in their anthropomorphic incarnations. Tharu folk tales have portrayed snakes, frogs, tigers, fish, cats and crows, the animals which are commonly found in their settlement areas, the southern plain belt of Nepal. The human characters of Tharu folktales meet the characteristics of "the clever hero", whose characteristics, according to Klapp, are humor, fraud and deception, underdog and escapes.

**1. Humour and Popularity:** The first feature of the clever hero, as outlined by Klapp, is humour and popularity. He asserts that "humour in any form is a value which will redeem many a personal defect-such as ugliness or wickedness" (Klapp, 1969, p. 22). In Tharu folktales, characters who are portrayed as physically unattractive often win the admiration of the audience through their clever tricks. However, these stories rarely depict characters who are truly wicked. One representative story features a man with only one foot, who, despite his physical deformity, triumphs using wit and humour.

A one-foot-tall baby is born to a woman, who had stolen and eaten a cucumber from her neighbor's farm and the neighbor had cursed that the thief would bear a child which would remain one foot, the length of the stolen cucumber forever. From an early age, the one-foot boy performs extraordinary tasks and keeps his parents happy. After crossing teenage he longs to marry, goes to ask for the hand of a girl himself. On his way, he conceals a wild cat, a jackal and a river in his ear. Infuriated with the one-foot boy's proposal for his daughter, the father of the girl puts him in the chicken coup so that he would be trampled to death by the fowls. The one-foot boy releases the wild cat from his ear and gets all the birds killed. Surprised, the

father puts the one-foot boy in the goat pen the next day but all the goats are killed by the jackal that comes out from the boy's ear. Finally, the father makes fires collecting the dry cow dung but the one-foot boy releases the river from his ear. The water not only extinguishes the fire but also overflows the whole village. The father is compelled to make an agreement with the one-foot boy to stop the flood in the village. The one-foot boy gets married and lives happily. The language of the story is used in such a way that the readers praise the boy's tricks but never bother the boy's ugliness of being so short in height.

**2. Fraud and Deception:** This is the second feature of the clever hero pointed out by Klapp. The clever hero outsmarts the stronger opponent by playing fraudulent games and deceitful actions. Klapp elucidates, "Deception, indeed, is a source of the clever hero's strength, either the other's slowness taken advantage of or an artificially created ignorance" (Klapp, 1969, p. 25). The heroes of Tharu folktales deceive their opponents by using ambivalent language, verbal tricks and other deceitful actions. Both 'other's slowness' and 'artificially created ignorance' apply to a story about an ordinary girl entitled "Budhani." Budhani, an intelligent girl easily outwits a king.

Once a crow couple had a debate and they wanted separation from each other but each had a claim for their young ones. The case goes to the king and the slow-thinker king gives a decision in favor of the male crow saying males have rights for their progenies. The crow dies of sadness of separation from her young ones and takes birth as a girl in the same kingdom. The girl grows with unparalleled intelligence and the villagers call her Budhani, meaning rich in wisdom. In her early teens, the girl goes to the king's palace and claims that all the newly born calves belong to her because all the cows were impregnated by her bull. The king denies it at first but the girl reminds the king of the instance in which he had given the decision in favor of the male crow. The king is compelled to lose all the newly born calves. He hires an intelligent counsellor to outsmart the clever girl. The conflict begins between the king and the girl but Budhani foils each of the attempts suggested to the king by the counsellor. The girl is asked to bring a ripe pumpkin inside a pitcher, to make a rope of ashes and to make a palace in the air. The girl uses tricks, foils the king and receives a large amount of money from him. Ultimately the counsellor suggests to the king that he should imprison the girl in a specially-built prison house and starve her to death. But the girl bribes the mason and gets a tunnel built out of the prison house. The girl is put in the prison house but she is not starved to death for many months. The king goes to the prison house to find the reason but the girl shuts him inside the tunnel where the king is starved to death.

Whatever Budhani does to outwit the king is based on deception and trickery. The king's son becomes the new king, marries the intelligent girl and they live happily. Budhani is one of the few female heroes depicted in Tharu folktales.

**3. The Small Hero as an Underdog:** Stories are found scattered across the mythologies of the world in which comparatively smaller or weaker animals defeat the larger and stronger opponents. Klapp gives examples of an African jackal which is able to cheat a lion and an Indonesian mouse deer that tricks a tiger (Klapp, 1969, p.26). The story of the Lion and Hare also belongs to the same category. Even in Tharu stories, insignificant people defeat the people in power and strength. A couple of instances will show this model in Tharu folktales:

In a story entitled "Where Shall I Do My Long Toilet," two men go to a house with the intention of looting valuable items from it feigning that they are cousin brothers to the woman of that house. There were only two people, the mother and her small son of about seven or eight years old in the house. The men found nothing to loot in the house except two silver bangles on the boy's wrist. The next day the men pretend to go for a walk with the boy and reach a nearby shop. They convince the boy to sell the bangles and send him to the shop. The boy, who was aware of the intention of the men, thinks of deceiving them. He talks to the shopkeeper that he has two servants to sell and points to two men taking a rest under a Banyan tree. The boy shouts loudly, "Shall I sell only one or both?" The men reply loudly "Both." The shopkeeper hears the men speak the word 'both.' The ambiguous sentence is interpreted differently by the shopkeeper and the men. The boy receives money and escapes and the men become servants in the shop for a long time.

Similarly, in a story entitled "Laughing Beetle and Speaking Nut," a king is suffering from a chronic disease. A tantric tells the king that only laughing beetle and speaking nuts can help him recuperate from the disease. A young man named Ranapatuwa takes the risk of finding the beetle and nut. With the help of some supernatural power, Ranapatuwa finds two girls named Laughing Beetle and Speaking Nut captivated in a demon's castle. He rescues them, gets married to them and comes back to the king. The king recovers from his chronic disease. The king's counsellors, a Brahmin and a barber make the king jealous by describing the girls' beauty and the king longs to marry them by snatching them from Ranapatuwa by hook or crook. The counsellors advise the king to make a conspiracy against the young man one after another and the king assigns Ranapatuwa to bring tiger's milk and poplar leaves from across the sea but the young man performs each task and survives the dangerous situation miraculously. Being tired, the counsellors suggest that the

king should send Ranapatuwa to heaven to bring the news of the king's father. Ranapatuwa disappears for six months and comes back with long hair and a beard. He informs the king that his father is happy in heaven but he is in need of a Brahmin and a barber for his religious ceremony and personal hygiene. The king puts the Brahmin and the barber in a burning pyre so as to send them to heaven. Ranapatuwa lives happily with his two wives.

**4. Escapes:** It's the last feature of a clever hero figure suggested by Klapp. The characters are placed in predicaments one after another and the audience begins to think there is no way of escape. However, the heroes survive and return home to please their desperate relatives. The heroes suffer but turn out to be victorious ultimately. They find an escape from any kind of situation. There are numerous such stories in Tharu literature and "Maternal Uncle and Nephew" is one of them.

In a story entitled "Maternal Uncle and Nephew," the uncle makes a plot against the nephew but in vain. Finally, he sends his men, who tie the nephew's hands and legs and carry him in a cradle to throw him into a lake. As they are going towards the lake, they put down the cradle on the ground and go for a long toilet into a nearby bush. A cowherd finds the young man with his hand and legs tied together. The nephew fabricates a story that he is being carried for the marriage that he does not want. He convinces the cowherd to get married in place of him and escapes leaving the cowherd in his place. The men come out of the bush, pick up the cradle and throw it into a pond. The cowherd dies in the pond but the young boy survives. The heroes are assisted by some supernatural powers, coincidences and objects like rings. Similarly, in another story, a king is worried because his young and beautiful daughter has stopped speaking. He announces an award that he who is able to make her speak will be her bridegroom. A young boy named Gulappan goes to the king's palace taking his four friends, who have unusual powers in digging, seeing, striping and urinating. By using tricks, Gulappan makes the girl speak but the king makes conditions one after another. First, he tells Gulapan to bring his daughter's necklace from King Indra's city. One of Gulappan's friends sees where the necklace is put, another puts a long stripe to heaven and brings the necklace back. The king assigns Gulappan another task that he should dig a pool within one day and fill it with water. A friend of Gulappan digs the pool in one go and another friend urinates in it and fills the pool. The king feels defeated and offers the young man his daughter for marriage.

**Conclusion:** -The clever heroes in Tharu folktales may not fit the trickster archetype in the strictest sense, but they share many similarities with trickster characters. These stories, often told in social gatherings, were

meant to amuse large audiences. Nearly all of the folktales are adventurous and contain supernatural and religious elements. They reflect the faith of the Tharu people from the time they were composed. Numerous gods and goddesses, such as Vishnu, Krishna, and Bhawani, are referenced in these tales, symbolizing the religious beliefs of the period. Supernatural elements, including rebirth, reincarnation, witches, ghosts, and demons, are also prominently featured in Tharu folktales.

In the story "The Frog Princess," for instance, a girl is killed multiple times and reborn in various forms. Initially, she is killed by her own brother, who is manipulated by his wife. She is then reborn as a frog-girl hybrid in a lake in Nainital, becoming a frog during the day and a beautiful girl at night. A prince falls in love with her, and marries her, but is coerced by his mother into killing her. She is then reborn as a bamboo stalk, which a snake charmer turns into a flute. Finally, the girl emerges from the flute and reunites with her husband. Many characters in Tharu folktales appear in dual forms-human by night and another creature by day. Many stories also involve serpent kings, where the snakes marry beautiful girls and rescue their families from poverty.

The heroes in these stories often embark on difficult missions, similar to the knights in search of the Holy Grail in Christian mythology or the quest for the answers to seven questions by Hatim in Arabian mythology. However, unlike North American trickster figures, the clever heroes in Tharu folktales do not have an insatiable hunger for food or sex. The language of the stories is refined, avoiding vulgarity and obscenity. Most of the tales have a childlike tone. Krishna Raj Sarbahari, the editor and collector of Tharu folktales, notes, "I listened to my grandfather telling us stories in my childhood and making us spellbound by his gesticulated narrations accompanied by songs. All the stories were in my memory and I thought it was my duty to transcribe them in a book" (Sarbahari, 2000, p. 6). Indeed, Tharu folktales have survived through performance. Not everyone in Tharu culture is a storyteller, but those who are often narrate stories with gestures and melodic songs. These folktales are awaiting further analysis and interpretation.

#### References:-

1. Carroll, M. P. (1984). The trickster as selfish buffoon and culture hero. *Ethos*, 12(2), 105-131.
2. Dalzell, V. M. (2019). Creative nonfiction in the shadow of other anthropologists. *Anthropology and Humanism*, 44(2), 282-292.
3. Hyde, L. (1998). Trickster makes this world: Mischief, myth, and art. Farrar, Straus and Giroux.
4. Jung, C. G. (1977). Archetypes and the collective

- unconscious (Part I). (G. Aler & R. F. C. Hull, Eds. & Trans.). Princeton University Press.
5. Jung, C. G. (1969). Four archetypes (R. F. C. Hull, Trans.). Princeton University Press.
  6. K. C., G. (2019). Maghi: The festival among the Tharus: Celebration of New Year. Patan Pragya, 5(1), 84-92.
  7. Kharel, M. P. (2019). Reviewing the anthropological study of Tharus in Nepal. Tribhuvan University Journal, 33(1), 191-204.
  8. Klapp, O. E. (1995). The clever hero. Journal of American Folklore, 67, 21-34.
  9. Koirala, C. P. (2009). Maghi Naach: A study on performance and Tharu culture (M.A. dissertation). Central Department of English, Tribhuvan University.
  10. Sarbahari, K. R. (2067). Tharu folktales. Bibek Srijanshil Publications.
  11. Tharu, P. R. (2019). Animistic representation of myth in traditional Tharu songs (M.A. dissertation). Central Department of English, Tribhuvan University.

# The Role of Artificial Intelligence in Education

Dr. Rohitas Meena

Associate Professor, Faculty of Law, Madhav University, Pindwara, Sirohi, Rajasthan

**ABSTRACT:-**In recent years, Artificial Intelligence (AI) has emerged as a transformative force across various industries, revolutionizing how people interact, work, and learn. Education, a domain often characterized by its traditional frameworks, is undergoing a radical transformation with the integration of AI technologies. From personalized learning experiences to automated administrative tasks and intelligent tutoring systems, AI is reshaping the educational landscape in profound ways. This article delves into the various roles AI plays in education, its benefits, challenges, and the future implications for learners, educators, and institutions.

**Key Words:-**Artificial Intelligence, industries, education, assessment, administration,

## What is Artificial Intelligence?

Artificial Intelligence refers to the simulation of human intelligence processes by machines, particularly computer systems. These processes include learning (acquiring information and rules for using it), reasoning (using rules to reach approximate or definite conclusions), and self-correction. In the context of education, AI encompasses a broad range of tools and systems that support learning, assessment, administration, and decision-making.

## Historical Context:-

Although the concept of AI dates back to the 1950s, its application in education began more prominently in the late 20th century with the development of Intelligent Tutoring Systems (ITS). These systems aimed to replicate a human tutor by adapting instructional materials to the learner's pace and understanding. Since then, the advancement in machine learning, natural language processing, and big data analytics has led to the proliferation of more sophisticated AI tools in the educational domain. Artificial Intelligence (AI) has become a transformative force across multiple sectors, and education is no exception. By integrating AI into educational systems, we can significantly enhance learning experiences, streamline administrative tasks, and ultimately improve educational outcomes. This comprehensive content

explores the multifaceted role of AI in education, its uses, learning mechanisms, courses for AI studies, advantages, disadvantages, career opportunities, and the broader necessity of AI in our daily lives

## Key Roles of AI in Education:-

### 1. Personalized Learning:-

One of the most impactful applications of AI in education is the ability to personalize learning experiences. AI systems can analyze individual students' strengths, weaknesses, learning pace, and preferences to tailor content and teaching methods. Platforms like Coursera, Khan Academy, and Duo lingo use AI algorithms to adapt lessons based on a learner's progress and performance.

### Benefits:-

- ◆ Enhances student engagement and motivation.
- ◆ Provides differentiated instruction for diverse learning needs.
- ◆ Accelerates learning for advanced students while offering additional support to those who struggle.

### 2. Intelligent Tutoring Systems (ITS):-

ITS are AI-driven systems that provide immediate and personalized feedback to learners without human intervention. These systems simulate a human tutor by analyzing student responses and offering tailored guidance.

### Examples:-

- ◆ Carnegie Learning for mathematics.
- ◆ ALEKS (Assessment and Learning in Knowledge Spaces) for adaptive learning in subjects like chemistry and algebra.

### Benefits:-

- ◆ Enables one-on-one tutoring at scale.
- ◆ Helps students grasp complex concepts at their own pace.
- ◆ Reduces teacher workload in remedial instruction.

### 3. Automation of Administrative Tasks:-

AI is streamlining administrative operations in schools and universities, allowing educators to focus more

on teaching and student engagement. AI can automate tasks such as:

- ◆ Grading multiple-choice and short-answer questions.
- ◆ Scheduling classes and exams.
- ◆ Managing admissions and enrollment.
- ◆ Responding to frequently asked questions via chat bots.

**Benefits:-**

- ◆ Saves time and resources.
- ◆ Minimizes human error in administrative processes.
- ◆ Increases operational efficiency.

**4. AI-Powered Assessment Tools:-**

AI is enhancing assessment methodologies by enabling formative and summative assessments that are more dynamic and insightful. Tools powered by AI can evaluate written essays, analyze learning patterns, and even detect signs of academic dishonesty.

**Benefits:-**

- ◆ Offers real-time feedback and insights.
- ◆ Reduces grading time for instructors.
- ◆ Allows for data-driven intervention strategies.

**5. Enhancing Accessibility and Inclusion:-**

AI technologies are instrumental in making education more inclusive, especially for students with disabilities. AI can provide:

- ◆ Speech-to-text and text-to-speech functionalities.
- ◆ Real-time language translation.
- ◆ Visual recognition for the visually impaired.
- ◆ Predictive typing and alternative input methods.

**Benefits:-**

- ◆ Ensures equal learning opportunities for all students.
- ◆ Breaks down language and ability barriers.
- ◆ Supports learners with diverse needs.

**6. Virtual Learning Environments:-**

With the rise of e-learning, AI has become a cornerstone in building and maintaining virtual learning environments (VLEs). AI helps to:

- ◆ Monitor student engagement.
- ◆ Recommend learning resources.
- ◆ Facilitate group discussions and collaborations through intelligent matchmaking.

**Benefits:-**

- ◆ Creates a more interactive and immersive learning experience.
- ◆ Keeps students engaged in online settings.
- ◆ Helps educators manage large, diverse online classrooms.

**7. Career Guidance and Predictive Analytics:-**

AI can analyze students' academic records, strengths, and preferences to suggest potential career

paths. Predictive analytics also helps institutions identify at-risk students and intervene before academic failure occurs.

**Benefits:-**

- ◆ Provides personalized career advice.
- ◆ Increases student retention and graduation rates.
- ◆ Helps students make informed decisions about their future.

**8. Enhanced Educational Content:-**

AI can generate and recommend content that is relevant and up-to-date. It helps in creating interactive and engaging learning materials, such as simulations and virtual labs, which can provide hands-on experiences that might be difficult to replicate in a traditional classroom.

**9. Adaptive Learning Platforms:-**

Platforms like Coursera use and edX AI to adapt courses based on learners' progress. These platforms adjust the difficulty of exercises, suggest supplementary materials, and offer different pathways through the curriculum, ensuring a more personalized learning journey.

**10. Data-Driven Insights:-**

AI analyzes educational data to provide insights into student performance and learning patterns. This analysis helps educators identify at-risk students, measure the effectiveness of teaching strategies, and make data-informed decisions to improve educational outcomes.

**11. Support for Diverse Learning Needs:-**

AI tools support diverse learners, including those with disabilities. Speech-to-text, text-to-speech, and language translation tools can make content more accessible and inclusive, helping students with different learning needs and language backgrounds.

**12. Real-Time Feedback and Assessment:-**

AI provides immediate feedback on student performance, enabling quicker adjustments in learning strategies. Real-time assessment tools help students understand their mistakes and areas for improvement, supporting a more dynamic learning process.

**13. Ethical Considerations and Challenges:-**

While AI offers many benefits, it also raises ethical issues, such as data privacy, security, and algorithmic bias. Ensuring that AI tools are used responsibly and that students' data is protected is crucial for maintaining trust and fairness in the educational system.

**Challenges and Ethical Considerations:-**

While AI offers numerous benefits, its implementation in education is not without challenges:

**1. Data Privacy and Security:-**

AI systems rely on massive amounts of student data, raising concerns about data privacy and security. Misuse or mishandling of data can lead to breaches and loss of trust.

**2. Algorithmic Bias:-**

AI systems may inadvertently reinforce existing biases if trained on skewed data. This can lead to unfair treatment or misjudgment of student abilities and behaviors.

### **3. Teacher Resistance and Training:-**

Many educators may feel threatened by AI or lack the skills to effectively use AI tools. Proper training and support are essential for successful adoption.

### **4. Inequitable Access:-**

Not all students have equal access to AI-powered tools, especially in underfunded or rural areas. This digital divide can widen existing educational inequalities.

### **5. Over-Reliance on Technology:-**

There is a risk of over-dependence on AI, potentially reducing human interaction, critical thinking, and creativity in the learning process.

### **The Future of AI in Education:-**

The integration of AI in education is still in its early stages, but its trajectory suggests even more profound changes ahead. Future developments may include:

#### **1. Emotion AI:-**

Systems capable of recognizing and responding to students' emotions could further personalize the learning experience. For instance, detecting frustration or boredom could trigger interventions to keep the student engaged.

#### **2. Lifelong Learning Companions:-**

AI could act as a lifelong learning companion, guiding individuals through various stages of their education and career development.

#### **3. Enhanced Teacher Roles:-**

Rather than replacing teachers, AI will augment their capabilities. Teachers will evolve into facilitators, mentors, and data interpreters, using AI insights to enhance instruction.

#### **4. Global Learning Ecosystems:-**

AI can facilitate international collaboration, cross-border education, and the creation of a global knowledge economy.

### **Case Studies:-**

#### **1. Squirrel AI (China):-**

Squirrel AI is a leading example of AI-powered personalized learning. It uses advanced algorithms to deliver custom-tailored educational content to students, resulting in improved academic performance and engagement.

#### **2. Georgia State University (USA):-**

The university uses AI-powered chatbots to assist with enrollment and advising. This initiative significantly increased freshman enrollment and reduced summer melt.

#### **3. Microsoft's AI for Accessibility:-**

This initiative develops AI tools to help students with disabilities. Tools include real-time captioning,

immersive reading experiences, and AI-driven sign language recognition.

**Conclusion:-**Artificial Intelligence holds the potential to revolutionize education by making it more personalized, inclusive, efficient, and adaptive. While there are valid concerns around ethics, accessibility, and data privacy, these challenges can be mitigated through thoughtful policy-making, robust infrastructure, and inclusive design. The ultimate goal is not to replace educators but to empower them with tools that enhance their teaching and amplify learning outcomes. As AI continues to evolve, its responsible integration into education could pave the way for a more equitable, engaging, and future-ready learning environment.

---

# Role of ICT in Teacher Education

Dr. Sushil

B.ed, HOD, Government PG College, Ranikhet, Uttarakhand

## Introduction to ICT in Education:-

Definition and Scope of ICT | Importance of ICT in Modern Education | Historical Evolution of ICT in Teaching-Learning Processes

Information and Communication Technology (ICT) refers to the broad array of technologies used to handle telecommunications, broadcast media, audio-visual processing, intelligent building management systems, and network-based control and monitoring functions. In the context of education, ICT encompasses tools such as computers, the internet, interactive whiteboards, online learning platforms, educational software, and mobile learning applications that aid in the teaching-learning process.

The scope of ICT in education is vast and growing. It extends from enhancing classroom instruction with multimedia presentations to enabling virtual learning environments, online assessments, and real-time collaboration. ICT not only supports content delivery but also promotes learner-centred pedagogy, personalized learning, and access to global educational resources.

In modern education, ICT plays a vital role in transforming traditional classrooms into dynamic, interactive learning spaces. It equips teachers with innovative tools to improve instructional strategies and engage students effectively. For learners, ICT provides opportunities to access diverse information, develop digital literacy, and acquire 21st-century skills essential for a knowledge-based society. ICT also bridges geographical and social barriers by facilitating remote and inclusive learning.

Historically, the use of ICT in education began with audio-visual aids like film strips and overhead projectors in the mid-20th century. The introduction of computers in schools during the 1980s marked a significant shift. By the 1990s, the internet revolutionized access to information, leading to the rise of e-learning. In the 21st century, the focus has moved toward mobile learning, cloud computing, artificial intelligence, and blended learning models. Governments and educational institutions worldwide now emphasize ICT integration as a

strategic priority for improving educational quality, accessibility, and equity.

Thus, ICT has evolved from a support tool to a central component of modern education systems, reshaping how knowledge is delivered, shared, and applied.

## Integration of ICT in Teacher Education Programs:-

ICT in Pre-service Teacher Education | ICT in In-service Teacher Training | ICT as a Part of Curriculum vs. ICT as a Tool for Teaching

The integration of ICT in teacher education is crucial for preparing educators to meet the demands of a technology-driven world. Both pre-service and in-service teacher education programs play vital roles in equipping teachers with the knowledge and skills needed to effectively use ICT in the classroom.

In pre-service teacher education, ICT is integrated into the curriculum to help aspiring teachers develop digital competencies from the beginning of their careers. Teacher training institutions now offer specialized courses on educational technology, digital pedagogy, and instructional design using ICT. Pre-service teachers learn to create multimedia lessons, use online platforms for assessment and communication, and explore new modes of collaborative learning. This foundational training helps them become confident users of technology before entering the profession.

In-service teacher training focuses on upgrading the digital skills of practicing teachers. As technology evolves, continuous professional development becomes essential. In-service training programs often include workshops, webinars, online certification courses, and government-sponsored initiatives like DIKSHA and NISHTHA. These programs emphasize practical usage of ICT tools, integrating them with existing teaching strategies, and managing virtual classrooms.

The role of ICT in teacher education can be understood in two ways: as a part of the curriculum and as a tool for teaching. When ICT is included as a subject, it helps teachers understand theories, tools, and ethical issues related to educational technology. When used as a

tool, ICT enhances pedagogy through interactive presentations, simulations, online collaboration, and access to digital resources.

Effective integration of ICT in teacher education ensures that educators are not only digitally literate but also pedagogically competent to use technology in meaningful ways that enrich student learning and promote life-long learning skills.

#### **ICT Tools and Platforms for Teacher Education:-**

Learning Management Systems (LMS) | Digital Content Creation Tools | Online Teaching Tools | Educational Apps and Simulations | Open Educational Resources (OERs)

In teacher education, the use of ICT tools and platforms plays a pivotal role in enhancing the quality, accessibility, and effectiveness of teaching and learning. These tools empower educators to plan, deliver, and assess instruction more efficiently, while also fostering creativity and collaboration.

Learning Management Systems (LMS) such as Moodle, Google Classroom, and Canvas are integral to both pre-service and in-service teacher education. They allow educators to create, manage, and distribute course content, conduct assessments, track learner progress, and facilitate communication. LMS platforms support blended and fully online learning environments, making teacher training more flexible and accessible.

Digital content creation tools like Canva, Microsoft PowerPoint, Prezi, and Genially enable teachers to design visually engaging instructional materials. These tools support the development of presentations, infographics, interactive quizzes, and e-portfolios, promoting creative teaching practices and enhancing student engagement.

Online teaching tools, including Zoom, Microsoft Teams, and Google Meet, have become essential for virtual classrooms. These platforms facilitate live interaction, screen sharing, breakout rooms, and recording sessions, making them ideal for conducting online lectures, workshops, and webinars.

Educational apps and simulations provide interactive and experiential learning opportunities. Tools like PhET simulations, Kahoot!, and Edpuzzle engage learners through gamified quizzes, video-based learning, and virtual experiments. These are especially useful in demonstrating abstract concepts in a tangible way.

Open Educational Resources (OERs) such as SWAYAM, DIKSHA, and ePathshala offer freely accessible learning materials, including textbooks, lesson plans, and video lectures. OERs help bridge resource gaps and support lifelong learning for teachers.

Together, these ICT tools and platforms not only modernize teacher education but also foster innovation,

collaboration, and continuous professional growth among educators.

#### **Pedagogical Benefits of ICT in Teacher Training:-**

Enhancing Instructional Methods | Supporting Differentiated Instruction | Facilitating Collaborative Learning | Promoting Reflective Practices through Video Analysis

ICT offers numerous pedagogical benefits in teacher training, transforming traditional methods of instruction into dynamic, student-centered approaches. It not only enriches the content delivery but also enhances the overall teaching-learning experience by promoting innovation, interaction, and reflection.

Enhancing instructional methods is one of the most significant contributions of ICT in teacher training. With the help of multimedia tools, animations, simulations, and interactive whiteboards, teacher educators can make abstract concepts more concrete and lessons more engaging. ICT encourages the use of blended learning models, flipped classrooms, and project-based learning, making instruction more effective and appealing.

Supporting differentiated instruction is another vital benefit. ICT enables teachers to customize content based on learners' needs, abilities, and interests. For example, adaptive learning platforms can modify the pace and complexity of content according to individual learning styles. Multimedia content and assistive technologies also make learning inclusive, catering to students with different linguistic and physical abilities.

Facilitating collaborative learning is easier through ICT tools like discussion forums, shared documents, virtual classrooms, and social media groups. Teacher trainees can work together on projects, participate in group discussions, and co-create learning materials, regardless of their location. Such collaboration not only enhances communication skills but also fosters a community of practice among future educators.

Promoting reflective practices through video analysis is a powerful way to improve teaching. Recording classroom practices allows teachers to review their instructional techniques, classroom management, and student interactions. Tools like video annotation and feedback platforms help trainees self-assess and receive constructive input from peers and mentors.

In summary, ICT strengthens pedagogical practices in teacher training by making instruction more adaptive, interactive, collaborative, and reflective-essential qualities for effective 21st-century educators.

#### **ICT for Professional Development:-**

Online Courses and MOOCs | Webinars, Virtual Conferences, and E-learning Modules | Social Media and Professional Learning Communities (PLCs)

ICT has revolutionized professional development

for teachers by offering flexible, accessible, and cost-effective opportunities for continuous learning. With the advent of digital platforms, teachers can now upgrade their skills, learn new pedagogical strategies, and stay updated with global educational trends at their own pace. Online courses and MOOCs (Massive Open Online Courses) provide structured and self-paced learning opportunities for teachers. Platforms like SWAYAM, NPTEL, Coursera, and edX offer a wide range of courses on subjects such as pedagogy, classroom management, assessment strategies, and educational technology. These courses are often developed by renowned institutions and experts, ensuring high-quality content. Certificates obtained from these courses also add value to a teacher's professional portfolio.

Webinars, virtual conferences, and e-learning modules are increasingly used for in-service teacher training. These online events connect educators from different regions, allowing them to share experiences, learn best practices, and engage in meaningful discussions. Government initiatives such as DIKSHA and NISHTHA provide e-learning modules aligned with national education goals. Virtual conferences also offer teachers exposure to new research, policy updates, and innovative teaching techniques without the need for physical travel. Social media and Professional Learning Communities (PLCs) play a vital role in informal yet impactful professional development. Platforms like Facebook, WhatsApp, Telegram, and LinkedIn host numerous educator groups where teachers exchange ideas, resources, and support. These communities foster peer learning, mentorship, and a sense of belonging. Teachers can also follow education blogs, YouTube channels, and podcasts to stay informed and inspired.

Overall, ICT has democratized professional development by making high-quality learning resources and collaborative platforms available anytime, anywhere. It empowers teachers to take charge of their growth, ultimately leading to improved teaching practices and student outcomes.

### **Challenges in Implementing ICT in Teacher Education:-**

Infrastructure Limitations | Digital Divide and Equity Issues | Lack of Technical Skills and Training among Educators | Resistance to Change

Despite the numerous benefits of ICT in teacher education, its effective implementation faces several challenges. These barriers hinder the full integration of technology in both pre-service and in-service teacher training programs.

Infrastructure limitations remain one of the most significant challenges, especially in rural and underfunded institutions. Inadequate access to reliable electricity, inter-

net connectivity, computers, and digital classrooms restricts the use of ICT tools. Without basic infrastructure, teacher educators and trainees are unable to effectively use technology in teaching and learning processes.

The digital divide and equity issues further widen the gap between urban and rural, rich and poor, and male and female learners. Many teacher trainees do not own digital devices or have access to high-speed internet at home. This creates unequal opportunities for learning and participation, particularly when courses are delivered online or through blended modes.

Lack of technical skills and training among educators is another critical concern. Many teacher educators and trainers are not sufficiently trained to use ICT tools effectively. They may struggle with using learning management systems, digital content creation tools, or online teaching platforms. Without proper training and ongoing support, the potential of ICT remains underutilized.

Resistance to change is also a psychological barrier in adopting ICT. Some educators are hesitant to shift from traditional chalk-and-talk methods to technology-enabled instruction due to fear of failure, increased workload, or unfamiliarity with new tools. Institutional culture, lack of motivation, and insufficient leadership support can further slow down the adoption process.

To overcome these challenges, there is a need for strong policy support, investment in infrastructure, targeted teacher training, and a cultural shift towards embracing technology in education. Only then can ICT truly transform teacher education in a sustainable and equitable manner.

### **Government Policies and Initiatives:-**

National Education Policy (NEP) 2020 and ICT | SWAYAM, NISHTHA, DIKSHA Platforms | UNESCO and NCERT Guidelines

The Indian government, along with international organizations like UNESCO, has recognized the transformative role of ICT in education and has introduced various policies and initiatives to promote its integration in teacher education.

The National Education Policy (NEP) 2020 places significant emphasis on the integration of ICT across all levels of education, including teacher training. NEP envisions the use of technology to improve teaching-learning experiences, promote online and digital education, and ensure equitable access. It recommends the creation of a National Educational Technology Forum (NETF) to facilitate the exchange of ideas and best practices related to technology use in education. NEP 2020 also encourages blended learning, teacher training through digital platforms, and the development of e-content in multiple languages.

Government platforms like SWAYAM,

NISHTHA, and DIKSHA play a central role in implementing the ICT vision of NEP. SWAYAM (Study Webs of Active-Learning for Young Aspiring Minds) offers free online courses, including teacher training modules from top institutions. NISHTHA (National Initiative for School Heads' and Teachers' Holistic Advancement) provides online training modules aimed at enhancing teacher competencies. DIKSHA (Digital Infrastructure for Knowledge Sharing) is a national platform where teachers can access e-content, lesson plans, quizzes, and assessments aligned with the curriculum. These platforms are instrumental in reaching millions of teachers across the country.

International organizations like UNESCO and national bodies such as NCERT have developed guidelines and frameworks to support ICT in teacher education. UNESCO's ICT Competency Framework for Teachers (ICT-CFT) provides a global standard for integrating ICT in teacher development. NCERT has published ICT curriculum guidelines for teacher educators and promotes the use of digital tools in pedagogy.

Collectively, these policies and initiatives aim to empower educators, bridge the digital divide, and create a tech-savvy teaching workforce aligned with 21st-century learning needs.

#### **Case Studies and Best Practices:-**

Successful ICT Integration Models in Teacher Education Institutions | Innovations by Individual Educators or Colleges

The integration of ICT in teacher education has witnessed several successful models and innovative practices across India and globally. These case studies and best practices demonstrate how thoughtful use of technology can significantly enhance the quality of teacher training and professional development.

One notable example is the Regional Institutes of Education (RIEs) under NCERT, which have adopted ICT-based training modules as part of their pre-service teacher education programs. These institutes use blended learning models combining face-to-face sessions with digital resources accessed via platforms like SWAYAM and DIKSHA. Smart classrooms, digital assessment tools, and virtual labs are regularly employed, fostering interactive and student-centered learning.

Another successful initiative is IGNOU's ICT-enabled B.Ed. program, which uses digital content delivery, online mentoring, and virtual field experiences to support working teachers. This model allows flexibility in learning and caters to a diverse population of aspiring educators.

Individual educators and colleges have also pioneered ICT innovations. For instance, some teacher educators have integrated tools like Google Classroom, Padlet, and Edmodo to enhance collaboration among stu-

dent-teachers. Colleges like Tata Institute of Social Sciences (TISS) have developed open-source platforms such as TISSx, which host courses and workshops for teacher education with high-quality digital resources.

In rural areas, initiatives like "Connected Learning Initiative (CLIX)" have empowered teachers with digital pedagogy tools and student-centric teaching methods through mobile and offline learning models. This project, run by TISS and MIT, combines ICT tools with contextual content and hands-on training.

Such case studies reflect the potential of ICT to overcome geographic and economic barriers, improve teaching quality, and build a tech-competent teaching workforce. They also highlight the importance of institutional vision, leadership, and teacher motivation in making ICT integration successful and sustainable.

#### **Conclusion and Recommendations:-**

Summary of ICT's Role in Transforming Teacher Education | Strategies for Effective ICT Integration | Recommendations for Policy and Practice

ICT has emerged as a powerful tool in transforming teacher education by enhancing the quality, accessibility, and effectiveness of teaching and learning. From improving instructional methods and fostering collaboration to supporting personalized learning and continuous professional development, ICT empowers both pre-service and in-service teachers to become more competent, innovative, and future-ready educators.

The integration of ICT in teacher education enables institutions to move beyond traditional classroom boundaries, offering flexible and learner-centered environments. It supports blended and online learning models, facilitates reflective practices through digital tools, and connects teachers to global educational resources and communities. Government platforms such as SWAYAM, DIKSHA, and NISHTHA, along with the vision set forth in NEP 2020, have laid a strong foundation for digital transformation in the education sector.

For effective ICT integration, certain strategies must be adopted. These include continuous training for teacher educators, development of localized digital content, regular evaluation of ICT tools, and inclusive access to technology for all learners. Institutions should also adopt a blended learning approach that combines the strengths of both face-to-face and online instruction.

Recommendations for policy and practice include increased investment in ICT infrastructure, especially in rural and underserved areas; the inclusion of ICT competency standards in teacher education curricula; and strong monitoring mechanisms to assess the impact of ICT initiatives. Furthermore, collaboration among governments, educational institutions, and private technology providers is essential to scale up successful models.

In conclusion, ICT is not just a supplementary tool but a transformative force in teacher education. By embracing it strategically and inclusively, education systems can ensure that teachers are well-equipped to meet the demands of 21st-century classrooms and foster meaningful, technology-enriched learning experiences for all students.

#### References:-

1. National Education Policy 2020. Ministry of Education, Government of India, 2020. <https://www.education.gov.in>
2. "ICT in Education." UNESCO, 2022. <https://www.unesco.org/en/education/ict>
3. NISHTHA: National Initiative for School Heads' and Teachers' Holistic Advancement. NCERT, 2021. <https://ncert.nic.in/nishtha.html>
4. DIKSHA Platform. Ministry of Education, Government of India. <https://diksha.gov.in>
5. SWAYAM: Study Webs of Active Learning for Young Aspiring Minds. Government of India. <https://swayam.gov.in>
6. Mishra, Sanjaya, and S. C. Sharma. "Development and Challenges in ICT Integration in Teacher Education in India." *The Turkish Online Journal of Educational Technology*, vol. 14, no. 4, 2015, pp. 1-10.
7. UNESCO ICT Competency Framework for Teachers. UNESCO, 2018. <https://unesdoc.unesco.org/ark:/48223/pf0000265721>
8. Ranjan, Arvind Kumar, and Poonam Bhatia. "Role of ICT in Teacher Education." *International Journal of Education and Applied Research*, vol. 4, no. 1, 2014, pp. 13-15.
9. TISS CLIX Team. "Connected Learning Initiative (CLIX)." Tata Institute of Social Sciences, 2020. <https://clix.tiss.edu>
10. Srivastava, Mamta. "ICT in Education: Issues and Challenges." *International Journal of Research in Humanities and Social Studies*, vol. 3, no. 11, 2016, pp. 23-28.

# Natural Resource and Sustainable Development of Almora District

Dr. Pushpa

Assistant Professor, Dept. of Geography, S.S.J. University, Pt. B.D. Pandey Campus, Bageshwar

**ABSTRACT:**-Natural resource management and sustainable development are closely intertwined, with sustainable development relying on the responsible use of natural resources to meet current needs without compromising the ability of future generations to do the same. Natural resource management ensures that resources are utilized efficiently, preserving biodiversity, and minimizing environmental impact, all while supporting social and economic well-being. Sustainable development is a new concept. It aims the development of settled population without adversely affecting the fundamental attributes of the environment. The Brundtland Commission's report defined sustainable development as "development which meets the needs of current generations without compromising the ability of future generations to meet their own needs". It assists the communities' attitude towards economic, social and environmental development. It also focuses on the significance of natural resources and their sustenance along with the socio-economic development. Land and water are two major resources which have to be managed properly for the sustainable development in the Himalayan region. These resources if not used systematically will lead to degradation of environment along with decline of economic growth. In the past few years we have come across this environmental problem in the form of land degradation, water pollution and as a result natural disasters of the Sep.2010 and recently in June 2013. If human beings will not consider it deeply they will be facing the consequences of these disasters for the forth coming years. Almora district which lies in the mountainous region of the Lesser Himalayas has been selected for the present study. This is facing the consequences of the mismanagement of the environmental component (i.e., land & water).

**KEY WORDS:**-Generation, natural resource, degradation, anthropogenic and tecnogenic activities, natural disaster, consequences.

**INTRODUCTION:**-Natural resources are derived from the environment, the state of air, water, and the climate are of particular concern. "The IPCC fifth

Assessment Report outlines current knowledge about scientific, technical and socio-economic information concerning climate change, and lists options for adaption and mitigation. Environmental sustainability requires society to design activities to meet human needs while preserving the life support systems of the planet. This, for example, entails using water sustainably, utilizing renewable energy, and sustainable material supplies (e.g. harvesting wood from forests at a rate that maintain the biomass and biodiversity)". Brundtland Commission's report defined Sustainable development as "development that meets the needs of the present, without compromising the ability of future generations to meet their own needs."<sup>2</sup>. It aims the development of settled population without adversely affecting the fundamental attributes of the environment. It assists the communities' attitude towards economic, social and environmental development. It also assures the creation of a society in which every individual gets an equal opportunity of personal well being, social harmony and it provides a strong and healthy environment to future communities. In reference to the human development three new variables came forth after the Second World War: I) large increment in population resulting in the exploitation of natural resources. II) Development of advance technology which promoted the exploitation of new resources. III) Human life was getting a new meaning and advance needs were generated.

Environment was getting deteriorated due to the above three variables. Till 1970 this deterioration reached its heights and as it was towards its peak, the consequences were noticed as environment was responding negatively. As a result, the concept of Sustainable devel-



opment originated. George Parkins Marsh in his book "Man and Nature" creates consciousness among people regarding environmental degradation and their serious consequences. One of the most significant works was carried out by Dosman in 1985. He clarified that environmental and developments are first means not ultimate aim. In this direction Dosman introduced the following model:

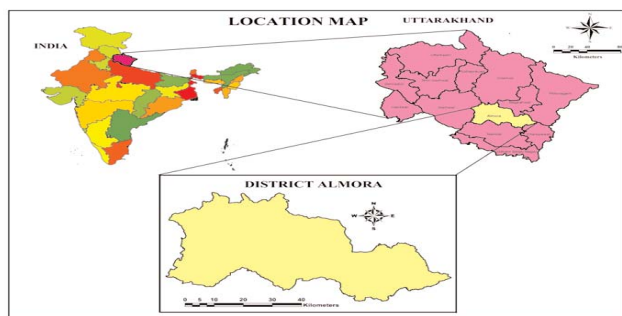
The co-ordinates of this triangle represent the concept of development. Their forming a triangle signifies it to be sustainable development, otherwise it is imbalanced development.

**OBJECTIVES:-**The present paper aims to study the proper management of land and water resources for sustainable development of the study area. It also draws attention towards the changing population pattern, impact of urbanization on environment and its causes and consequences as follows:

1. To identify the land use of study area.
2. To know about the water bodies of the study area.
3. Balance between present use and future planning towards sustainable development.

**METHODOLOGY:-**Concerning with the sustainable development of Almora district, the study was completed in the following phases: survey of India topographical sheet 53 O/10 was used to prepare the base map of the study area. Other required data were obtained from secondary sources. Observation and planning for sustainable development was possible by obtaining the above mentioned information.

**STUDY AREA:-**Almora is a hilly district of the Kumaon division of Uttarakhand state of India. This district came into existence in 1839AD. The study area located at 29°25' N to 29°50' N and 72° 2' E 80°39' E (fig.1). Almora municipality is the oldest municipality of Uttarakhand. Ranikhet, Dwarahat and Almora district headquarter are three main towns located in Almora district. They treasure rich flora and fauna and unique cultural heritage. They are enveloped by pleasant atmosphere. Ranikhet has an elevation of



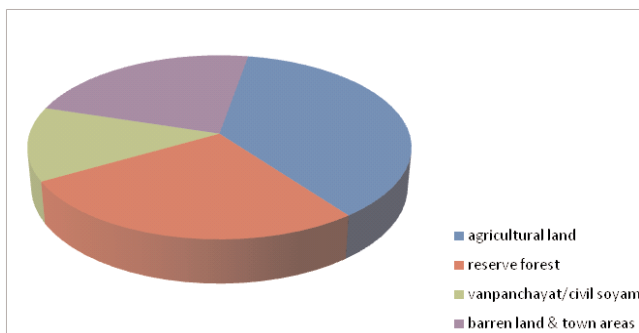
**Fig.- 1 Location Map of Study Area**

1869 m. above mean sea level. According to India census 2001 Ranikhet had a population of 19,049. Chaubatiya garden which is located about 10 km. from Ranikhet has a

very wide scope in fruits plantation. It provides an opportunity to the local people to earn their livelihood. On the other hand Dwarahat lies between 29 47 N to 29 78 N latitude and 79 26 E to 79 43 E longitude. It has an average elevation of 1510 m. According to India census 2001 Dwarahat had a population 2543 which increased to 2749 as per the survey of census 2011. It is located at the southern edge of the Kumaon hills of the Himalayan range. It is surrounded by pine, fir and deodar trees. Almora was one of the most populous towns of Almora district having 28051 persons in 1991. Now Almora town has a population of 34122 persons (Census, 2011). According to census 2001 Almora had a population of 30,613, which increased to 130112 in 2011.<sup>3</sup>

**RESULT AND DISCUSSION:-**Land and water are two major components of environment, which have to be utilized wisely for sustainable development. Almora district located in the hill slopes are more vulnerable to disasters as the rapid urbanization process in this district has not been a planned one. Anthropogenic activities are to a great extent responsible for the land and water degradation. Increasing population and their needs for shelter have coincided which results in the growing demand for land, water, foods and other goods, this in turn has increased the pressure on natural resources and ecosystems leading to their over exploitation and degradation. For a balanced sustainable development the consumption of natural resources should be at a rate at which they can be replenished naturally. If used up faster it results in unsustainability. "The district has a network of 2592 km. of perennial streams of three major river systems, viz., Western Ramganga, the Kosi, and the Saryu. A large part of the district in its western part is drained by the Ramganga River and its tributaries {Binno (23.94km.), Gagas (48.4km.), Khatron (14km.)}. Ramganga is the longest river (97.7km.) of the district. The central part of the district is drained by the Kosi River and its tributaries {Suyal (36.71km.), Nana kosi (14.9km.), Khulgad (9.8km.), Jamtharagad, Naryigad, Sarodgad and Kuchgad}. The eastern part of the district is drained by the tributaries of the Saryu River."<sup>4</sup>

"The geographical area of the district Almora is divisible into five major types of land use categories. These are reserved forest area, Vanpanchayat/civil Soyam areas, agricultural land (which includes rural settlement also), barren land and town areas (fig.2). Following pie diagram suggests that about 37% area of the district is used for cultivation of different crops, 27% is covered by the reserve forest area, 13% falls under Vanpanchayats/civil Soyam lands and remaining 23% of the district is still barren condition (which includes town areas also) indicating ample scope for a forestation works and horticultural development in the district" (Jina 1978).

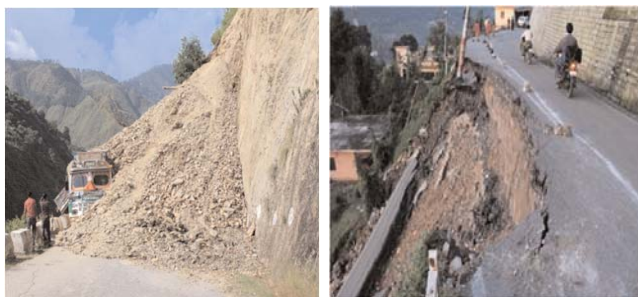


**Fig-2 Land Use Pattern of Almora District**

Due to the rapid urbanization the problem of unplanned house construction has arise leading to the degradation of natural resources (land and water) {plate-1}. Rivers and streams have changing their own drainage path due to unplanned construction and mismanaged planning in study area. In order to fulfill their materialistic needs human beings are degrading natural resources. They are ignorant about the drawbacks of such exploitation. Though we have faced two fatal disasters in the year 2010 and 2013 but still our hunger for materialism is unfulfilled. {Plate 2 & 3}



**Plate-1 unplanned house constructions**



**Plate- 2 & 3 Almora Disaster 2010**

Now-a-days newly built houses do not have proper drainage system for the outlet of water as a result the water reaches either the foundation of the house or create moisture/ dampness insight the rooms of that buildings, it finds its way through piece of land, keep flowing in the path way/road/routes. But this problem was not faced by the ancient period because they had a proper drainage system in their houses. Moreover they had a well established culvert system for the outlet of water on the road. Culvert system is a man-made drainage system which helps in the outlet of rain water through proper

channel without adversely affecting its surroundings. In the past few years, a sudden increase in population has been noticed in the study area. The reason for this is migration of a huge mass from villages to towns for education and other economic activities. Local migration can be seen in the past two decades. Identification of resources (land and water) should be in terms of their cost. So far land and water are considered as free or without any cost. If we add cost (prices) tags in these resources we can use them more wisely. These tags should not be for sale but should be for understanding value of these resources. We should not try to convert these components into monetary terms but preserve them as they are, if not necessary. The carrying capacity of our environment should be understood properly and our economic activities should be planned and restricted in such a way so that our future generations can also enjoy the benefits of our environment for a much longer period. To effectively manage natural resources and promote sustainable development, focus on implementing strategies like sustainable agriculture practices, reducing consumption, promoting waste reduction and followed environmental regulations.

#### REFERENCES:-

1. Desai, Anjana (1985), Environmental Perception: The Human Factor in Urban Planning, Ashish Publishing House, New Dehli
2. Jina, L. (1978): The Land Utilization in the District Almora (Unpublished Ph. D. Thesis)
3. Joshi, Smt. Meena. A Geomorphic Analysis of slope instability and its Environmental Impact in Saran Catchments of Almora district - D.R.K. Pandey 29-12-92, 8-12-95, 10-11-97.
4. Joshi, J. (2011): Environment Development and Society-Hydrological Impact of Deforestation a study from Kumaun Himalaya. Durga Maa Prakashan Haldwani. pp.20-35, ISBN-978-81-920509-0-4
5. Joshi, J. (2015): Mass Wasting Processes in Khairma Basin: Kumaun Himalayan, Universal Journal of Environmental Research and Technology, Eurasian publication, volume 5, issue 4.
6. Joshi, J. & Bisht, H.S.(1995): A Preliminary Report on the Impact of Deforestation in the Hydrologic cycle of the Himalayan Terrain, Bulletin of Pure and Applied Science . vol.14
7. Khoshboo, T.N.(1986): Environmental Priorities in India and Sustainable Development , Presidential Address, Indian Science Congress Association, PP.1 -224S
8. Kumar, K. & Rawat, D.S. (1996): 'Water Management in Himalayan Ecosystem: A Study

- of Natural Springs of Almora.' Indus Publication, New Delhi.
9. Meshram, D. S. Urban Land Use and Development Planning: Problems and Solution, Paper presented at the National Seminar on Future Cities -Urban Vision: 2021,October 6-7,1997
  10. Pushpa, & Joshi, J. (2016): Urbanization and Anthropogenic Transformation of Hill Slopes in Almora Town of Kumaun Himalaya, Universal Journal of Environmental Research and Technology, Eurasian publication volume 6.
  11. Pushpa and Joshi J. "Environmental Effects on Urban Expansion: A Case Study of Almora Town" edited book "Environmental Problems in Himalaya Region Causes Impact & Solutions", January 2017, pp 28-39, ISBN 978-81-7988-168-2.
  12. Joshi J. and Pushpa, "Urbanization, Drainage Systems and Sustainable Development: An Experimental Study from Almora Town" International Journal of basic and Applied Research, April 2019, Volume 9, No. 4, ISSN2249-3352(P), 2278-0505(E), Cosmos IF 5.960.
  13. Pushpa and Joshi J. (2019) "Urbanization and Its Impact on Geomorphic Processes: A Comparative Study of Almora and Bageshwar Towns", LAP Lambert Academic Publication, ISBN 978-620-0-094391.,
  14. Rawat, J. S. (2005), Project Completion Report-Setting -up of Natural Resources Digital Database Centre at Almora, Uttaranchal and Creation of An Integrated Database for Developmental Planning.page-72
  15. Rawat, J. S. (2005), Project Completion Report-Setting -up of Natural Resources Digital Database Centre at Almora, Uttaranchal and Creation of An Integrated Database for Developmental Planning.page-66
  16. Rawat, D. S. (1980): An Analytical Study of Urban Population of Almora District, M. A. Project Thesis (unpublished), Kumaun University, Almora , p.-24.
  17. \*1-[http://en.wikipedia.org/wiki/sustainable\\_development](http://en.wikipedia.org/wiki/sustainable_development)
  18. \*2-[http://www.unece.org/oes/nutshell/2004-2005/focus\\_sustainable\\_development.html](http://www.unece.org/oes/nutshell/2004-2005/focus_sustainable_development.html)
  19. \*3-<http://en.wikipedia.org/wiki/almora>

# A Comparative Analysis of Stress Level and Coping Mechanism of Coaching Students Preparing for NEET and JEE Exams From Kota City : Among Those Living with Parents and Those Living in Hostels Alone

Ms. Tarannum Zafar

Prof. Anil Kumar Jain

1. Research Scholar, Dept. of Education, Vardhman Mahaveer University, Kota, Rajasthan

2. Head, Dept. of Education, Dean, School of Educational Studies, Dr. Hari Singh Gour Central University, Sagar, M.P.

**Abstract:**-This explorationpaperinvestigates the comparative analysis of stress levels of studentspreparing for NEET and JEE from coaching centres of Kota city and to examine the differences in stress levels betweencoaching students who live with their parents in Kota and those who live alonein hostels or PG. The methodologyincludes a cross-sectional descriptive explorationdesign. Data was collected byconducting survey using a questionnaire with a sample size of 100 coachingstudents (including 50 NEET & JEE aspirants living with parents and other 50 living alone in hostels or PG of Kota City). The results showed that students who live with their parents get support and guidance from them. Students who are hostel residents feels loneliness, have the issue of proper food and health related problems, all these factors contribute to high levels of stress among these students.

**Keywords:**-Coaching, academic, living conditions, stress, coping mechanisms, mental health.

**Introduction:**-Kota,attracts thousands of aspiring NEET and JEE due to its intensive coaching system. These coaching institutes are known for their structure andcompetitive environment, which often lead to raise of stress among these coaching students.

The stress level of students preparing for NEET and JEE is increased due to several factors such as academic pressure, fear of failure, lack of social interaction and recreation, time management and peer competition

This paper helps to understandthe differences in stress levels between these students examining the impact of living conditions on mental health, academic performance, and overall quality of life.

**Background of the Study:-**

**Nature of the Competitive examination (NEET and JEE):-**Sharma, e.t, al(2024)showed that both these competitive exams demand intensive preparation. The difference in subjects and preparation styles leads to varied stress pat-

terns. For instance, NEET aspirants often face stress due to the vast syllabus, whereas JEE aspirants report cognitive fatigue from solving complex numerical problems (Gautam, et. al, 2019).

**Stress due to Academic Settings:-**Researches have shown that students who are preparing for JEE and NEET faces stress due to the overwhelming pressure of Institutes and competitive environment which leads them to develop the fear of failure.Academic stress can also lead to decreased physical activity and sleep, which in turn can contribute to anxiety, depression and suicidal ideation (Jeyasingh, 2022).

**The Role of Living Arrangements:-**Studies have proved that students who are living with parents are provided with a good emotional support, a strong sense of security and a familiar environment. On the other hand, those students who live in hostel feels loneliness, lack of family support and the fear of being a failure always strike in their mind.The fear of not meeting parental expectations, coupled with peer pressure and low self-esteem, can drive students to contemplate suicide. Kannan, Shangavi., et. al, (2024)

**Psychological Stress and Mental Health:-**Sahu,P. et. al. (2024)noted that JEE student faces sleep disturbance and reduction of social interaction with the society due to their problem-solving practices. In contrast, NEET students face the fear of failure and stressed due to the vast theoretical syllabus.

Studies indicated that both JEE as well as NEET students have high level of stress and depression.The average Stress score is higher for students living in hostels as compared to students living with their parents.(Kaur, Kajleen. et. al, 2024)

**Coping Mechanisms and Interventions:-**Students living with parents are presented with multiple prospects like their support and guidance while hostel residents try to

cope up by themselves which may reduce or amplify stress levels. Interventions like training, counselling support, and stress-management workshops have shown to be effective in reducing the stress.

**Coping Mechanisms Generally Followed by Coaching Students:** Those students who live with parents often uses Problem Focused and Emotional Focused coping mechanisms. They get emotional support and advice during their stressful periods.

Students living in hostels alone has to manage things individually or by talking with their family and friends, these students were more likely to use Avoidance coping mechanisms.

#### Aim of the Study:-

- ◆ To analyse the difference in the living conditions of coaching students preparing for NEET and JEE among those who are living with parents and those who are living alone in hostels of the Kota City.
- ◆ To find out the difference in the level of stress among these two groups of coaching students.
- ◆ To find out the Coping mechanisms adapted by these students to overcome the academic stress.

#### Research Objectives:-

- ◆ To compare the stress levels of NEET and JEE aspirants living with parents vs.hostel residents.
- ◆ To find out the effect of living conditions in the academic performance of these students.
- ◆ To examine the coping mechanism and Interventions used by students to overcome stress in these to different living conditions.

#### Methodology:-

- ◆ **Research Design:** This study follows a comparative cross-sectional survey design to analyze and compare the levels and causes of stress among these two groups
- ◆ **Sample Population:** The sample consisted of 100 students preparing for NEET and JEE examinations, (50 students living with parents and 50 students living alone in the hostels of Kota city). The selection of participants was based on convenience sampling.

#### Data Collection Tools:

**Stress Level Measurement:** A self-designed Stress Scale was used to assess the stress levels of participants. It consists of a total of 20 items (compiled into 8 Stress Indicators). The students are required to answer in Yes or No against each item.

◆ **Coping Mechanisms Measurement:** Stress coping mechanisms are measured using a self-made Coping Questionnaire. There are total 40 items (compiled into 11 Coping Strategies). The students are required to answer the questions on a five-point Likert scale.

◆ **Data Analysis:** Quantitative data was analysed using SPSS software.

Table - 1 Stress Indicators among students living with Parents V/S students living in hostels alone

| Stress Indicators (Total Students 100)      | With Parents (50) | In Hostels Alone (50) | $\chi^2$ (Chi-Square Value) | p-value | Significant ( $\alpha = 0.05$ ) |
|---|-------------------|-----------------------|-----------------------------|---------|---------------------------------|
| Students reported with High Academic Stress | 56%               | 73%                   | 2.16                        | 0.141   | No                              |
| Students facing Sleep Disturbances          | 48%               | 65%                   | 3.92                        | 0.048   | Yes                             |
| Feeling of isolation / Loneliness           | 25%               | 61%                   | 10.24                       | 0.0014  | Yes                             |
| Lack of Emotional Support                   | 39%               | 80%                   | 13.93                       | 0.0002  | Yes                             |
| Relation with Peer group / Family           | 52%               | 46%                   | 0.36                        | 0.548   | No                              |
| Seeking Medical/ Counsellors Help (Therapy) | 15%               | 26%                   | 1.45                        | 0.229   | No                              |
| Parental expectations                       | 20%               | 26%                   | 0.36                        | 0.548   | No                              |
| Pressure of Getting Higher grades           | 68%               | 62%                   | 0.43                        | 0.513   | No                              |

#### RESULTS:-

- ◆ Students living with parents are reported with low Academic stress (56%) as compared to those who are living in hostels (73%)
- ◆ Students who are living with parents feel less isolated (25%) due to their parents supports while hostel residents feel themselves to be more isolated (75%).
- ◆ The stress level of parental expectations are higher in hostel residents (26%) as compared to those living with parents (20%).
- ◆ The stress for getting higher grades is much more in students who are living with their parents (68%) as compared to those living in hostels alone (62%).

Table 2 -Coping mechanism used to overcome stress among students living with Parents V/S those living alone in hostels

| Coping Mechanism (Total Students=100) | Students living with parents (50) | Students living in hostel (50) | $\chi^2$ (Chi-Square Value) | p-value (df = 1) | Significance (p < 0.05) |
|---------------------------------------|-----------------------------------|--------------------------------|-----------------------------|------------------|-------------------------|
| Watching TV                           | 45%                               | 60%                            | 1.69                        | 0.193            | No                      |
| Physical Activities                   | 60%                               | 50%                            | 0.65                        | 0.420            | No                      |
| Yoga                                  | 30%                               | 35%                            | 0.10                        | 0.752            | No                      |
| Professional Help (Counselling)       | 12%                               | 20%                            | 0.67                        | 0.414            | No                      |
| Involved in hobbies (dance, etc)      | 38%                               | 45%                            | 0.26                        | 0.612            | No                      |
| Sleeping more                         | 20%                               | 30%                            | 0.85                        | 0.357            | No                      |
| Excessive Eating                      | 48%                               | 65%                            | 3.92                        | 0.048            | Yes                     |
| Spending time on social media         | 25%                               | 61%                            | 10.24                       | 0.0014           | Yes                     |
| Talking to family/friends             | 85%                               | 42%                            | 18.13                       | < 0.0001         | Highly Significant      |
| Listening to Music                    | 65%                               | 72%                            | 0.29                        | 0.590            | No                      |
| Being religious                       | 62%                               | 44%                            | 2.57                        | 0.109            | No                      |

#### RESULTS:-

◆ Students living with parents spend less time in watching TV (45%), social media (25%) as compared to those living alone in hostels (60% and 61% respectively).

- ◆ Students living with parents tend to rely more on social support like talking to family/friends (85%) as compared to those living alone in hostels (42%).
- ◆ Students living with parents are more involved in physical activities (60%) as compared to those living alone in hostels (50%).
- ◆ Those living in hostels alone show higher reliance on individual activities or hobbies(45%) as compared to students living with parents (38%).
- ◆ Students living with parents follow a regular routine and spend less time in sleeping (20%) as compared to those living in hostels (30%).
- ◆ Students living in hostels listen to music more often (72%) as compared to those living with parents (65%).
- ◆ Students those who are living with parents are found to be more religious (62%) as compared to those living in hostels (44%).
- ◆ The Hostel resident students eat excessively including junk food (65%) as compared to those living with parents (48%).

**Discussion:-**From the present research it is cleared that students living with parents feels less stress than those who are living in hostels alone. A sense of familiar environment, good food and hygiene, emotional care etc are some factors which play a crucial role in relieving the academic and mental stress during their exam preparation. Conversely, hostel residents have to make a lot of adjustments with respect to their living conditions, food and health. The competitive environment build's a lot of pressure on their mind thus effecting their physical and mental health.

The results highlight the coping mechanisms soft- en used by both the groups. Moreover, institutes also provide the counselling facility which would help the students to overcome their stress. Parents also have to look forward towards the mental as well as physical health of their children.

**Conclusion:-**This study unlocks the importance of living arrangements in evaluating the stress level with- in competitive academic settings, such as those available in Kota with their parents and those living alone in hostels. The research finds that students who live with parents have lower stress level as compared to those who live in hostel. They have more tools to overcome from their stress rather than those who are hostel residents.

#### References:-

1. Sahu, P., Kumar, M., Sahu, D., & Chauhan, S. (2024). A Correlational Study between the level of academic performance and the level of aca- demic stress among Young Adults. *Revista Review Index Journal of Multidisciplinary*, 4(2), 08-16.
2. Waseem, Afreen. "Examining the Influence of

Academic Stress and Suicidal Ideation on Mental Health in Coaching Students: A Cross-Sectional Study."(2023)

3. Jeyasingh, Evangelin Sally. "Coping strategies for adolescents dealing with academic stress." *Saudi Journal of Nursing and Health Care* 5.1 (2022): 7-11.
4. Gautam, Sarika, Bansh Gopal Singh, and S. Rupendra Rao. "Depression in Kota Coaching Students in Relation to Motivation-Type and Perceived Ability." *Think India Journal* 22 (2019): 866-873.
5. Sharma, Hiya, Rupsa Karmakar, and Samir Khan. "A Peek in the Mind of Young Aspirants of Entrance Examinations." *International Journal of Indian Psych?logy* 12.1 (2024).
6. Kannan, Shangavi, and Vyjayanthi Mala. "Emotional Regulation and Goal Setting among Students Preparing for NEET Exam." *International Journal of Indian Psychology* 12.2 (2024).
7. Kaur, Kajleen, et al. "Assessment and Analysis of Factors Impacting Stress in Students in Higher Educational Institutes in Delhi-NCR." *Int. J. Exp. Res. Rev* 41 (2024): 305-321.

# Status of Women Entrepreneurship in India Post New Economic Reforms : Progress, Problems and Persistent Challenges

Dr. Sitari Ram

Assistant Professor, Dept. of Economics, Seth Phool Chand Bagla PG College, Hathras, UP.

**Abstract:-** Women entrepreneurs undertake a wide range of responsibilities when launching and managing a business. These include generating and refining ideas, setting objectives, preparing project plans, analyzing products, choosing a suitable business structure, completing promotional procedures, securing funding, acquiring resources such as labor and materials, and overseeing business operations. Women are not only building successful careers and enterprises to support themselves and their families, but are also reshaping the entrepreneurial landscape through innovative business models and expanded presence. Their influence extends across multiple sectors-including defense, law, media, technology, science, commerce, and public administration-especially within the MSME (Micro, Small and Medium Enterprises) sector. This study explores the evolution of women entrepreneurship in the post-economic reform era, raising awareness of its significance for global development from economic, social, and rational perspectives. A comprehensive literature review was conducted to understand the concept, challenges, and societal perceptions of women entrepreneurship in India. The study concludes by highlighting key obstacles faced by Indian women entrepreneurs, notable success stories, and the diverse factors influencing their entrepreneurial journey.

**Keywords:-** Women entrepreneurship, enterprise development, business challenges, success stories, gender equality, economic reform, entrepreneurial risk, finance, social recognition.

**Introduction:-** Women entrepreneurs are individuals who conceptualize, initiate, organize, and manage business ventures, taking on the associated risks and uncertainties. According to the Government of India, a women-led enterprise is defined as one where a woman owns and controls at least 51% of the capital and ensures that at least 51% of the workforce comprises women. Factors such as economic advancement, improved educational access, urban growth, democratic values, and societal acknowledgment have collectively contributed to the rise of women entrepreneurs in India. Government initia-

tives like Startup India and Standup India have further accelerated this trend by providing targeted support. In today's India, the demand for women entrepreneurs is higher than ever, driven by the desire for social standing, independence, and economic participation. By engaging in business, women can achieve personal identity and societal recognition, often interacting with influential individuals across sectors. Entrepreneurship, recognized as a key driver of economic growth and societal progress, has drawn significant attention from researchers and policy-makers alike. Studies have consistently shown that women's participation in entrepreneurship contributes to poverty reduction, increased per capita income, and job creation. Nonetheless, a persistent gender gap remains in entrepreneurship, both globally and in India, as highlighted in the Global Entrepreneurship Monitor (GEM) 2015-16 report...

**Review of Literature:-** Women make up nearly 45% of India's population, and their educational and literary status has significantly improved over recent decades. Increasingly, higher education and research institutions are offering specialized training across various domains, particularly in business and entrepreneurship. At this critical stage, there is a pressing need to implement comprehensive programs that promote entrepreneurial awareness, orientation, and skill development among women. Currently, the number of such institutions is limited, and their services and opportunities are not widely known. Considerable research has been conducted in the last few decades on this subject. The following section presents a review of relevant literature on women entrepreneurship.

## Liberalization and Women Entrepreneurs: A Global and Local Perspective

Numerous studies have explored the impact of globalization and economic reforms on women entrepreneurs at macro, regional, and micro levels, using both primary and secondary data sources.

Roy (1999) emphasized strategies for poverty reduction within the framework of liberalization and globalization. He highlighted structural changes in developing

economies, the consequences of structural adjustment programs (SAPs) on growth, inequality, and poverty, and the significance of integrating pro-poor policies. Roy advocated for an active role of the state in creating an enabling environment for markets to function efficiently, in alignment with broader goals of economic competitiveness and poverty alleviation.

Varadarajan and Murugan (1995) discussed the hurdles faced by the Indian economy during early globalization efforts. They pointed out several critical challenges: the significant devaluation of the Indian rupee in 1991, underwhelming export performance, and the broader issues of industrial restructuring and public participation in global competitiveness. According to their analysis, the success of globalization in India would depend on long-term industrial growth and effective public engagement.

Patel and Talati (1995) analyzed India's economic liberalization, focusing on the New Economic Policy (NEP), which included measures such as deregulation, devaluation, and reduced subsidies. While these policies were intended to increase competitiveness, productivity, and modernization, critics raised concerns about their effectiveness. The authors highlighted the emergence of alternative economic models, like the Gandhian trusteeship model, which align better with India's unique socio-economic conditions.

Thompson (1999) examined how economic globalization has been understood and its broader impact on international governance. He argued that globalization erodes public trust in governance systems, leading to diminished expectations and reduced policy effectiveness. He stressed the need for adaptive policymaking to keep pace with the evolving global economy, which is generating new actors and interests.

#### **Contemporary Trends in Women Entrepreneurship:-**

Malik and Rao (2018) conducted a study involving 135 women entrepreneurs in Chandigarh to explore their motivations for starting businesses, their perceptions of success, and the attributes contributing to their achievements. The findings revealed that women were increasingly willing to face entrepreneurial challenges. Unlike traditional ventures like making papads and pickles, modern women entrepreneurs are venturing into innovative business areas. Their motivation often stems not from economic necessity but from a desire for creativity and self-fulfillment. The study also noted that women's education is playing a pivotal role in fostering social change.

#### **Objective of the study:**

The main objectives of the study are following.

1. To understand the importance of women entrepreneurship in India.
2. To analyze women role in the development of

Indian Economy.

3. To understand initiatives taking by Indian government to developed women entrepreneurs after 1991
4. To understand National Policy for Skill Development & Entrepreneurship, 2015
5. To know Problems of Women Entrepreneurs in India .

**RESEARCH METHODOLOGY:-**The present study based on extensive study of secondary data collected from various books, National & International Journals and public and private publications available on various websites and in libraries focusing on various aspects of Women Entrepreneurship. This research is also a desk study based on secondary information various articles, journals, and websites.

#### **Importance of Women Entrepreneurship in India:-**

Women entrepreneurship has traditionally been linked to broader themes of empowerment and gender equality. In recent times, it is increasingly recognized as a vital tool for enhancing the well-being of women, particularly in developing nations. It is also being viewed as a means to challenge conventional gender roles, especially in conservative societies, and to shift the power dynamics within families.

Entrepreneurship empowers women by enabling them to contribute actively to economic development. It not only enhances their social standing but also increases their influence in decision-making processes at various levels. This paper explores how entrepreneurial initiatives can be effectively utilized to empower women and promote their inclusion in mainstream economic activities.

Since women constitute nearly half of the global population, their active participation in the economic sphere is essential. Empowerment and entrepreneurship are closely interconnected-engaging in entrepreneurial ventures equips women with the tools to gain social, cultural, and financial independence.

#### **Key Contributions of Women Entrepreneurs:-**

◆ **Economic Development:** Women's participation in business contributes significantly to overall economic growth. Their involvement helps address issues like informal sector challenges and poverty, which are key concerns for policymakers.

◆ **Capital Formation:** By channelling public savings into business ventures, women entrepreneurs stimulate productive investment. This mobilization of funds contributes to the growth of national wealth and accelerates the pace of economic development.

◆ **Rising Per Capita Income:** Women-led enterprises help transform underutilized resources into valuable goods and services. This enhances national output and raises per capita income-an important indicator of a coun-

try's economic health.

◆ **Employment Generation:** Women entrepreneurs are a growing source of employment generation. By establishing micro and small enterprises, they provide job opportunities to others, both directly and indirectly.

◆ **Balanced Regional Growth:** Many women set up businesses in rural or underdeveloped areas, taking advantage of government incentives. This helps reduce regional imbalances and promotes equitable economic development.

◆ **Enhanced Living Standards:** Small-scale industries led by women help reduce shortages of essential goods and introduce innovative products. This increases accessibility and affordability, improving the overall standard of living.

◆ **Innovation:** Women entrepreneurs often drive innovation through the development of new products and services or by improving existing ones. Their contribution to innovation plays a significant role in fostering industrial progress and employment.

### **Government Initiatives Supporting Women Entrepreneurs Since 1991**

Although women's development has been part of India's policy framework since independence, major shifts occurred after the 1991 economic reforms. Since then, the government, along with various NGOs, has increasingly promoted women's participation in economic activities through self-employment and business ventures.

#### **Key Policy Initiatives through Five-Year Plans**

◆ **Eighth Plan (1992-1997):** Focused on empowering women at the grassroots through local governance structures like the Panchayati Raj Institutions.

◆ **Ninth Plan (1997-2002):** Introduced the Women's Component Plan, mandating at least 30% of budget allocations in specific sectors for initiatives benefiting women.

◆ **Tenth Plan (2002-2007):** Emphasized implementation of the National Policy for Empowerment of Women (2001) and adopted a rights-based approach to ensure the well-being and protection of women and children.

◆ **Eleventh Plan (2007-2012):** Prioritized the empowerment of women in political, legal, educational, and economic spheres.

◆ **Twelfth Plan (2012-2017):** Focused on enhancing women's dignity and equality by increasing their control over decisions, resources, and societal perceptions. It aimed to integrate gender concerns into all national policies and schemes.

### **National Policy for Skill Development and Entrepreneurship (2015)**

Launched on July 15, 2015, this policy aimed to build a strong foundation for skill development and foster

an innovation-driven entrepreneurial ecosystem. Its vision was to promote skill-building on a large scale with high standards, enabling sustainable livelihoods for all, especially women and marginalized groups.

#### **Key Features of the Policy:**

◆ Tackles core challenges like low public motivation, poor infrastructure, lack of quality training, and inadequate industry alignment.

◆ Promotes women's inclusion in skill development and entrepreneurship by offering targeted programs and access to support systems like mentorship, incubation, and credit.

◆ Encourages both formal and informal education systems to support entrepreneurship.

◆ Emphasizes social entrepreneurship and facilitates easier business processes for new ventures.

#### **Major Government Schemes under the Policy:**

◆ Pradhan Mantri Kaushal Vikas Yojana (PMKVY): Provides short-term skill training to the youth.

◆ Common Norms Framework: Introduced to unify the standards across various ministry-run skill development programs.

◆ Sector Skill Councils (SSCs): Industry-led bodies developing National Occupational Standards (NOS).

◆ SANKALP Project: A World Bank-supported initiative to enhance the institutional framework of skill development at national and state levels.

◆ STRIVE Scheme: Another World Bank project aimed at improving Industrial Training Institutes (ITIs) and apprenticeship systems.

### **Challenges Faced by Women Entrepreneurs in India**

Women entrepreneurs in India encounter numerous challenges that hinder their progress and success. One of the primary factors influencing the establishment and sustainability of women-led businesses is the level of societal support. A major hurdle is the lack of encouragement from close family members, especially spouses. Often, women do not receive the necessary motivation or cooperation from their families, which affects their entrepreneurial journey.

Other notable challenges include restrictions on mobility, dual responsibilities at home and work, limited managerial experience, and risk aversion. Although women do possess management capabilities, they often struggle with promotional skills that are essential for business growth. Additionally, they face issues related to the scarcity of raw materials and limited access to financial resources. Technological limitations are another concern, as many women entrepreneurs lack access to modern tools and technical expertise. Infrastructure-related issues such as poor transportation, unreliable power supply, and inadequate telecommunication services further compound the

problem. However, marketing is cited as one of the most pressing issues due to limited outreach, lack of promotional strategies, and inadequate market access.

**1. Financial Constraints:-**Finance is the backbone of any business, irrespective of its size. Women entrepreneurs often struggle to access capital due to the absence of property in their name, which is commonly required as collateral. As a result, securing loans from banks or financial institutions becomes difficult. Furthermore, managing working capital, securing credit facilities, and gaining the confidence of financial institutions are challenges predominantly influenced by gender biases in financial systems.

**2. Lack of Self-Confidence and Optimism:-**Many women suffer from a lack of self-confidence, determination, and a positive outlook-traits that are vital for entrepreneurial success. Fear of failure and limited willingness to take risks often hold them back from pursuing or expanding their ventures. These psychological barriers can significantly impact their ability to lead and grow a business.

**3. Government Assistance Challenges:-**Despite the existence of numerous government schemes aimed at promoting women entrepreneurship, accessing them is often a complicated process. Bureaucratic red tape, dishonest intermediaries, and time-consuming procedures deter women from availing these benefits. These systemic inefficiencies undermine the effectiveness of government support.

**4. Marketing Difficulties:-**Marketing remains one of the toughest areas for women entrepreneurs. Many lack the knowledge and resources required to market their products effectively. Dependence on local markets, fierce competition from larger firms, exploitation by middlemen, and poor recovery of dues are common issues. Additionally, limited exposure to export markets and inadequate promotional avenues restrict their reach.

**5. Low Educational Attainment:-**A significant proportion of Indian women remain illiterate or receive substandard education. This lack of quality education results in a poor understanding of business, technology, and market dynamics. Moreover, low educational levels often correlate with diminished confidence and motivation, making it harder for women to initiate or sustain enterprises.

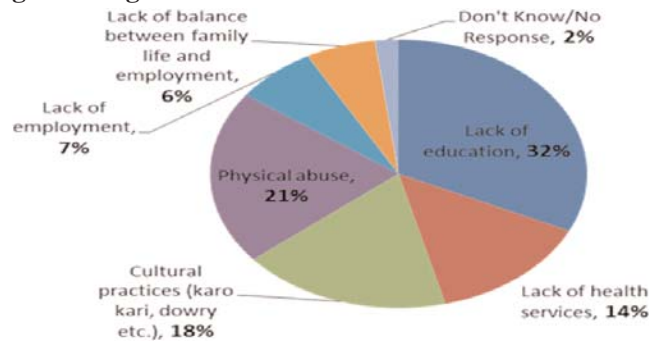
**6. Patriarchal Social Structure:-**Indian society continues to be predominantly male-dominated, where traditional gender roles and perceptions persist. Although the Indian Constitution advocates gender equality, in practice, women are often perceived as less capable than men. These societal attitudes restrict women's entry and progress in the entrepreneurial sector.

**7. Work-Life Balance:-**Women are often expected to manage both domestic responsibilities and professional

duties. The societal expectation that women prioritize family over career adds considerable pressure and acts as a deterrent to full participation in entrepreneurial activities. Achieving a balance between personal and professional life remains a constant challenge.

**8. Safety Concerns:-**Personal safety in both workplaces and public spaces is a serious issue in many parts of India. Cities like Delhi, despite being startup hubs, have high rates of sexual violence, which limits women's freedom of movement and work hours. Concerns over safety not only discourage women from working late or traveling alone but also reinforce restrictive social norms, thereby hindering their economic participation.

**Some main problem of women entrepreneurship are given diagram:-**



**Conclusion & Suggestion :-**Harnessing the full potential of women entrepreneurs can promote innovation, economic growth, and job creation. This brief has described the current situation in India and identified causes that explain the low female entrepreneurship rate in the country. Overcoming these barriers is a matter of grit and passion of individual women themselves, as well as tackling structural factors in the external environment, which they alone have limited control over. Accordingly, this article arrives at five sets of recommendations, which will help women seize entrepreneurial opportunities and increase their chances of success.

First, women entrepreneurs in India need better access to finance and networks. Organizations such as NITI Aayog's Women Entrepreneurship Platform, Catalyst for Women Entrepreneurship, and the accelerator for women in tech initiated by Zone Startups India, provide dedicated support for women entrepreneurs. They connect them with relevant people in their industry and foster networking among the women entrepreneurs themselves, so they can learn from each other's experiences. Moreover, they assist in fundraising by teaching how to pitch and connecting them with potential investors. Studies indicate that policies aimed at reducing collateral constraints can improve equal access to finance. In the interviews, the requirement for a seed fund for women entrepreneurs was articulated.

second, the low women entrepreneurship rates

are part of a broader gender gap in economic participation and opportunity. Thus, it is crucial to provide equal access to education and encourage women to use their acquired skills by joining the workforce. Policies aimed at including more women in senior and leadership positions are needed and will help women gain experience and knowledge, which in turn will enable them to start their own businesses.

Third, women entrepreneurs in India need better access to finance and networks. Organizations such as NITI Aayog's Women Entrepreneurship Platform, Catalyst for Women Entrepreneurship, and the accelerator for women in tech initiated by Zone Startups India, provide dedicated support for women entrepreneurs. They connect them with relevant people in their industry and foster networking among the women entrepreneurs themselves, so they can learn from each other's experiences. Moreover, they assist in fundraising by teaching how to pitch and connecting them with potential investors. Studies indicate that policies aimed at reducing collateral constraints can improve equal access to finance. In the interviews, the requirement for a seed fund for women entrepreneurs was articulated.

Four, women entrepreneurs need more support from their families and social circles to pursue their entrepreneurial ambitions. Household and care duties should not be understood as women's sole responsibility. Furthermore, granting maternity benefits to women entrepreneurs, improving childcare, and cultivating social acceptance would help them combine their entrepreneurial pursuits and family responsibilities.

Fifth, more inclusive, non-discriminatory, and safe work environments are needed to help retain qualified women, especially in the tech sector. Measures to improve the safety of public spaces are necessary, so women can commute between their homes and offices without the mental load of having to always worry about their security.

#### Reference:-

1. Puri&Mshra(2020) Indian economy Himalaya publication New delhi.
2. banerji&dufelo(2021) good economics for hard time ISBN-97893-9124232-9
3. Your article library.com
4. Entrepreneur.com
5. Hemant kumar (2014) women entrepreneurship and innovations in India: AN EXPLORATORY STUDY, International journal of innovation ISSN2348-9975
6. Suba&Snekha(2016) ) women entrepreneurship in India, ISSN 2320-4168
7. Ramesh(2018)-problem and prospective of

8. women entrepreneurship ISSN 2348-1269. A Rajalakshmi(2014) entrepreneurial role of women in the development of Indian economy International global journal for research analysis.
9. SikhaMahajan (2013) women entrepreneur in India. global journal of management and business studies. ISSN2248-9878 volume 3.
10. Shokeen (2016) development of women entrepreneurship A review of literature, International journal of latest engineering research and application ISSN 2551-7137 volume 01.
11. Kumar Vijay(2013) women entrepreneurs in India immersing issues and challenges International journal of development research ISSN-2030-9926 volume 3
12. Malyadri(2014) role of women entrepreneurship in economics development of India, India journal of research paripex- volume 3 I

# Exploring the Meditative Processes in Indian Abstract Art

Amit Kalla

Dr. Kajal Thakuriya

1. Research Scholar, Dept. of Design, Vivekananda Global University, Jaipur, Rajasthan

2. Professor, Dept. of Design, Vivekananda Global University, Jaipur, Rajasthan

**Abstract:**-This research discovers the linking between meditation and artistic creation in Indian abstract art. It observes how meditation influences the creative process, aesthetics, and spirituality of Indian abstract artists. The study pools art history, religious studies, psychology and cultural investigation to understand how meditation shapes artistic visualization and manifestation. The paper initiates by see the sights the importance of contemplation in Indian spiritual traditions, focusing on its role in attaining inner peace, self-awareness, and realization. Through case studies of artists such as Vasudeo S. Gaitonde, S.H. Raza, Ram Kumar, Jeram Patel, PrabhakarKolte, SohanQadri, G.R. Santosh, Sridhar Ayer the paper investigates into how meditation impacts their artistic selections, symbolism, and techniques. It best part how meditation updates the content, form, and emotional seriousness of their work.

The research also observes how meditation boosts cognitive flexibility, emotional control, and intuitive insight, leading to greater creativity and innovation. It further discusses the cultural and philosophical meaning of meditation in preserving traditional techniques and spiritual insights within Indian abstract art.

**Keywords:** Meditative processes, Contemplation, Visualization, Consciousness, Psychological dimensions, Intuitive understanding, Artistic expression

**Introduction:**-Indian abstract art has long served as a holder for spiritual inquiry, introspection, and metaphysical exploration. Central to this creative journey is the process of meditation, which enables artists to tap into deeper states of consciousness. This research investigates the meditative processes underlying the work of Indian abstract artists and how these influence form, content, and expression.

Meditation has played a pivotal role in Indian spiritual traditions, offering a path toward inner peace, self-realization, and transcendent awareness. Abstract artists in India often draw from these spiritual sources-are it through mindfulness, breath work, visualization, or

symbolic imagery-to create works that transcend the material and reflect a higher reality. This paper examines how artists internalize these meditative experiences, translating them into visual form through unique techniques and symbolic vocabularies.

Using a multidisciplinary approach rooted in art history, psychology, and Indian philosophy, this study examines case studies of prominent modern and contemporary Indian artists. It aims to demonstrate how meditation becomes a vital source of inspiration and creative clarity, contributing not only to artistic innovation but also to spiritual communication through abstract visual language.

**Review of Literature:**-In the dominion of Indian abstract art, there subsists a insightful interaction between meditation and the creative process. This research gets on an exploration of how meditative practices deeply mark the artistic activities of Indian abstract artists. From side to side a multidisciplinary lens picture from art history, religious studies, psychology, and cultural analysis, this study delves into the transformative power of meditation in shaping the artistic vision and expression of these artists. Firstly, it contextualizes the significance of contemplation within Indian spiritual traditions, highlighting its role as a conduit to inner peace, self-awareness, and realization. Subsequently, it explores into how Indian abstract artists flawlessly assimilate such elements into their creative practice, utilizing techniques like mindfulness, visualization, and breathe work to access deeper levels of consciousness and inspiration.

Through case studies of eminent figures such as Vasudeo S. Gaitonde, S.H. Raza, G R Santosh ,SohanQadri and others, this paper reveals the meditative processes fundamental their artistic practice, analysing how meditation influences their aesthetic choices, symbolism, and artistic techniques, thereby shaping the content, form, and emotional character of their artworks. Furthermore, it explores the psychological scopes of the creative process, examining how meditation improves

cognitive flexibility, emotional directive, and intuitive insight, leading to greater artistic innovation and expression. Additionally, this research considers the broader cultural and philosophical suggestions of meditation in Indian abstract art, expounding how meditative practices underwrite to the continuation and resurgence of traditional artistic techniques and spiritual insights.

### Meditation and Creative Process in Indian Abstract Art: An Overview:-

| Theme                              | Description   | Key Artists   | Disciplines Involved                             |
|------------------------------------|---|---|--|
| Contextual Background              | Meditation as central in Indian spiritual traditions, supporting inner peace, self-awareness, and realization.        | —   | Religious Studies, Art History                   |
| Integration into Artistic Practice | Use of mindfulness, visualization, breathwork in creative processes.  | Vasudeo S. Gaitonde, S.H. Raza, G. R. Santosh, SohanQadri | Psychology, Visual Arts                          |
| Aesthetic and Symbolic Impact      | Influence of meditation on form, symbolism, and emotive content of artworks.  | Same as above   | Semiotics, Aesthetics                            |
| Psychological Dimensions           | Cognitive flexibility, emotional regulation, intuitive insight enhanced through meditation.                           | —   | Cognitive Psychology, Neuroscience of Creativity |
| Cultural & Philosophical Insights  | Meditative practices link to revival and continuity of traditional Indian artistic and spiritual knowledge.           | —   | Cultural Studies, Philosophy                     |
| Conclusion                         | Meditation as a transformative force in Indian abstract art, offering a lens to explore creativity and transcendence. | All listed artists  | Interdisciplinary                                |

### Research Objectives:-

1. To investigate the ways in which meditation techniques impact Indian abstract art's creative process.
2. To examine how spiritual symbols like the cosmic serpent, lotus, and mandala are used to represent contemplative states.
3. To look into how meditation affects artistic expression psychologically, including improved intuition, emotional control, and creative clarity.
4. To place these customs in the larger philosophical, religious, and cultural traditions of India.
5. To demonstrate how important Indian painters' abstract works use meditation as a technique and a theme.

**Methodology:-**An interdisciplinary approach was used in this study to investigate the meditative aspects of Indian abstract art. Foundational works on Indian aesthetics, meditation, and the relationship between spirituality and creativity in modern art were all covered in the extensive literature survey (Coomaraswamy, 1956; Kapur, 2000; Mitter, 2001). Using primary (interviews, autobiographies) and secondary (critical reviews, exhibition catalogues) sources, important Indian abstract artists-Vasudeo S. Gaitonde, S.H. Raza, Ram Kumar, Tyeb Mehta, Akbar Padamsee, Jeram Patel, PrabhakarKolve, SohanQadri, and G. R. Santosh-were chosen for in-depth case studies. To generate qualitative insights, semi-structured

interviews were conducted with living artists, art historians, and meditation practitioners. Simultaneously, a standardized questionnaire was distributed to modern Indian abstract painters in order to collect quantitative information about their meditation practices and perceived impact on creativity. Examining how meditative moods affect shape, color, rhythm, and composition, aesthetic analysis of artworks concentrated on visual metaphors like the mandala, lotus, and cosmic symbols. Self-reported tests and artist testimonials were used to analyze psychological aspects, with a focus on how meditation might improve emotional control, cognitive flexibility, and intuitive depth. Clear differences in topic development and creative process were revealed by comparing artists who meditated and those who did not. Furthermore, the intellectual and cultural foundations of meditation were examined in light of Indian traditions like Tantra, Vedanta, and modernism with a Zen influence.

### Symbolic Motifs and Meditative Metaphors in Indian Abstract Art

Indian abstract artists frequently embed symbols derived from sacred texts and contemplative traditions. These visual motifs often function as metaphors for inner states:

- **The Lotus:** A symbol of spiritual development, transcendence, and purity, the lotus is deeply embedded in muck but blooms upward. It manifests as an indication of inner awareness in the works of Raza and Santosh.
- **Mandala:** A symbol of self-realization and cosmic order, the mandala is used in both Buddhist and Tantric traditions. Its symmetrical, concentric patterns lead the observer inward and exhibit meditative balance.
- **AnantaShesha's Cosmic Serpent:** Artists such as Santosh and Qadri use serpentine forms, a symbol of boundless consciousness and cyclical energy, to invoke the flow of spiritual energy and primordial life force.
- **Color Symbolism:** Red energy, yellow illumination, and blue transcendence are all associated with different colors, each of which has psychological and spiritual meanings. This strategy is best illustrated by Raza's multicolored symbology and Qadri's dyed documents. Silence and Space: Mainly in Gaitonde's work, silence is a visual field-absence as presence. Through tonal minimalism and measured brushwork, his canvases become meditative spaces.

These symbols, which represent the artists' meditation journeys, are more than just ornamental; they are visual portals into inner peace. These symbols work together to provide a visual language of spiritual reflection. These motifs are not just ornamental; they encourage contemplative meditation and provide abstract art as a location for meditation.

By examining this aspect, the study broadens our

comprehension of creative uniqueness and creativity. It looks at how meditation adopts intuition, creativity, and spontaneous expression, all of which support the emergence of new aesthetic forms and styles in Indian art. Spirituality, consciousness, and existential issues are frequently explored in Indian abstract art. It offers deep insights into how contemplative practices support spiritual inquiry and reflection, providing a profound and significant platform for artistic expression.

#### **The Psychological Aspects of Creativity and Meditation**

From a psychological standpoint, meditation facilitates a number of cognitive-emotional processes that are necessary for artistic expression. Artists who meditate frequently report:

**Cognitive Flexibility:** Meditation facilitates the dissolution of ingrained thought patterns, opening the door for the emergence of fresh associations and artistic forms.

**Emotional Control:** Subliminal feelings are frequently expressed through abstract art. Through color, structure, and rhythm, artists can analyze and alter emotional experiences while they meditate.

**Intuitive Insight:** Meditation promotes impromptu insight and imaginative images by expanding awareness beyond logical cognition. This is especially clear in Qadri's ecstatic textures and Ram Kumar's surreal abstraction.

**Cultural and Philosophical Context:-**Many abstract painters draw inspiration from India's spiritual traditions, including Buddhism, Sufism, Tantra, and Vedanta. In this context, meditation is a way of being rather than merely a method. Indian aesthetics traditionally associates the creating process with a yogic discipline (sadhana), the artist with the divine (sadhaka), and the artwork with a spiritual sacrifice (prasad).

These traditions were reworked by contemporary Indian abstract artists. The primal dot is reclaimed by Raza'sbindu as a compositional core and spiritual seed. Visual stillness is preferred above ego and story in Gaitonde's Zen-inspired simplicity. Through ceremonial practice, Qadri invokes sacred energy and Tantric repetition. These artists create art that is simultaneously universal, cultural, and personal by fusing modern abstraction with ancient wisdom.

#### **Implication of the Study**

This study broadens our understanding of how meditation influences artistic creation in Indian abstraction. It demonstrates:

The role of abstract art as a space for psychological healing and quiet reflection;

Innovative aesthetics motivated by spiritual introspection.

How art serves as both a process and a product of spiritual development;

A special intersection of practice and creativity

through symbolic abstraction.

This study also adds to larger discussions on the relationship between art, psychology, and cultural identity by concentrating on meditation practices. It illustrates how Indian abstract art invites spectators to interact with the invisible and the limitless by providing a nonverbal language of transcendence..

**Conclusion:-**This study reveals the close connection between meditation and Indian abstract art through an interdisciplinary review. It describes how artists engage in reflective activities to reach more profound states of consciousness, which then influence their stylistic decisions and symbolic language. Indian abstraction emerges as a sacred act—an offering of consciousness through color, rhythm, and silence—far from being intellectually or virtuously conventional.

In this situation, meditation turns into a philosophy of creation rather than merely a technique. Indian abstract painters continue to translate inner stillness into visual meaning, whether it is through the tantric force of Qadri's forms, the chromatic resonance of Raza'sbindu, or the calm of Gaitonde's paintings. This study supports the idea that Indian abstract art reflects the never-ending quest for inspiration, oneness, and self. It is not just a visual experience, but also a meditative one.

#### **References:-**

1. Anand, M. R. (1976). Indian art and meditation: The spiritual in art. *India International Centre Quarterly*, 3(1), 61-69.
2. Doshi, S. (1977). Art and spirituality: The abstract art of India. *Art Journal*, 36(4), 370-375.
3. Gaitonde, V. S. (1987). Interview with Vasudeo S. Gaitonde. In J. Poduval (Ed.), *Conversations with Indian Artists* (pp. 75-92). New Delhi: Lalit Kala Akademi.
4. Kapur, G. (1997). When was modernism in Indian art? *Art Journal*, 56(3), 76-83.
5. Mehta, T. (2005). In conversation with Tyeb Mehta. In R. Hoskote (Ed.), *Tyeb Mehta: Ideas, Images, Exchanges* (pp. 35-48). Mumbai: Marg Publications.
6. Raza, S. H. (2002). Thoughts on art and spirituality. *Marg*, 53(4), 72-75.
7. Sarma, I. B. (2017). Lotus: The symbol of spiritual unfoldment in Indian art. *Journal of South Asian Studies*, 40(2), 187-200.
8. Sen, G. (2019). Meditative practices and abstract art in India. *Indian Art Review*, 22(3), 45-52.
9. Sharma, R. (2011). Mandalas in Indian art: Symbolism and spiritual significance. *International Journal of Hindu Studies*, 15(2), 189-202.



---

स्वत्वाधिकारी, प्रकाशक, मुद्रक डॉ. मोहन बैरागी द्वारा अक्षरवार्ता पब्लिकेशंस से मुद्रित व 43, क्षीर सागर, द्रविड मार्ग, उज्जैन, मप्र, -456006 से प्रकाशित।  
सभी विवादों का न्याय क्षेत्र उज्जैन रहेगा। संपादक- डॉ. मोहन बैरागी, संपर्क :-8989547427, Email- [aksharwartajournal@gmail.com](mailto:aksharwartajournal@gmail.com)

---